नामधारी इतिहास

प्रथम भाग

(१७८५ से १८७२ ई० तक)

लेखक :

सरदार नाहरसिंह एम० ए०

उत्तर प्रदेश सरकार ने इस पुस्तक को उच्च-कोटि का
इतिहास-साहित्य मानकर लेखक को मार्च १९५९ में
४०० रु० के पुरस्कार से सम्मानित किया है ।

प्रथमवार २,५००

मूल्य ६ रु० २५ न० पै०

प्रचार करते हुए जाने का विचार था। रागीजत्थे, प्रचारक तथा घोड़े आप के साथ थे। उस समय के मण्डलेश्वर साधू गांवों में अपनी मंडलियां ले जाया करते थे। साधु माथे टिकवाते, भेंट चढ़वाते, भण्डारे खाते, दूध की हंडियां जबरदस्ती चूल्हों से उतार कर पीते और चलते बनते। न कोई भलाई का उपदेश देते और न कोई कुरीति हटाते। अपना पेट भरते, डकार मारते, अच्छा खाते तथा मन्दा बोलते। गुरु रामसिंह जी दोनों समय दीवान लगा कर ढोलक छैनों से शब्द पढ़ते-पढ़ाते। पुरुषों और स्त्रियों को अमृत पान कराकर कुरीतियों से हटाते, सच्चे साधारण मनुष्य बनने का उपदेश देते। भण्डारा वांटते। गुरु ग्रन्थसाहब का पाठ करवा कर भोग डलवाते।

जब आप भ्रमण करते करते गांव मुठडडा पहुंचे तब आप को इस विषय में एक पत्र मिला, कि गुरु बालकसिंह जी मार्गशीर्ष पूर्णिमा सम्वत् १९१९ तदनुसार ६ दिसम्बर १८६२ शनिवार को परलोकवासी हो गये हैं। इस पर आप वापिस अपने केन्द्र भैणी आ गये।

भैणी में आ कर आप ने एक पत्र गुरु बालकसिंह जी के भाई मन्नासिंह तथा हजरो की संगति को लिखा और लगभग ५० साथियों के साथ हजरो की ओर चल पड़े। लुधियाना, फिल्लोर, मुठड्डा, होते हुये ढिलवां व्यास का घाट पार करके आप अमृतसर पहुंचे। अमृतसर से कक्कड़ों के घाट होते हुये वजीराबाद के रास्ते बाबा जमीयतसिंह के पास गिल गांव में जा विराजे। मार्ग में भी आप दीवान लगाते तथा अमृत पान कराते गये। गांव गिल्ल में आपने पुरुष-स्त्रियों को अमृत छकाया। जब आप नाव में बैठे हुये पार होने के लिये चनाब नदी के बीच पहुंचे, तो आपको हजरो की संगति तथा गुरु बालकसिंह जी का भाई मन्नासिंह दूसरी ओर से नाव में गुरु बालकसिंह जी की अस्थियां लाते हुये मिले। नदी में ही आपस में मिलाप हुआ। अतः आप भी वापिस आ गये। गिल गांव आकर बाबा जमीयतसिंह जी के पास ठहरे तथा यहां से ही अस्थियां विदा कीं। अमृतसर तक कुछ सिक्ख भी साथ किये। आपने एक पत्र अमृतसर के खत्री भय्या के नाम लिख कर दिया तथा उसको अस्थियों के साथ हरिद्वार जाने के लिये आज्ञा दी।

इसी समय आप ने स्यालकोट अथवा शेखूपुरे के जिलों में अमृत तथा बाणी के प्रचार के लिये गांव गांव दीवान लगाने आरम्भ कर दिये। पसरूर, उगोचक, वजीराबाद, मानावाले के प्रसिद्ध दीवान इसी भ्रमण में किये गये। सहस्रों ही स्त्रियां और पुरुष अमृत छक कर सिक्ख बने, तथा

उन्होंने हुक्का, अफीम, भंग, पोस्त, मदिरा, मांस, चोरी, बदकारी, ठगी आदि बुराइयां छोड़ दीं। स्यालकोट की पुलिस ने जिले के डिप्टी कमिश्नर को गुरुजी के इस देशाटन के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दी। इसके आधार पर डिप्टी कमिश्नर स्यालकोट ने अपनी ५ अप्रैल १८६३ की रिपोर्ट में लिखा है:—
"जिला लुधियाना का एक वृद्ध अवस्था का सिक्ख अपने दो सौ साथियों के साथ जिले का दौरा कर रहा है। रात को वह बन्दूकों की बजाय लाठियां पकड़ कर कवायद भी करते हैं। उसके पांच हजार अनुयायी हैं। वह किसी शासक का शासन नहीं मानते। वह अपने जत्थे सहित जिस में स्त्रियां भी शामिल हैं, अमृतसर बैसाखी के मेले को जा रहा है।"

इस समय तक गुरु रामसिंह जी के प्रचार करने तथा देशाटन के समाचार पंजाब के लाट साहब तक यथावत् पहुंचने आरम्भ हो चुके थे। आपके अमृतसर पहुंचने के समाचार पर लाट साहब ने मेजर मैकेन्ड्यू डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलिस लाहौर को अमृतसर पहुंच कर डिप्टी कमिश्नर अमृतसर के साथ मिल कर गुरुजी तथा उनके साथियों के वास्तविक उद्देश्यों के सम्बन्ध में ठीक ठीक पड़ताल करने का आदेश जारी कर दिया। साथ ही साथ जिलों के डिप्टी कमिश्नरों तथा पुलिस अफसरों को भी गुप्त आज्ञायें जारी हो चुकी थीं, कि वह गुरु रामसिंह जी तथा नामधारी सिंहों पर कड़ी निगरानी रखें और उन के विषय में हर प्रकार के समाचार एकत्र करके सरकार को भेजें।

११ अप्रैल १८६३ को बैसाखी के मेले पर आप साथियों समेत अमृतसर पहुंचे। डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलिस मेजर मेकेन्डर्यू, डिप्टी कमिश्नर तथा सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस अमृतसर आपको मिले और उन्होंने गुरुजी के साथ उनके देशाटनों तथा संगियों के विषय में बातचीत की। इस मुलाकात की रिपोर्ट डिप्टी कमिश्नर अमृतसर ने इस प्रकार दी : "उसके सब साथी हृष्ट-पुष्ट हैं। हर एक के पास काफी मजबूत लाठी है, मेला समाप्त होने पर वह अपने गांव जाने का विचार रखते हैं। सरकार के विरुद्ध उन्होंने कोई बात नहीं की, वह शान्ति की ही बातें करते रहे। इसलिये भरे मेले में उनके कार्य में हस्तक्षेप करना अथवा बाधा डालना उचित नहीं समझा गया, क्योंकि उन्होंने अफसरों की यह सम्मति भी मान ली कि वह अपने साथियों को अपने से पृथक् कर दें। इसलिये उनको अपनी इच्छानुसार विचरने की आज्ञा दी गई।" रिपोर्ट के शब्दों से ऐसा प्रतीत होता है कि लाट साहब की ओर से गुरु रामसिंह जी पर प्रतिबंध

लगाने की आज्ञायें जारी हो चुकी थीं । सरकार तथा सरकार के कर्मचारी ऐसे समय तथा कारणों की प्रतीक्षा में ही बैठे थे जिनसे नामधारियों तथा नामधारियों के गुरू पर प्रतिबन्ध लगा कर इस समाज सुधार तथा राजनैतिक जाग्रति के नये उठ रहे आन्दोलन को उभरते ही रोक दिया जावे।

नई विवाह रीति अथवा आनन्दकार्य की मर्यादा

गुरु रामसिंह जी की उपस्थिति में, बैसाखी के मेले पर नामधारियों ने एकत्र हो कर व्यवहार सुधार तथा सामाजिक जीवन में से कुरीतियां दूर करने के सुझाव सोचे। एक प्रस्ताव यह भी था, कि जाति-पाति के बन्धन तोड़कर विवाह किये जावें। ब्राह्मणों वाली विवाह की रीति को तोड़ कर और परिवार-घातक रीतियों को हटा कर कम से कम व्यय में सीधे सादे ढंग से विवाह कार्य करने का निर्णय हुआ । जोगासिंह धूरकोट वाले ने अपनी पुत्री का आनन्द कार्य इस प्रकार करने की विनय की। खोटा गांव के समुंद्रसिंह तथा और साथी भी आये हुए थे। उन्होंने कहा, धूरकोट छोटा सा गांव है तथा जोगासिंह का गांव में बहुत प्रभाव भी नहीं । यदि कहीं बिरादरी का पारस्परिक झगड़ा हो गया अथवा ब्राह्मणों और दूसरे सभी लोगों ने इस नई रीति का विरोध किया तो बेल मंढे नहीं चढ़ेगी तथा लोग हंसी करेंगे। हमारा गांव खोटे बड़ा गांव है । हमारी बिरादरी भी बड़ी है। आस पास के गांव में अन्य भी बहुत से कुटुम्ब नामधारी हैं तथा मान-प्रतिष्ठा वाले पुरुष हैं । कोई झगड़ा दंगा हो तो हम संभाल लेंगे। यदि ब्राह्मण आदि बिगड़ेंगे तो हम जाट-विद्या का प्रयोग करके लठ्ठों से ठोक कर लेंगे । यदि विवाह की नई रीति हमारे गांव खोटे से आरम्भ की जावे तो हम उत्तरदायित्व संभाल लेंगे । निर्णय खोटे के पक्ष में हुआ तथा प्रदेशों के नामधारियों को सूचनायें भेज दी गईं ।

बैसाखी के मेले के पश्चात् गुरु रामसिंह जी अपने जत्थे के साथ जालंधर तथा कपूरथला के ज़िलों के गांवों में प्रचार करते रहे । लगभग १ मास के पश्चात् आप हरीकेपत्तन (घाट) से होकर फिरोजपुर के ज़िले में पहुंच गये । इस क्षेत्र में पन्द्रह दिन प्रचार करके आप जेठ सुदी १० सम्वत् १९२० वि० अनुसार २ जून १८६३ खोटे गांव पहुंचे । यहां पहिले से ही दीवान नियुक्त होने के कारण तथा विवाह की नई रीति के आरम्भ को देखने के लिये नामधारी सिंह तथा आसपास के लोग अच्छी संख्या में पहुंचे हुये थे ।

बाबा समुन्द्रसिंह की लड़की तथा पौत्री के आनन्दकार्यों के अतिरिक्त

४ और विवाह जात-पाति के बन्धन तोड़ कर हुये । एक बढ़ई की लड़की का विवाह अरोड़ा कुल के लड़के से हुआ। दर्शक इस नई मर्यादा को देख कर चकित हो गये। बाबा समुन्द्रसिंह के ब्राह्मण पुरोहित तथा गांव के अन्य ब्राह्मणों ने धमकी दी थी कि यदि विवाह पुरानी रीति के अतिरिक्त किसी अन्य रीति से किया, तो वह चिता बना कर जल मरेंगे तथा इस का पाप गुरु रामसिंह जी तथा जाट यजमानों के सिर होगा । समझाने पर जब ब्राह्मणों ने आग्रह न त्यागा तो सिक्ख भी गर्म हो गये । ब्राह्मणों ने मरने वाली धमकी को सफल न होता हुआ देख कर अफसरों के पास इनकी शिकायत करने का आश्रय लिया । ब्राह्मण तथा गांव के समस्त लागी नाई, धोबी, मिश्र, मैरासी इस नई रीति से बहुत दुखी थे, क्योंकि इस ढंग के विवाह की रीति प्रचलित होने से उनकी वृति तथा समस्त आय मारी जाती थी । इसलिये उन्होंने गांव के चौकीदार के कान भर कर बाघापुराना के थाना में यह रिपोर्ट कराई कि "दो तीन दिन से रामसिंह तथा उसके ५०० अनुयायी खोटे गांव में एकत्रित हुये हैं तथा उन की चाल-ढाल पृथक् ही प्रतीत होती है । वह सरकार के विरुद्ध बातें करते हैं। वह कहते हैं कि शीघ्र ही सारा देश उन का हो जावेगा । उनके पीछे सवा लाख आदमी होंगे । लगान के रूप में वह किसानों से केवल उपज का पांचवां हिस्सा ही लिया करेंगे।"

इस रिपोर्ट के पहुंचते ही थाने से एक हवालदार को मौके पर भेजा गया । ६ जून को फिरोजपुर का छोटा सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस गुरु रामसिंह जी के सम्बन्ध में जांच करने के लिये खोटा गांव में पहुंचा । खोटा तथा साथ के गांवों के नम्बरदारों ने यह बयान दिये कि आप सरकार के विरुद्ध बातें करते हैं ।

७ जून को फिरोजपुर के सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस की यह रिपोर्ट लाट साहब तक पहुंचाई गई । इस पर लाट साहब ने पंजाब सरकार के मंत्री को आदेश दिया कि फिरोजपुर का डिप्टी कमिश्नर मिस्टर थाम्स तत्काल खोटा गांव पहुंचे और नम्बरदारों के बयान ले । बयानों की नकल सरकार के सचिव को भेज दे और यदि आवश्यकता समझे तो गुरु रामसिंहजी को तत्काल गिरफ़्तार कर ले । इस आज्ञानुसार फिरोजपुर का डिप्टी कमिश्नर तत्काल खोटा गांव में पहुंचा और उसने गुरु रामसिंह जी को मिल कर यह हुक्म बताये एवं जारी किये कि:—

(१) जिला फिरोजपुर में नामधारी सिंह कोई मेला अथवा दीवान नहीं लगा सकते । (२) गुरु रामसिंह तथा उसके शिष्यों को

उसके घर भैणी जिला लुधियाना में पहुंचा दिया जावे। ६ अथवा १० जून को आप बाधापुराना के थान में पहुंच गये। उक्त आज्ञा के फलस्वरूप आप को १४ जून तक भैणी पहुंचा दिया गया। भैणी केन्द्र पर पुलिस ने कड़ी निगरानी करनी आरम्भ कर दी। डिप्टी कमिश्नर को गिरफ्तारी के लिये एवं मिसल का पेट भरने के वास्ते उस समय पूरी सामग्री न मिल सकी, इसलिये उनकी गिरफ्तारी न हो सकी।

निगरानी तथा दूतकार्य

लाट साहब ने मेजर मेकन्डर्यू को हुक्म दिया कि वह पंजाब के पृथक् पृथक् जिलों में से अपने अति विश्वास पात्र तथा आज्ञाकारी मनुष्य नामधारियों के विषय में समाचार एकत्रित करने के लिये भेजे।

जिला अटक के सहायक सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस मि० ग्रीन को लाहौर बुलाया गया तथा आदेश दिया गया कि हजरो वाले केन्द्र पर कड़ी निगरानी करे तथा हजरो और भैंणी में हर प्रकार के सम्बन्ध के साधनों, पत्रों अथवा मौखिक सन्देश ले जाने तथा लाने वाले हरकारों पर सख्त निगरानी रखी जावे।

लाट साहब के संकेत होने की देर थी, कि स्थान स्थान पर अंग्रेज शासक तथा उनके देशी गुर्गे, नामधारियों के विरुद्ध कार्यवाहियों की फायलों के पेट भरने लगे। प्रत्येक अंग्रेज अफसर के मन में सन् '५७ में हुए विद्रोह का चित्र फिर पनप उठा। उन के दिलों में यह बात बैठ गई कि गुरु रामसिंहजी धर्म प्रचार की आड़ में ग्रामीण जनता को अंग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह के लिये तैयार कर रहा है तथा नामधारी अंग्रेजों के कट्टर बैरी हैं। मेजर मेकेन्डर्यू डिप्टी इन्स्पैक्टर जनरल पुलिस पंजाब ने अपनी ६ जून की रिपोर्ट में लिखा, "गुरु रामसिंह जी के प्रचार ने पंजाब में बड़ी गड़बड़ी पैदा कर दी है। बेशक उस के विषय में देशी अफसरों की सम्मतियां पृथक् पृथक् हैं। उदाहरण के रूप में बटाले के देशी अफसर श्री काअयमअली का मत है कि गुरु रामसिंह खतरनाक पुरुष है, उसको गिरफ्तार करना चाहिये। परन्तु उसी तहसील का छोटा तहसीलदार भाई लहनासिंह जो दरबार साहब अमृतसर के बड़े ग्रन्थी भाई प्रद्युमनसिंह का भाई होने के कारण पुजारियों के वर्ग में से है, उसको कुमार्गी समझता है तथा राजनैतिक तौर पर खतरनाक नहीं समझता। उसको यह भी शंका है, कि नाम के प्रेम में मुग्ध होकर कई बार वह भविष्य में होने वाली बातें कह देता है।"

घबराये हुये अंग्रेज शासक अब इस टोह में लगे रहते कि कहीं से भी कूकों (नामधारियों) के विषय में और बातों का पता चले । देशी भेदियों ने नकद इनाम तथा प्रशंसा पाने के प्रलोभन में कूकों के प्रार्थना के समय खड़ा होने तथा सतश्रीअकाल के जयकारे लगाने को फौजी ढंग से कवायद करने का रूप दे कर विदेशी अधिकारियों के कान भरे ।

मुठड्डा के नम्बरदार तथा वजीरा चौकीदार से इसके विषय में पड़-ताल की गई । वहालसिंह पुलिस सारजेन्ट से भी पूछा गया । उस ने बताया कि मैं नामधारी हूं, छुट्टियों के समय मैं गुरु रामसिंह जी के दर्शन के लिये जाता हूं तथा जहां भी वह हों, कई कई दिन शब्द बाणी सुनता हूं । दीवानों में प्रार्थना खड़े हो कर की जाती है । रात को शब्द कीर्तन के पश्चात् भी प्रार्थना खड़े होकर होती है । दीवान में सब सज्जन सावधान हो कर खड़े होते हैं । सम्भव है दूती वैरी इस को ही फौजी ढंग की कवायद कहते हों ।

अन्त में सरकार को नामधारियों के हर काम में से सरकार के विरोध की बू आने लगी । दूतों तथा जासूसों ने इस शंका को वास्तविक बना कर दिखाने के प्रयत्न करने आरम्भ किये । कई अंग्रेज शासक जिन का सीधा सम्बन्ध पुलिस अथवा शासन की नीति से नहीं था; अपने स्थान पर ही उड़ती हुई बातें तथा समाचार एकत्रित करने लगे । कई अपने ही व्यक्तिगत दूत रखकर समाचार लेने के यत्नों में व्यस्त हो गये । ऐसे हाकिमों में से जालंधर छावनी का मजिस्ट्रेट कप्तान मिल्लर भी था । उसके अपने निजी दूत का नाम गेंदासिंह था जो न ही सरकारी पुलिस में नौकर था तथा न ही किसी और विभाग में । यह केवल साहब माई-बाप को सलाम करने वाला अनुत्तरदायी टोडी था । ११ जून को कप्तान मिल्लर ने मि० अॅलफन्सटन डिप्टी कमि-श्नर तथा मि० रेमजे जिला के सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस को बताया कि मैंने गेंदासिह को गुरु रामसिंह के गांव में भेजा था । गुरु वहां से अनुपस्थित था । उन का चेला साहबसिंह वहीं था, गेंदासिंह ने नामधारी बनने की इच्छा प्रकट की । रात को गेंदासिंह उनकी टोली में जा मिला, जिस में ५० के लगभग पुरुष थे । ढोलक बजते ही हर एक ने अपनी अपनी लाठी साहबसिंह से ले ली । साहबसिंह ने सारी टोली को दो घण्टे कवायद कराई वह अकाल-अकाल के जयकारे लगाते रहे, इसके पश्चात् गेंदासिह ने गुरु रामसिंह को मिलने की इच्छा प्रगट की । इस पर उसके चेले ने उस स्थान का पता दिया, जहां कि वह गुरु रामसिंह जी को मिल सकता था।

गेंदासिंह को दो पत्र भी दिए गए। यह पत्र गेंदासिंह ने गुरु को नहीं पहुंचाये। उस ने बहाना बनाया है कि दोनों पत्र खो गये हैं। और जालंधर वापिस आकर गेंडासिंह ने यह दोनों पत्र मुझे दे दिये। इन पत्रों के खुले अनुवाद इस प्रकार हैं :—

पत्र नम्बर (१) फतेह (अथवा सतश्रीअकाल) हस्ताक्षर गुरु गोविन्द सिंह।

"मैं गुरु गोविन्दसिंह एक बढ़ई की दूकान म पैदा हूंगा तथा रामसिंह के नाम से बुलाया जाऊंगा। मेरा घर सतलज तथा यमुना नदियों के मध्य स्थान में होगा। मैं अपना धर्म बताऊंगा। में फिरंगियों को पराजित करूंगा, मुकुट अपने सिर पर रक्खूंगा तथा संख बजाऊंगा। सम्वत् १९२१ में रागी मेरी प्रशंसा करेंगे। मैं बढ़ई सिंहासन पर बैठूंगा। जब सवा लाख सिक्ख मेरे साथ होंगे तब मैं फिरंगियों के सिर काटूंगा, मैं युद्ध में कभी पराजित नहीं हूंगा तथा अकाल शब्द का नाद करूंगा। ईसाई लोग जब सवा लाख सिक्खों के जयकारे सुनेंगे तो अपनी स्त्रियां छोड़ कर देश में से भाग जावेंगे। यमुना तट पर बड़ा भारी युद्ध होगा। रक्त रावी नदी के नीर की भांति बहेगा। किसी फिरंगी को जीवित नहीं रहने दिया जावेगा। सम्वत् १९२२ अथवा १८६५ में देश में राज विद्रोह होगा। खालसा राज्य करेगा तथा राजा प्रजा सुख-शान्ति से रहेंगे कोई किसी पर अत्याचार नहीं करेगा।

दिन प्रतिदिन रामसिंह का राज्ब बढ़ेगा। परमात्मा ने ऐसे ही लिखा है। भाइयो, यह झूठ नहीं है। सन् १८६५ में सारे देश पर रामसिंह का

नोट लेखक:—यह लिखतें असल रूप में कहीं नहीं मिलतीं। मिल्लर के खुले अनुवाद से ही पुन: अपनी भाषा में अनुवाद किया है। कई लेखकों ने इन पत्रों को असली और सही समझ कर भीषण गल्तियां की हैं। पहला पत्र मन-घड़न्त एवं नकली भविष्य-वाणी है, जिसको गुरु गोविन्दसिंह जी के हस्ताक्षर से अथवा गुरु गोविन्दसिंहजी की परिस्थिति में लिखी हुई सिद्ध करने का प्रयास किया है। बाबा साहबसिंहजी का ऐसी भविष्यवाणी अपने नाम दीक्षा गुरु की ओर लिख कर भेजना मूर्खता तथा पागलपन की सीमा से भी परे है। साथ ही द्वितीय पत्र में अपने गुरु को यह लिखना कि पहली लिखित सब सिक्खों को सुना देना सिद्ध करता है कि यह दोनों पत्र मनघड़न्त और जाअली हैं।

राज्य होगा। मेरे सिक्ख वाहगुरु की पूजा करेंगे, वाहगुरु के हुक्म से यह हो कर रहेगा।"

पत्र नम्बर (२) "फतह (सतश्रीअकाल) साथ का बन्द किया हुआ पत्र सब सिक्खों को सुना देना, यह यहां के सिक्खों की विनय है। आप जहां भी हों उस स्थान, गाँव का पता भेजो, हम आप के दर्शन करना चाहते हैं। आप बहुत समय से बाहर गये हुये हैं। इस ओर शीघ्र आओ, हम इतने समय आप से पृथक् नहीं रह सकते।"

गेंदासिंह दूत ने जो बतंगड़ बनाया है, उस का ज्ञान पत्रों के शब्दों को एक दो बार पढ़ने ही से हो जाता है। यह दोनों पत्र नामधारियों के विषय में दूतों तथा जासूसों के अन्य पेचों के मन-घड़न्त तथा झूठी वर्णमाला के पहले अक्षर हैं। बाबा साहबसिंह बहुत चतुर तथा होशियार पुरुष थे। वह अमृत छकाने के समय ही से गुरु रामसिंह जी के साथ भैंणी साहब में रहते थे। उस को प्रत्येक वास्तविक तथा विश्वासपात्र नामधारी के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी थी। हजरो को जाते समय गुरु रामसिंहजी बाबा साहिबसिंह को भैंणी केन्द्र का काम-काज सुपुर्द कर गये थे। उस को गुरु रामसिंह जी के भ्रमण तथा खोटे के मेले का पूरा-पूरा ज्ञान था।

साहिबसिंह जैसा आदमी किसी प्रकार के पत्र एक पर-पुरुष तथा अपरिचित पुरुष को देकर जो कि नामधारी भी नहीं था गुरु रामसिंह जी के पास कभी नहीं भेज सकता था। नामधारियों के अपने हरकारे थे तथा सन्देश पहुंचाने के लिये अपने ही संकेत और गुप्त अक्षर भी थे। समस्त पंजाब में नामधारियों की डाक का गांव-गांव में अपना प्रबंध था।

डिप्टी कमिश्नर तथा सुपरिंटेन्डेन्ट पुलिस को मिस्टर मिल्लर के दूत गेंदासिंह के बयानों तथा उपर्युक्त दोनों पत्रों के लेखों पर विश्वास न हुआ। इन दोनों जिम्मेवार हाकिमों ने इस पर तत्काल कोई कार्यवाही करनी आवश्यक न समझी, जैसी कि खोटे गांव के मेले की रिपोर्ट पर लाट साहब तथा अफसरों की ओर से की गई थी। पांच अथवा छः दिन पश्चात् इन बयानों के सच-झूठ का निर्णय करने के लिये अच्छे वर्ग तथा उच्च सम्मान वाले चार पुरुषों को, जिनके नाम रिपोर्ट में जान-बूझ कर नहीं दिये गये भैंणी की ओर भेजा गया। लुधियाना पहुंच कर इन के भेष बदल कर नकली नामधारी बनने की परीक्षा करने पर यह पता चला कि इन चार में से केवल एक ही भेष बदल कर नकली नामधारी बन सकता है। साथ ही साथ गेंदासिंह भी नकली नामधारी बनने में सफल हुआ। यह दोनों

दूत दो दिन भैणी में रहे। इन्होंने वापिस आ कर बताया कि गुरु रामसिंहजी ने उनके साथ प्रेम-प्यार वाला बर्ताव किया तथा भैणी पहुंचने पर पहली रात ही उन्हें अपने पास बुला लिया। उन्हें एक माला दी। वाहगुरु नाम का भजन दिया तथा इस का जाप करने की आज्ञा दी।*

इन दूतों के वक्तव्य सरकारी फायलों के पेट भरने के लिये अच्छी सामग्री थी। इन बयानों में वह मानते हैं कि नामधारियों का बर्ताव शान्तिमय था। भैणी में उन्होंने कोई कवायद होती नहीं देखी, तथा न ही कोई शस्त्र थे। भाई साहबसिंह उन दिनों लुधियाना गया हुआ था।

पंजाब के कार्यवाहक इन्सपैक्टर जनरल पुलिस मेजर जी० डब्ल्यू० यंगहसबेन्ड ने स्यालकोट, लाहौर, अमृतसर, जालंधर के डिप्टी कमिश्नरों, लाहौर तथा जालंधर डिवीजनों के कमिश्नरों और फिरोजपुर, जालंधर, अमृतसर, अटक के पुलिस सुपरिंटेंडेन्टों मेजर मेकेन्डर्यू डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल तथा मैजिस्ट्रेट मिल्लर के दूत गेंदासिंह की ओर से दी गई समस्त खबरों के आधार पर एक रिपोर्ट लिख कर २८ जून १८६३ को लाट साहब को प्रस्तुत कर दी। इस रिपोर्ट में गुप्तचरों के समाचार के अनुसार यह भी लिखा था कि आ रही दीवाली को नामधारियों का एक बड़ा सम्मेलन गुरु रामसिंह जी ने अमृतसर में बुलाया है तथा यह शंका है कि इस मेले पर नामधारी कोई उपद्रव खड़ा करेंगे। अमृतसर डिवीजन के कमिश्नर मेजर फैरिनगटन ने भी ३१ मई को लिखा था कि यहां यह बात उड़ी हुई है कि इस बार अमृतसर में दीवाली के अवसर या उसके आसपास ही गुरु रामसिंह जी तथा उनके सिक्खों की ओर से किसी न किसी प्रकार का प्रदर्शन अवश्य ही किया जायेगा। कप्तान मेन्जीस, सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस जिला अमृतसर को ७ जून के दिन एक ऐसे पत्र का पता चला जो गुरु रामसिंह जी की ओर से नामधारी संगतों के नाम लिखा हुआ कहा जाता था। यह पत्र महन्त नारायणसिंह ने कप्तान साहब को दिखाया। मिति २२ को इस पत्र का अंग्रेजी अनुवाद करके लाहौर पुलिस के केन्द्रीय दफ्तर में भेज दिया गया। अंग्रेजी अनुवाद का अनुवाद इस प्रकार है:—

"वाहगुरु जी का खालसा, श्री वाहगुरु जी की फतह सब सिक्ख, सारे ग्रामीण भाई तथा बच्चे जो दीवान दरबार में आवें मेरी आज्ञा की ओर ध्यान दें, नहीं तो तुम्हारे मुंह दोनों संसारों में काले होंगे। जो भी व्यभिचार करे चोरी, ठगी, कुकर्म करे, उसको दरबार (दीवान) में न आने दो।

*नोट :—भजन लेने के लिये सकेश स्नान करके प्रातःकाल भजन देने वाले के पास उपस्थित होना पड़ता है। रात को भजन नहीं दिया जाता।

यदि वह जबरदस्ती आने का यत्न करे तो गुरु से उस को रोकने के लिये प्रार्थना करो। इकट्ठे हो कर ग्रन्थसाहब के शब्द गाओ तथा वाहगुरु शब्द का जाप करो। किसी से भय न करो। किसी को बुरा न कहो। तुम्हारा गुरु अपने सिक्खों की रक्षा करता है तथा उन की सहायता करेगा। जिन्होंने पाप करके मुझे दुखी किया है, मैं तुम्हें उन के नाम भेजता हूं। तुम उन्हें अपने घर पर न घुसने दो।"

"जो भी अपनी पुत्री का मूल्य लेकर विवाह करता है, वह बदमाश है। जो पुरुष अपनी पुत्रियों को मार देते हैं तथा बदले में रिश्ते करते हैं वह लफंगे हैं। अपने बच्चे-बच्चियों को ग्रन्थसाहब के आदेशों की शिक्षा दो और दीवाली पर अवश्य आओ।"

पंजाब सरकार का मत

इन्सपैक्टर जनरल पुलिस की इस रिपोर्ट पर सरकार के कार्यवाहक मन्त्री मि० टी. डी. फोर्साइथ ने इस प्रकार का नोट दिया--

(१) गुरु रामसिंह की कार्यवाहियों के विषय में समाचार पहुंचने के समय १ अप्रैल से ले कर अब तक पिछले तीन महीने में गुरु रामसिंह जी की शिक्षाओं तथा कार्यवाहियों पर पूरी पूरी निगरानी रक्खी गई है।

(२) बहुत से अफसरों की रिपोर्टों से जो अभी तक आ चुकी हैं, यह प्रतीत होता है कि गुरु रामसिंह सिक्ख धर्म में आ गई कुरीतियों को दूर करके सुधार करना चाहता है। उसके कई नियम तथा आज्ञाएं सुखदायी ही नहीं, परन्तु लाभदायक भी हैं।

(३) उसके चेलों की संख्या काफी है, परन्तु वह अधिकतर छोटी जातियों में से ही हैं। उन में से कुछ पुलिस में भी हैं।

(४) गुरु रामसिंह जी कहते हैं कि वह इस धरती का राज्य नहीं चाहते, इससे यही परिणाम निकाला गया है कि उन की शिक्षायें राज विद्रोही नहीं हैं।

(५) उनके धार्मिक सुधार की लहर के पर्दे में कई पुरुष लाभ उठा कर इस प्रकार के सच्चे-झूठे पत्र फिरा रहे हैं, जो जन-शांति के लिये भयानक हैं। गुरु रामसिंह के कई चेलों के सम्बन्ध में यह रिपोर्टें हैं कि वे राज्य विद्रोह की बातें करते हैं। जनता में यह प्रभाव भी बैठा हुआ है कि गुरु रामसिंह आने वाले समय में ऐसा राजा बनना चाहता है, जो अंग्रेजों को पंजाब से बाहर निकालेगा।

विषय सूची

(६) गुरु रामसिंह की इच्छा कुछ भी हो, परन्तु उसके दीवानों, मेलों तथा उसकी शिक्षाओं से लोगों के मन डावां-डोल हो गये हैं। पुरातन रीति वाले सिक्खों तथा नामधारी सिक्खों में एक दंगा भी हो चुका है।

(७) यह बात जन साधारण में बहुत फैली हुई है कि दीवाली के मेले के समय पर अमृतसर में नामधारियों का भारी सम्मेलन होगा। इस लिये दंगा फिसाद की भी संभावना है।

(८) ऊपर दी गई स्थितियों से यह प्रतीत होता है कि गुरु रामसिंहजी के दीवान अथवा सम्मेलन अवैध सम्मेलनों की सीमा में आते हैं। तथा इस प्रकार वह धारा १४१ भारतीय दंड संहिता के आधार पर अपराध अथवा जुर्म बन जाते हैं। सम्भव है कि कोई दीवान अथवा सम्मेलन कानून के विरुद्ध न हो, परन्तु बाद में सम्मेलन में गैर कानूनी कार्यवाहियां होने से सम्मेलन करने वाले अथवा उस में भाग लेने वाले इस धारा के अपराधी होंगे।

(९) निःसंदेह सरकार धर्म से सम्बन्धित समस्याओं में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करना चाहती। न ही ऐसे सम्मेलनों तथा दीवानों में हस्तक्षेप करना चाहती है, जो धार्मिक सुधार के सम्बन्ध में किये जावें परन्तु यदि ऐसे दीवान शान्ति भंग करने वाले हों, तो ऐसे सम्मेलन कानून के विरुद्ध समझे जायेंगे तथा कानून के अनुसार ऐसे सम्मेलन के नेता दंड के भागी होंगे।

(१०) वर्तमान परिस्थितियों में, गुरु रामसिंह तथा उसके अनुयायियों को ऐसे दीवानों से निकलने वाले परिणामों के विषय में सावधान कर दिया जावे। उन से इस बात की जमानत ली जावे कि वे अमृतसर में कोई कानून विरुद्ध सम्मेलन नहीं बलायेंगे। उन को यह बात विस्तार पूर्वक बता दी जावे कि उनके सम्मेलन चाहे कितने ही शान्तिमय हों, परन्तु यह निश्चय हो चुका है कि इन के सम्बन्ध में फैलाई हुई सच्ची अथवा झूठी बातें लोगों के हृदयों में उथल-पुथल मचा देती हैं।

(११) इस चेतावनी के पश्चात् यदि फिर भी दीवान लगें, अथवा शान्ति भंग हो, तो स के लिये गुरू रामसिंह तथा उस के अनुयायियों को उत्तरदायी ठहराया जावे तथा उन पर शान्ति भंग करने तथा सरकार के विरुद्ध राज्य विद्रोह करने के अपराध में अभियोग चलाये जावें।

(१२) गुरु रामसिंह को उसके गांव में ही नज़रबन्द कर दिया जावे वह गांव से बाहर न जावे। पुलिस विभाग इस सम्बन्ध में सब बातों का ध्यान रक्खे तथा उसकी कार्यवाहियों की सीधी सूचना दे।

इस रिपोर्ट के पश्चात् गुरु रामसिंह जी को भैणी में नज़रबन्द कर दिया गया । पंजाब में नामधारियों के दीवान, मेले तथा सम्मेलन सरकारी आज्ञानुसार बन्द कर दिये गये। नामधारी सिक्ख सरकार की दृष्टि में हिन्दुस्तान में विदेशी अंग्रेजी शासन के विरोधी तथा दुश्मन समझे जाने लगे ।

नजरबन्दी तथा प्रतिबन्ध के चार वर्ष

२ जुलाई १८६३ से जुलाई १८६७ तक

लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर जार्ज इलियट ने अपने ६ जौलाई १८६३ के पत्र में जो पंजाब गवर्नमेन्ट के सेक्रेटरी (सचिव) के नाम भेजा गया था, लिखा कि २ जुलाई को गुरु रामसिंह जी को लुधियाना बुला कर सारे आदेश तथा हिदायतें सुना दी गई हैं।

इसके साथ ही पंजाब के समस्त जिलों में आदेश जारी किये गये कि नामधारियों पर पुलिस कड़ी निगरानी रक्खे तथा किसी स्थान पर भी नामधारी कोई दीवान अथवा सम्मेलन न करें। इस पर नामधारियों तथा सरकारी कर्मचारियों में आंख मिचौनी का खेल शुरू हुआ।

इन चार वर्षों की घटनायें अभी तक पूर्णरूप में इतिहास के प्रकाश में नहीं आईं। पहिले ढ़ाई सालों में सरकार इस आन्दोलन को दबाने के लिये क्या कुछ करती रही, इस का अधिक विवरण अभी तक लेखक को नहीं मिला।

१९ जनवरी सन् १८६७ को दी गई सरकारी रिपोर्ट में जून १८६६ का ही समस्त वर्णन है अथवा १८६३ की रिपोर्ट में आये विषयों की बातें ही विस्तार रूप में दी गई हैं। सितम्बर १८६६ में दूसरी बार पुन: भाई गेंदासिंह ने अपने दूतत्व की योग्यता के जौहर दिखाये। कूकों के सम्बन्ध में दी गई उसकी सूचनाओं की नकल रिपोर्ट के अंग्रेजी अनुवाद के अनुसार इस प्रकार है:—

"भैणी पहुंच कर बहुत से कूकों (नामधारियों) से मिला, जिनमें से लुधियाना का एक भगतसिंह भी था। यह गुरु रामसिंह जी का हरकारा

है। भगतसिंह के कथनानुसार गुरु रामसिंह जी को नित्य रात को गुरु गोविन्दसिंह जी के दर्शन होते हैं। प्रत्येक कूके को हुक्म है कि एक अच्छी सफाजंग अथवा परशु (कुल्हाड़ी) अपने पास रक्खे। वह राज्य के विरुद्ध गड़बड़ करने को तैयार बैठे हैं तथा आदेश के लिये गुरु रामसिंह जी से प्रार्थनायें भी की हैं। उन्होंने कहा है, कि वह दीवाली से पहिले कोई आज्ञा देंगे। गुरु रामसिंह जी के बाद सूबा साहबसिंह उनके स्थान पर होगा। लुधियाना के समस्त रामदासियेंसिंहों ने जो गुरु गोविन्दसिंह जी के सिक्खों के नक्कारची थे गुरु रामसिंह जी से नक्कारचीयों की सेवा मांगी है। गुरु रामसिंह जी का जामाता महताबसिंह जालंधर के सूबा काहनसिंह के पास बहुत आता जाता है। सरदार मंगलसिंह रायपुरिया जागीरदार ने दंगे के समय सहायता का विश्वास दिलाया है। अंग्रेजों की नौकरी में समस्त सिक्खों के शस्त्रों को गुरू रामसिंह अपने शस्त्र समझता है। यदि साहिबसिंह नेता बन गया तो अवश्य ही दंगा हो जावेगा। कूके बड़े जोश में हैं तथा गुरु रामसिंह जी के आदेश को मानने के लिये अपना बलिदान तक देने को तैयार हैं।"

इस बार मि० मिल्लर को समाचार नहीं दिया गया। सम्भवत: गेंदासिंह को मनघड़न्त समाचार गढ़ने अथवा झूठी लिखतें बनाने की शंका में अफसरों ने कोठी अथवा दफ्तर में घुसने की मनाही कर दी हो। इस बार भाई गेंडासिंह स्वतन्त्र ही विचरते प्रतीत होते हैं। तथा समाचार सीधा ही लाहौर पहुंचाया गया दिखाई पड़ता है।

रिपोर्ट में मि० क्रिसटी, अमृतसर के सहायक सुपरिन्टेंडेन्ट पुलिस को एक ऐसे लेख के मिलने का वर्णन है, जिसमें नामधारियों के लिये रहित-मर्यादा भी बताई गई है। इस का अंग्रेजी अनुवाद भी रिपोर्ट में दर्ज है।

नामधारियों ने १८५७ से ही अंग्रेजी सरकार के चलाये हुए सम्बन्ध तथा यातायात के साधनों का बहिष्कार कर रक्खा था। इस रिपोर्ट में नामधारियों के अपनी डाक प्रबन्ध का वर्णन अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर मेजर परकिन्स के अनुसार इस प्रकार है। "कूकों अथवा संत-खालसों का पारस्परिक डाक का निजी प्रबन्ध है जो अत्यन्त प्रशंसनीय युक्ति से संगठित किया गया है। गुप्त आदेश तथा हिदायतें इस तरह चारों ओर भेजी जाती हैं जिस तरह पुराने समय में स्काटलैंड के लोग किया करते थे। पहिले कूके के संदेश अथवा पत्र गांव में लाते ही उस गांव वाला कूका तत्काल सब काम काज छोड़ कर दूसरे नियुक्त हरकारे की ओर अथवा स्वयं ही दूसरी मंजिल की ओर दौड़ पड़ता है।

सारे काम वहीं छोड़ देता है। यदि रोटी खाता हो तो दूसरा निवाला मुंह में नहीं डालता। न ही पहले हरकारे से कोई प्रश्न करता है। आवश्यक बातें कागज पर लिख कर पत्र के रूप में नहीं बल्कि कण्ठस्थ रूप में भेजी जाती हैं। इन पत्र-पत्रिकाओं को लाने तथा ले जाने के लिये कूके बड़ी सड़कों अथवा साधारण मार्गों का प्रयोग नहीं करते, बल्कि अपने ही नियुक्त किये रास्तों द्वारा जाते हैं:—

इस रिपोर्ट में निम्नलिखित रोचक बातें नामधारियों के विषय में दी हुई हैं:

(१) पुजारी, ब्राह्मण तथा अन्य धार्मिक नेता जो सनातनी हिन्दुओं के चढ़ावे की रकमों पर पलते तथा जीते हैं, स्वभाविक रीति से इस नये सम्प्रदाय के बैरी हैं; क्योंकि इस सम्प्रदाय के नियमों, उद्देश्यों तथा मन्तव्यों के चालित होने पर उनको जन्म, विवाह तथा मृत्यु की रीतियों के समय वृत्ति तथा दान-दक्षिणा आदि की एक कौड़ी भी नहीं मिलती।

(२) कूके मढ़ी, मसान, मन्दिर, देवता, मज़ार तथा कब्र आदि को बिल्कुल नहीं मानते तथा उन का मत है कि मूर्ति-पूजा, पाषाण पूजा, ईंट पूजा, अस्थि पूजा, तथा राख पूजा के यह अड्डे उड़ा देने चाहियें।

(३) कूकों के खड़े हो कर अरदास करने को तथा अंत में सतश्री-अकाल बुलाने को कई अनजान पुरुषों ने कवायद करना बताया है जो उचित नहीं। कूकों के ड्रिल करने की अन्य रिपोर्टें नहीं आईं।

(४) कूकों की पहिचान सिर पर सीधी पगड़ी, गले में ऊन की माला तथा मिलते बिछुड़ते समय के नियत वाक्यों से होती है।

(५) यह सम्प्रदाय योरुप के फ्रीमेसनों जैसी संस्था है। इस में प्रविष्ट होते समय का शब्द यों है—

"पहिला मरण कबूल कर, जीवन दी छड्ड आस।
होय सभन की रेणका, तो आवो हमारे पास।"

(६) मेजर परकेन्स ने १८६६ में लिखा कि नामधारी सम्प्रदाय में प्रविष्ट होने के लिये झूठ, चोरी, मदिरा पीना, परस्त्री-गमन आदि सब कुकर्मों का त्याग करना पड़ता है तथा इनके करने की कड़ी मनाही है। जो कूके इनकी अवहेलना करें उनको कूकों की पंचायत से दंड मिलता है।

(७) कूकों को नित्यप्रति प्रातःकाल ३ बजे उठ कर सकेश स्नान करने की आज्ञा है। इसके पश्चात् वह भजन, बन्दगी करते तथा वाणियां पढ़ते हैं।

आनन्दपुर का होला

२० मार्च १८६७

पंजाब के लाट साहब ने सन् १८६६ के अन्तिम दिनों में गुरु रामसिंह जी के भैणी से बाहर जाने के प्रतिबन्धों को कुछ ढीला करके इस नये आन्दोलन का अनुमान लगाना चाहा। गुरुजी ने जनवरी १८६७ माघी के मेले पर मुक्तसर जाने की आज्ञा मांगी जो न दी गई। इस पर केन्द्र भैणी में होले (होली) का मेला बिना आज्ञा करने का निर्णय किया गया। जब सरकार को यह पता चला, तो आप के पास डिप्टी कमिश्नर द्वारा यह बात पहुंचाई गई कि आप को केवल गुरुद्वारों की यात्रा की आज्ञा दी जा सकती है।

भैणी में मेला लगाने के विषय में लुधियाना के सुपरिटेंडेन्ट पुलिस की सम्मति थी कि मेला लगने दिया जावे, तथा इस में कोई हस्तक्षेप न किया जावे। इन्सपैक्टर जनरल पुलिस पंजाब का विचार था कि भैणी में मेला लगाने की आज्ञा इस शर्त पर दी जावे कि मेले में पुरुषों का अधिक जमघट न हो। जब आप को यह शर्त बताई गई तो आप ने शर्तें मान कर मेला लगाने से इन्कार कर दिया तथा अंग्रेज अफसर को स्पष्ट रूप से कह दिया कि हम मेला अवश्य लगावेंगे। इस पर आप को होले के समय गुरुद्वारा आनन्दपुर साहब जाने की स्वीकृति लाटसाहब ने दे दी। साथ ही सरकार की ओर से डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल की ड्यूटी लगा दी गई कि वह स्वयं आनन्दपुर पहुंच कर सारे प्रबन्ध की निगरानी रक्खे।

नामधारी सिंहों को स्थान स्थान पर समाचार पहुंचा दिये गये कि होले के समय पर गुरु रामसिंह जी आनन्दपुर साहिब जावेंगे तथा नामधारियों का मेला और दीवान भी लगेगा। इस प्रिय सूचना को सुनते ही नामधारी सिंह भैणी की ओर आने लगे और सहस्रों की संख्या में एकत्र हो गए। सारे सूबे, सहायक सूबे, जत्थेदार, धर्मसालिये तथा नामी नाम-

धारिये आ एकत्रित हुए। भैणी से संघ के रूप में जत्था चला, गुरु रामसिंह जी चीनी घोड़ी पर सवार थे। सूबे तथा प्रसिद्ध नामधारी घोड़ों पर थे। आगे आगे नक्कारची नक्कारों पर दोहरी चोटें लगाते जा रहे थे। उनके पीछे पैदल निशानची (झंडा बरदार) स्वतंत्र ध्वजा लहराते चले जा रहे थे। संगतें ढोलक-छेनों की गुंजार में शब्द पढ़ती चली जाती थीं।

सतगुरु विलास में इस यात्रा का हाल इस प्रकार दिया है:--

"पहिले दिन चले तो खुमानों जा कर रहे, वहां सरदारों ने प्रेमभाव से संगतों की सेवा की। सरदार प्रतापसिंह जी ने ३००) रु० थाली में भेंट रखे। गुरूजी ने रुमाल उतारा तथा पूछा कि इतने रुपये किस लिये लाये थे? कहने लगा जी अभी तो और लाने का संकल्प था। इससे अधिक की तो मैं मदिरा पी जाता था; परन्तु अब आप की कृपा हुई है। दीवान लगा तथा कितने ही सिंहों ने अमृत पान किया। आगे भोजो माजरा में जाकर पड़ाव किया। रोपड़ में से हो कर कीर्तिपुर गये, बाबा गुरुदत्ता जी के गुरुद्वारे की सीढ़ियों के पास बाग में डेरा किया। संगतों से सारी वाटिका भर गई।"

डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल मि. मैकेन्डर्यू ने १० मार्च को लाहौर से चल कर १२ तारीख को जालंधर के कमिश्नर से गुरु रामसिंह जी के आनन्दपुर आने के सम्बन्ध में विचार किया। होशियारपुर के जिले के सुपरिटेंडेन्ट पुलिस के नाम हुक्म भेजा कि पुलिस के जितने भी सिपाही ड्यूटी से लिये जा सकते हैं, तैयार रखे जावें। १३ मार्च को होशियारपुर पहुंच कर डिप्टी कमिश्नर मि. परकेन्ज के साथ आनन्दपुर साहब के प्रबन्ध के विषय में परामर्श किया। एक इन्सपैक्टर, एक डिप्टी इन्सपैक्टर तथा ५० सिपाही होशियारपुर पुलिस के, एक डिप्टी इन्सपैक्टर तथा १८ सिपाही जालंधर पुलिस के साथ लेकर १७ मार्च को मि० मेकेन्डर्यू आनन्दपुर पहुंच गये। सिपाही सारे के सारे चुने हुये, पुरानी नौकरी वाले, मुसलमान तथा राजपूत डोगरे थे। सरदार बहादुर अतरसिंह शेरदिल रेजिमेन्ट का पुराना कमांडेन्ट, फिरोजपुर पुलिस का इन्सपैक्टर कुतुबशाह, अमृतसर पुलिस का इन्सपैक्टर फतेहदीनखां तथा होशियारपुर का सहायक सुपरिंटेंडेन्ट मि० हेचल भी साथ थे। पुलिस का डेरा तख्त केशगढ़ (आनन्दपुर साहिब) से थोड़ी दूर लोगों की आंखों से ओझल स्थान पर रखा गया, १८ तारीख को डिप्टी कमिश्नर मि० परकेन्ज भी पहुंच गया। इस प्रकार सरकार ने अपनी ओर से किसी किस्म के होने वाले बलवे, फिसाद अथवा दंगे को रोकने का पूरा प्रबन्ध कर लिया।

अफसरों ने अब इस सम्बन्ध में सब दलों के विचारों की जांच-पड़ताल आरम्भ की। मि० मेकेन्डर्यू तथा डिप्टी कमिश्नर ने केसगढ़ साहिब के बड़े महन्त हरीसिंह को अपने पास बुला कर बातचीत की। उसने सुनते ही नामधारियों को तख्त साहिब के दर्शन के लिये आने का कड़ा विरोध किया। यह भी विनय की कि सरकार हस्तक्षेप करके नामधारियों को तख्त साहब आने से रोके। इस पर अफसरों ने महन्त को समझाया कि जब मन्दिर की यात्रा के लिये हर सम्प्रदाय के हिन्दू तथा सिक्ख आ सकते हैं, तो सरकार कूकों के अन्दर आकर दर्शन करने के विषय में कोई ऐसा कारण नहीं देखती, जिस पर उन्हें रोकने के लिये हस्तक्षेप किया जावे। काफी बातचीत के पश्चात् महन्त साहब का विरोध केवल एक विषय पर आ टिका। महन्त साहब ने कहा कि कूके तख्त साहिब के अन्दर नग्न सिर न आवें तथा ऐसी कोई बात न करें जो यहां की धर्ममर्यादा के विपरीत हो।

संध्या समय सरदार अतरसिंह को महन्त साहब के पास यह संदेश देकर भेजा गया कि जो कुछ वह कहते हैं, उसी तरह ही होगा। यदि फिर भी कोई गड़बड़ हुई तो उत्तरदायित्व महन्त साहब तथा मन्दिर वालों का होगा। महन्त इस बात पर जोर देता था कि दो सौ के लगभग जो निहंग अपनी छावनी में आकर ठहरे हुये हैं, वे अवश्य ही कूकों के आने पर बाधा उपस्थित करेंगे तथा दंगा होगा। इस पर अफसरों ने वहां के महन्त को बुलाया। डिप्टी कमिश्नर ने उसको यह बात भली भांति बता दी कि निहंग बिल्कुल चुप रहें, नहीं तो उसके लिये तथा निहंगों के लिये अच्छी बात नहीं होगी। तदनन्तर सारे प्रबन्ध संतोषजनक हो गये।

सरकारी रिपोर्टों के अनुसार १६ मार्च को प्रातः गुरु रामसिंह जी सब से आगे घोड़ी पर सवार, पीछे २२ सूबे घोड़ों पर चढ़े हुये तथा २५०० के लगभग पैदल नामधारी संगत तख्त केशगढ़ के दर्शन हेतु आनन्दपुर पहुंचे। जब संघ सरकारी कैम्प के पास से गुजरने लगा तो मि० मैकेन्डर्यू ने बाबा शुद्धसिंह सूबे के साथ, जो घोड़े पर चढ़ा हुआ समस्त समारोह का नेतृत्व कर रहा था, बातचीत की। इस पर गुरु रामसिंह जी तथा समस्त सूबे घोड़ों से उतर आये।

डिप्टी कमिश्नर मि० परकेन्ज गुरूजी को अपने कैम्प पर ले गया तथा वहां काफी देर तक उनकी आपस में बातचीत होती रही। आपने मि. परकेन्ज को कहा कि उन का विचार गुरु गोविन्दसिंह जी के मन्दिर पर जाकर दर्शन तथा दण्डवत करने का है। यदि सरकार को इस पर आपत्ति है

तो वे सारे के सारे जिस प्रकार आये हैं, उसी प्रकार बिना दर्शन किये तथा बिना माथा टेके ही वापिस चले जायेंगे। अफसरों ने आप को कहा कि मन्दिर के महन्त तथा पुजारी कूकों के सिर नग्न रखने तथा जयकार करने के विरोधी हैं। इस पर आपने उत्तर दिया कि मन्दिर की सीमा में नाम-धारी शब्द पढ़ कर जयकार अवश्य करेंगे। यह उत्तर सुन कर अंग्रेज अफसरों ने कहा कि आप को तथा आपके साथियों को दर्शन करने अथवा माथा टेकने की आज्ञा नहीं दी जाती, क्योंकि पुजारियों तथा महन्तों के कथनानुसार यह मर्यादा के विपरीत है तथा इस पर झगड़ा होने का डर है। झगड़े के लिये सरकार आप तथा आपके साथियों को ही उत्तरदायी ठहरायेगी।

अंग्रेज अफसरों के इस तर्क को आपने बिल्कुल पसन्द न किया तथा कड़ा रोष प्रगट किया। बहुत बातचीत होने पर गुरु रामसिंह जी यह बात माने कि यदि सरकार को तथा पुजारी महन्तों को अधिक डर बैठा हुआ है, तो वह दर्शन करते समय केवल १०० साथी साथ ले आवेंगे तथा रोष के रूप में शब्द भी नहीं पढ़ेंगे। दर्शन करने के लिये दूसरे दिन का प्रातः समय निश्चित हुआ। इस पर आप तथा आप के साथ की नामधारी संगतें बिना दर्शन किये तथा माथा टेके; अपनों की अनुदारता, तथा विदेशी सरकार के कष्टों, को सहन करते हुए वापिस आ गये।

१६ की संध्या को ही जालंधर का कमिश्नर मि० फोर्साईथ भी आनन्दपुर सरकारी कैम्प में पहुंच गया। सोढी, महन्त, पुजारी तथा बड़े बड़े पुरुष कमिश्नर के द्वारे पर जा उपस्थित हुये। कमिश्नर के आने का यह फल हुआ कि जो दल दंगा करना चाहता था, वह सावधान हो गया।

संध्या को मि० मेकेन्डर्यू सरदार अतरसिंह को साथ लेकर गुरु रामसिंह जी के डेरे में गया। उसकी रिपोर्ट में लिखा है कि:—"आप नामधारियों के मध्य में एक सामयाने के नीचे विराजमान थे। इस समय लगभग ५ हजार पुरुष उपस्थित थे और अनेकों सिक्ख चारों दिशाओं से इधर को आ रहे थे। कैम्प में कोई शोर नहीं था, सब चुपचाप थे। बहुत से पुरुष तथा स्त्रियां बढ़िया बढ़िया वस्त्र पहने हुये थे। मैंने किसी पुरुष को भी जोश, मस्ती अथवा विश्रुति की अवस्था में नहीं देखा। गुरु रामसिंह जी भी मुझे अति प्रेम तथा आदर से मिले।" ऐसा करने से आपने शताब्दियों से चली आ रही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का प्रमाण दिया कि यदि दुश्मन भी चल कर घर आ जावे तो "उसको घर में आया माता का जाया" समझ कर स्वागतम् कहो तथा उस का सत्कार करो।

२० मार्च सुबह ७ बजे के लगभग गुरु रामसिंह जी तथा सौ के लगभग नामधारी सिंह तख्त केशगढ़ साहब के दर्शनों के लिये पहुंच गये। सरकारी अफसरों ने कमिश्नर की सम्मति से मन्दिर के पास पुलिस की गार्द लगानी उचित न समझी, परन्तु लोगों की दृष्टि से परे कैम्पों में गार्द ड्यूटी के लिये तैयार रक्खी। फजलहुसैन, कुतुबशाह, तथा सरदार अतरसिंह को आज्ञा दी गई कि वह मन्दिर के पास जा कर सब कुछ होता देखें तथा लोगों की भीड़ को शीघ्रातिशीघ्र गुजार दें। जब गुरु रामसिंह जी तथा उनके साथी मन्दिर के पास आये तो लगभग ५० निहंगसिंहों की एक टोली हाथों में लट्ठ लिये नामधारियों से दंगा करने के लिये आती हुई दिखाई दी। जब वह ऊंची आवाजें लगाते, शोर मचाते कैम्प के पास से गुजरने लगे तो मि० मैकेन्डर्यू ने उन्हें खड़े होने तथा डंडे और कुल्हाड़ियां छोड़ देने का आदेश दिया।

निहंगसिंहों ने जब देखा कि पुलिस के अफसर केवल तीन ही हैं, तो वह झगड़ने तथा मुकाबले में डटने लगे। पुलिस अधिकारियों के आदेश देने पर ३० तलवारों वाले पुरुषों ने कैम्प से निकल कर निहंगों के इर्द-गिर्द घेरा डाल दिया। इस पर उन्होंने तत्काल समस्त डंडे तथा कुल्हाड़ियां पुलिस के हवाले कर दीं। शोर मचाते, शेखियां बघारते निहंगसिंह डेरे की ओर कूच कर गये। इस समय लगभग दो सौ निहंग मेले पर आये हुये थे। अफसरों को बाद में पता चला कि निहंगों ने अपने डेरों में गुरु रामसिंह जी के मन्दिरों के दर्शन करने के सम्बन्ध में प्रस्ताव रखा था, शेष तो चुप रहे, परन्तु यह पचास का जत्था उनको रोकने के लिये बहुत व्यग्र था।

इस मेले पर शान्ति रखने के लिये जिला होशियारपुर के डिप्टी कमिश्नर ने मियां फजलहुसैन की ड्यूटी लगाई हुई थी। उसने २० मार्च को अपनी जो रिपोर्ट गुरु रामसिंह जी तथा नामधारियों के इस मेले पर आने के विषय में लिखी, उसका सार निम्नलिखित है:—

"आज्ञानुसार मैं भी गुरु रामसिंह जी की इस सम्प्रदाय को स्थापित करने के सम्बन्धित उद्देश्यों को जानने के लिये यत्न करता रहा हूं।"

"कूकों का तथा सिक्खों का धर्म एक ही है। दोनों ही बाबा गुरु नानक तथा गुरु गोविन्दसिंह जी के ग्रन्थ को पढ़ते हैं, परन्तु इन दोनों में पारस्परिक बैर है। इस वर्ष सरकार ने गुरु रामसिंह जी को होला के मेले पर आने की आज्ञा दे दी। वह ८००० कूकों सहित १९ मार्च को यहां पहुंचे। निहंग, अकाली, वेदी तथा सोढ़ी गुरु रामसिंह जी के गुरुद्वारा आनन्दपुर में

आकर दर्शन करने तथा माथा टेकने के विरुद्ध थे। वे पहले से ही कूकों के गुरुद्वारे में आने के विरोधी थे, इस मेले के अवसर पर उनके विचार कूकों को गुरुद्वारे में घुसने की आज्ञा देने के नहीं थे। इसलिये उन्होंने कई शर्तें लगा कर दर्शन करने की आज्ञा दी। २० मार्च को गुरु रामसिंह जी तथा उनके साथी गुरुद्वारा तख्त केशगढ़ के दर्शनों के लिये गये। गुरु रामसिंह जी ने २५) रु० भेंट किये। पुजारियों ने धन की भेंट रख ली, परन्तु कड़ाह प्रसाद की प्रार्थना करने से इन्कार कर दिया।" (इस पर आप ने बाबा ब्रह्मासिंह नामधारी सूबे को प्रार्थना करने के लिये कहा। बाबा ब्रह्मासिंह ने प्रार्थना की तथा गुरु जी ने स्वयं ही संगतों में 'कड़ाह प्रसाद' बांट दिया। लेखक) इसके पश्चात् आप ने गुरु तेगबहादुर जी के गुरुद्वारा में जा कर २५) रुपया भेंट दी। वहां के पुजारियों ने प्रार्थना कर दी तथा कड़ाह प्रसाद स्वीकार कर लिया। इस पर आपने एक रुपया प्रार्थना करने वाले को भेंट किया।"

डेरे में आकर आप ने उसी दिन केशगढ़ के पुजारियों को गुरुमुखी में एक पत्र लिखा जिसके अंग्रेज़ी अनुवाद का अनुवाद इस प्रकार है :—

"क्या तुम मुझे गुरु जी का सिक्ख नहीं मानते तथा इसी कारण तुमने मेरे लिये अरदास नहीं की ? गुरु जी को तो अभिमान किंचित्मात्र भी न था।"

यह पत्र पढ़ कर पुजारियों ने आप को लिखित उत्तर तो कोई न भेजा, परन्तु मौखिक ही चार-पांच व्यर्थ के निजी आरोप आप के विरुद्ध लगा कर भेजे।

इस पर आपने उत्तर दिया "यदि आप सिक्ख धर्म के नियमों का पालन करने वाले होते तो मेरी शिक्षाओं की प्रशंसा करते, परन्तु तुम गुरु ग्रन्थ साहब की आज्ञाओं के विरुद्ध मांस खाते हो, मदिरा पीते हो, व्यभिचार करते हो, लड़कियां मारते हो तथा अन्य कुकर्म करते हो, इसी लिये ही कूके तुम्हें सिक्ख नहीं समझते। कूके परमात्मा की श्लाघा करते हुये इतने मग्न हो जाते हैं कि उन्हें अपने केशों तथा पगड़ियों की सुधि नहीं रहती।"

"गुरु रामसिंह जी के पास ४० घोड़े अपने तथा सूबों के चढ़ने के लिये थे। जब भी कूकों का समारोह होता तब सब से आगे नक्कारची नक्कारे बजाते तथा उन के पीछे ध्वजा वाले ध्वजा उठा कर चलते। इस मेले पर लगभग ८००० कूके एकत्र हुये थे। इन में से दो तिहाई पुरुष थे तथा एक तिहाई स्त्रियां और बच्चे।"

"गुरू रामसिंह जी से बातचीत करने के पश्चात् मेरा यह मत है कि आप अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध कोई काम नहीं करते, परन्तु उनके कई सूबे बुरे पुरुष हैं जो उन के मान को घटाते हैं। निम्नलिखित पुरुषों को गुरु रामसिंह जी ने उपदेश करने तथा कूके बनाने के लिये अपने सूबे नियुक्त किया हुआ है:—बावा शुद्धसिंह, बावा साहिबसिंह, बावा काहनसिंह, बावा जवाहरसिंह, बावा हुक्मसिंह, बावा हरदत्त सिंह, बावा मलूक सिंह, बावा दीदार सिंह, बावा रतन सिंह, बावा सरमुख सिंह, बावा जोतासिंह, बावा लक्खा सिंह, बावा बुद्धसिंह, बावा नारायण सिंह, बावा खजान सिंह, बावा हरनामसिंह, बावा साधु सिंह, बावा समून्द्र सिंह, बावा गोपाल सिंह, बावा ब्रह्मा सिंह, बावा लाभसिंह। बावा जोतासिंह को छोड़ कर शेष समस्त सूबे आनन्दपुर साहब के मेले पर आये हुये थे।"

"गुरु रामसिंह सदा ही अपने घर से निर्धनों को रोटी वस्त्र देते रहते हैं तथा पवित्र उपदेश देते हैं। इसी कारण ही बहुत सी जातियों के पुरुष कूके बन गये हैं। आनन्दपुर के मेले पर दो दिनों में ही ५० नये कूके बने।"

"प्रतापसिंह रसोली वाला तथा उस का पुत्र देवासिंह दोनों कूके बन गये हैं। सोढ़ी नरेन्द्र सिंह तथा सोढी हीरासिंह कुराली वाले दोनों कूके बनने के लिये तैयार हैं। मुसलमानों में से भी कई पुरुष कूके बने हैं। फजलहुसैन लिखता है कि "कूकों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। अम्बाला, लुधियाना, तथा फिरोजपुर के जिलों, पटियाला, नाभा की रियासतों में इनकी बड़ी संख्या है। जालंधर, होशियारपुर, अमृतसर लाहौर, स्यालकोट तथा गुरुदासपुर के जिलों में भी लोग कूके बने हुये हैं।"

अमृतसर की दीवाली

२७ अक्तूबर १८६७

सरकार ने यद्यपि प्रकट रूप में प्रतिबन्ध कुछ ढीले कर दिये थे, परन्तु अभी तक मेले अथवा सम्मेलन करने के लिए आज्ञा लेनी पड़ती थी। सरकारी अफसर पंजाब के ज़िलों से गुप्तचर भेज कर भैणी के समाचार मंगवाते रहते थे। आनन्दपुर से भैणी वापिस लौट आने पर गुरु रामसिंह जी ने आगामी दीवाली के अवसर पर अमृतसर के दर्शन करने तथा वहां नामधारियों का मेला लगाने का विचार किया। इस मेले का समाचार मिल जाने पर कप्तान मेनज़ी पुलिस सुपरिन्टेंडेन्ट जिला अमृतसर ने एक गुप्तचर दशहरा के दिनों में मेले के सम्बन्ध में पूरे पूरे समाचार लाने के लिये भैणी भेजा। उस ने आ कर यह बयान दिया, "दशहरे के समय पर लगभग तीन हजार नामधारी भैणी में एकत्रित हुये थे। होशियारपुर का सूबा कान्हसिंह तथा अन्य सूबे लक्खा सिंह, सुद्धसिंह, नत्थासिंह, साहब सिंह, जवाहर सिंह, खजान सिंह, वजीर सिंह, तथा नारायन सिंह अमृतसर वाले आये हुये थे। पटियाला वाला सरदार मंगल सिंह भी ५ सवारों के साथ आया हुआ था।" वह यह भी समाचार लाया कि अमृतसर की दीवाली पर पहुंचने के लिये पत्रिकायें भेज दी गई हैं। आशा है कि १५००० नामधारी मेले पर आवेंगे।

सरकारी रिपोर्टों के अनुसार गुरु रामसिंह जी अपने सूबों तथा कुटुम्ब के प्राणियों सहित १५ अक्तूबर १८६७ को अमृतसर पहुंचे तथा शहर से बाहर १ मील दूर तरनतारन वाली सड़क पर एक कुएं के पास डेरा लगाया। २६ तारीख को कमिश्नर साहब और आप की भेंट हुई। आपके पहुंचने से पहिले ही लगभग ८०० नामधारी डेरे में थे। २६ तथा २७ तारीख वाले दिनों में कैम्प में लगभग १२०० पुरुष थे। इनके अतिरिक्त तीन साढ़े तीन सौ के लगभग नामधारी अपने अपने प्रदेश

तथा गांवों के बुंगों (प्रत्येक ऐतिहासिक सिक्ख गुरुद्वारे में गांवों तथा प्रदेशों के पृथक मकान बने होते हैं, जिन में यात्री मेले तथा उत्सवों के दिन ठहरते हैं) में ठहरे हुए थे । इन्सपैक्टर नारायणसिंह की यह ड्यूटी लगाई गई कि जहां भी गुरु रामसिंह जावें उनके साथ साथ रहे । २७ तारीख को आप अपने ५० साथियों को ले कर दरबार साहिब के दर्शनों तथा माथा टेकने के लिये आये । परिक्रमा में साथियों की संख्या दो तथा तीन सौ के लगभग हो गई ।

हरिमन्दिर साहिब में भेंट चढ़ाने तथा माथा टेकने पर आप को एक दुशाला तथा एक सिरोपा मिला। बाबा अटलसाहब के गुरुद्वारा से सुनहरी पल्लों वाला एक दुपट्टा तथा एक पगड़ी सिरोपा मिला । आप ने अकाल बुन्गा में २) रुपये भेंट चढ़ाये; परन्तु अकाल बुन्गा के पुजारियों ने आप की प्रार्थना करने से इन्कार कर दिया । इस पर आप ने दर्शनीय ड्योढ़ी तथा अकाल बुन्गों के मध्य स्थान खड़े हो कर स्वयं ही प्रार्थना की ओर कड़ाह प्रसाद बांट दिया जिसे आप डेरे से तैयार करवा कर साथ ले गये थे । २८ तारीख को आप फिर दरबार साहब में नामधारी संगतों के ठहरने वाले बुंगों में गये । राजासांसोवाले सरदार शमशेरसिंह तथा ठाकुरसिंह दोनों भाइयों ने आकर दर्शन किये तथा भेंट रखी ।

जिस दिन से गुरूजी अमृतसर पहुंचे थे, आप के दर्शनों के लिये शहर के लोग गढ़यालियों वाले तालाब पर आने लगे थे । शहर के बहुत से सम्माननीय हिन्दू, सिक्ख एवं मुसलमान लोगों ने डेरे में पहुंच कर आप के दर्शन किये । दर्शन करने वालों ने ७००) नकद तथा १२ थान बढ़िया कपड़े के भेंटस्वरूप अर्पण किये । अमृतसर के प्रसिद्ध पादरी मि० स्टोर्स तथा पुलिस अफसर मि० क्रिष्टी ने भी डेरे में आ कर गुरूजी से मुलाकातें कीं ।

इस समय पर बहुत से लोगों ने अमृत पान किया तथा नामधारी सिंहों वाली दीक्षा प्राप्त की । कई लोगों का विचार है कि दो हजार की संख्या में नामधारी सिक्ख इस अवसर पर बने ।

इस साल की सरकारी रिपोर्ट में लिखा है कि, "वर्ष डेढ़ वर्ष के समय में अम्बाला जिला के १५ गांवों के समस्त लोग कूके बन गये हैं तथा उनकी संख्या ४००० के लगभग है । वह सब छोटी जातियों जाट, लुहार बढ़ई तथा रामदासियों में से हैं । शुद्धसिंह तथा काहनसिंह सूबे इस जिले

में आते जाते रहते हैं। इस क्षेत्र में कूकों के छोटे-छोटे सम्मेलन होते रहते हैं। पुलिस में भी कूके हैं।"

जनवरी १८६७ में अमृतसर के कप्तान मिस्टर वाल को रिपोर्ट मिली, कि राजासांसी वाला सरदार बक्शीसिंह सिंधावालिया भी कूका बन गया है। परन्तु पड़ताल करने से यह बात झूठ सिद्ध हुई ।

इस वर्ष के फरवरी में कैप्टन बेली ने अपने एक विश्वस्त सूत्र के आधार पर सरकार को सूचना दी, कि काबुल के एक प्रसिद्ध आदमी ने अपने दोनों पुत्र भैणी साहब में कूका मत के नियम जानने के लिये भेजे हैं। इस साल की रिपोर्ट में सरहद की एक पलटन में देशी अफसर (सूबेदार अथवा सूबेदार मेजर) का मत नामधारियों के विषय में दर्ज है। रिपोर्ट में लिखा है कि "नामधारी सिक्ख धर्म को वास्तविक पवित्र रूप में प्रकट कर के उस का प्रचार करना चाहते हैं। वह हिन्दुओं वाली रीतियों, विवाह के मुहूर्त देखने आदि का जो सिक्खों में पुनः प्रविष्ट हो गई हैं, परित्याग करवाते हैं। उन का सम्प्रदाय निपट अकालसेवी है। परमात्मा को एक ओंकार "आपे आप निरंजन सोहै," अकृत्रिम तथा अयोनि मानते हैं। परमात्मा के बार बार योनि धार कर अवतार लेने पर वे विश्वास नहीं रखते, उन को शिष्टाचार प्रणाली अत्यन्त कड़ी है। झूठ, चोरी तथा व्यभिचार को वे महापाप समझते हैं।"

इस वर्ष के आरम्भ में ही नामधारियों के सम्मेलन करने, मेले लगाने तथा दीवान सजाने के सम्बन्ध में लगाये हुए प्रतिबन्ध ढीले कर दिये गये थे। साथ के साथ ही यह आदेश भी प्रसारित कर दिये गये थे कि नामधारियों के सम्मेलनों पर दृष्टि रखी जावे । यदि यह प्रतीत हो कि ऐसे सम्मेलनों के अवसर पर शान्ति भंग होने का डर है तो निःसंकोच ऐसे सम्मेलन वन्द कर दिये जावें।

फरवरी के महीने में माछीवाड़ा के साथ वाले गांव में एक सम्मेलन हुआ, जिस में लगभग ८० कूके सम्मिलित हुए थे। गुरु रामसिंह जी भी वहां गये तथा उन्होंने यह सम्मेलन करने के लिये सरकार से कोई आज्ञा भी न ली। दस दिन बाद ही गांव भमदी के मेघसिंह के घर कूके इकट्ठे हुये। मार्च के महीने में कूकों की एक सम्मेलन कोटलाचक में हुआ, जहां डेढ़ सौ के लगभग नये कूके बने। स्यालकोट के डिप्टी कमिश्नर मेजर मरसर ने हुक्म दिया कि बिना सूचना दिये तथा आज्ञा प्राप्त किये, कूके कोई सम्मेलन न करें। सितम्बर में ककों ने बिना आज्ञा किला

शोभासिंह में सम्मेलन किया। इस जिले का सूबा बाबा जमैयत सिंह तथा लुधियाना के जिला के अन्य सात कूके भी यहां आये हुये थे।

अमृतसर के ज़िला के गांवों में ब्रह्मासिंह तथा जोता सिंह सूबों की संरक्षण में बहुत से छोटे मोटे सम्मेलन होते रहे। इस पर इस जिला के डिप्टी कमिश्नर ने आदेश जारी किया कि जब तक सम्मेलन करने के लिये विशेष प्रार्थना पत्र दे कर आज्ञा प्राप्त न कर ली जावे कूके कोई सम्मेलन नहीं कर सकते।

सन् १८५७ से ही गुरु रामसिंह जी ने नामधारियों के संगठन का काम आरम्भ कर दिया था। इस संगठन कार्य के मूल अधार गांव ही बनाये गये। आठ अथवा ९ साल के अल्प समय में ही इस सम्प्रदाय का यह रूप बन गया था। हर गांव के नामधारियों तथा अन्य संगियों की एक संगति थी, वह आपस में एक ही कुटुम्ब के पुरुषों की भांति मिल कर रहते। दिन के काम काज से अवकाश मिलते समय रात्रि में ढोलक छेनों से शब्द पढ़ते तथा भजन बन्दगी करते। संगत के एकत्रित होने वाले स्थान का नाम धर्मशाला रखा गया। संगतों के नेता ग्रन्थी थे जो धर्मशाला में बालक-बालिकाओं को गुरुमुखी अक्षरों में विद्या पढ़ाते। गुरुबाणी कण्ठस्थ कराते तथा गरुग्रन्थसाहब का पाठ करके मेला अथवा दीवान लगा कर भोग डालते। इन से ऊपर के पदाधिकारी जत्थेदार थे। कई जत्थेदार एक छोटे सूबे के आधीन होते थे। प्रदेश के दल का नेता सूबा होता था। इस दल का प्रबन्ध करने के लिये केन्द्रीय स्थान भैणी में ५ सूबों की बड़ी पंचायत थी, जिन के अध्यक्ष बाबा जवाहर सिंह जी गांव डरौली तहसील मोगा जिला फिरोजपुर वाले थे। इस समस्त संगठन के शिरोमणि नेता गुरु रामसिंह जी थे।

केन्द्रीय पंचायत के सदस्य ये सज्जन थे:—

(१) बाबा जवाहर सिंह जी गांव डरौली जिला फिरोजपुर (२) बाबा काहनसिंह जी गांव चककलां रियासत मालेरकोटला (३) बाबा शुद्धसिंह जी गांव मंढोर जिला अम्बाला (४) बाबा साहिबसिंह गांव बनवालीपुर जिला अमृतसर (५) बाबा लक्खासिंह गांव मलौद जिला लधियाना। दूसरे सूबों के नाम यह थे, बाबा सम्मुखसिंह गांव लल्लूवाल रियासत पटियाला,, बाबा गोपालसिंह सुपुत्र साहबसिंह गांव रखड़ा मनढोर रियासत पटियाला बाबा हुक्मसिंह सुपुत्र केहरसिंह गांव पिल्थी रियासत नाभा, रत्नसिंह अथवा, ज्ञानसिंह पुत्र रामकिशन गांव मन्डी रियासत पटियाला, बाबा खुशहालसिंह

सुपुत्र कर्मसिंह गांव थराज जिला हिसार, बाबा ब्रह्मासिंह सुपुत्र गुलाबसिंह गांव दरियापुर जिला करनाल, बाबा पहाड़सिंह गांव मलौद जिला लुधियाना। बाबा नारायणसिंह सुपुत्र सन्तासिंह गांव खटड़े जिला लुधियाना। बाबा मानसिंह सुपुत्र मक्खनसिंह गांव सैदो जिला फिरोजपुर, बाबा मलकसिंह सुपुत्र मुक्खासिंह गांव फूलेवाल, बाबा समुन्दसिंह सुपुत्र बसाबासिंह गांव खोटे जिला फिरोजपुर, बाबा खजानसिंह सुपुत्र मणीसिंह गांव लधाना जिला जालंधर, बाबा रुड़सिंह सुपुत्र दयालसिंह गांव बन्गालीपुर जिला अमृतसर, बाबा भगवान्सिंह गांव फतेहबाल जिला अमृतसर, बाबा जमैयतसिंह सुपुत्र चन्दा सिंह गांव गिल्ल जिला स्यालकोट, बाबा राजासिंह गांव तरीडी जिला स्यालकोट, बाबा जोतासिंह सुपुत्र रत्नसिंह गांव ढपई जिला स्यालकोट।

सूबों को पृथक् पृथक् प्रदेश संगठन तथा प्रचार के लिये सौंपे हुए थे। एक प्रदेश के सूबे का दूसरे प्रदेश के सूबे से डाक प्रबंध तथा सम्बन्ध स्थापित किया हुआ था। यह सम्बन्ध इस प्रकार पक्का था कि केन्द्र के समाचार, हुक्म तथा हिदायतें आठ पहर के अन्दर अन्दर समस्त पंजाब में स्थान स्थान पर पहुंच जातीं थीं।

पारस्परिक झगड़े निबटाने के लिये कूकों के अपने ही न्यायालय अथवा पंचायतें थीं। गांवों की पंचायतों के ऊपर सूबे न्यायकारी थे। ज्ञानसिंह अथवा रत्नसिंह मण्डी वाले सतलुज दरया के पूर्वी प्रदेश के अदालती थे। इसी प्रकार अन्य सूबे भी न्यय करते थे। झगड़ों के निपटारे भारत में शताब्दियों से पैतृक रूप में चले आ रहे जनन्याय तथा भाईचारे की रीतियों के अनुसार किये जाते थे। नामधारी शेष लोगों को भी यही प्रेरणा देते कि वह भी पारस्परिक झगड़े सरकारी न्यायालयों की अपेक्षा अपनी पंचायतों में निपटावें। सरकारी न्यायालयों में धर्म तथा परमात्मा की शपथ लेकर झूठी साक्षी करने की अपेक्षा अपने ही भाइयों का न्याय स्वीकार करें।

नामधारी सिंह बनने का आन्दोलन बड़ी तीव्रता से चला। दस बारह वर्षों में ही सारे पंजाब में इनकी संख्या तीन चार लाख पर पहुंच गई। पेशावर तथा हरीपुर हजारा के प्रदेश में वेदी कन्हैया सिंह तथा बाबा जगतसिंह डेरा बाबा नानक वाले नामधारी सिक्खी का प्रचार करते थे। इन स्थानों की धर्मशालाओं में रह कर गुरुग्रन्थ साहब का पाठ करते। हरीपुर का चेतसिंह नामक नामधारी एक धनवान् पुरुष था जिसने एक धर्मशाला भी बनवाई थी।

रावलपिंडी में कूका धर्मशाला थी, जहां भाई काहनसिंह नित्य-प्रति

प्रातः तथा संध्या समय धर्मशाला में गुरु ग्रन्थ साहब की बाणी पढ़ते थे । जिला गुजरांवाला में बाबा जमैयतसिंह गांव वर्ण, महन्त बुलाका सिंह तथा महन्त गुलाब सिंह बबर प्रचार करते थे। गुरु राम सिंह जी ने स्वयं सरदार हरीसिंह नलुआ के जमाई सरदार लहनासिंह घरजाखिया तथा पुत्र मोतीसिंह को जो नैपाल राज्य की फौजों में एडजूटेंट था, नामधारी बनाया। महाराजा रणजीतसिंह के समय में पेशावर सूबा के गवर्नर सरदार मोहीसिंह का भतीजा सरदार तारासिंह गांव मिश्री मीने वाला, सरदार बुद्धसिंह का पुत्र सरदार मानसिंह, गांव मानावाला का रईस चूहड़काना के ज़ेलदार अनोखसिंह तथा नम्बरदार अमरीकसिंह, सहारन का नम्बरदार जवाहर सिंह, वैंकेचीमे का नम्बरदार मीहांसिंह, मनहेस का नम्बरदार राजासिंह तथा हिन्दूचक का नम्बरदार अतरसिंह सब नामधारी बन गये थे । स्यालकोट के जिला में बाबा जमैयतसिंह गांव गिल्ल थाना किला शोभासिंह तथा सूबा राजासिंह तरांडी वाला और मंगलसिंह आदि के प्रचार से हमजागोस, उघोचक, आलीमुहार, बासरा सिरवाना तथा चक रामदास आदि बड़े बड़े गांव तथा गोत्रों के प्रमुख पुरुष नामधारियों में प्रविष्ट हो गये थे । गुरुद्वारा "बाबे की बेर" का महन्त प्रेमसिंह भी नामधारी बन गया था ।

गुरु नानकदेव जी के समकालीन प्रसिद्ध बाबा पुराना के वंशज गुरुचरणसिंह जो कि पश्तो तथा पारसी भली भांति जानते थे, नामधारी बन चुके थे ।

अपने पूर्वजों की भांति बाबा गुरुचरणसिंहजी बाबा पुराना जी की काबुल (अफगानिस्तान) नगर में स्थापित की हुई धर्मशालाओं में जाते और अरोड़ों और सुनार जातियों के लोगों में अपने बुजुर्गों की फैलाई हुई सिक्खी की देखभाल करते थे । बाबा गुरुचरनसिंह जी गुरु रामसिंह जी के साथ महाराजा रणजीतसिंहजी की सेना में नौकर थे । जब गुरु रामसिंहजी ने स्यालकोट का भ्रमण किया तो इन्होंने उनका बड़ा स्वागत तथा भण्डारा किया। बाबा पुराना के वंशज और जाट अन्य गोत्री जाट सब कूके बन गये थे ।

मिन्टगुमरी के प्रदेश में बाबा माहलासिंह गांव जेठपुर थाना हुजरेवाला ने मुलतान के प्रदेश तक के लोगों को नामधारी बनाया । जिला लाहौर के क्षेत्र में सूबा श्यामसिंह गांव लाखणा, बाबा केसरसिंह गांव राजाजंग बाबा हरसासिंह गांव मांगा, बाबा हरासिंह गांव कंगनपुर तथा बाबा

फतेहसिंह गांव वलटोहा, महताब सिंह आल्हा नम्बरदार गांव शेखवां, बूटासिंह नम्बरदार गांव मांगा तथा जीतसिंह गांव [illegible] नायब सूबा बघेलसिंह गांव नारली पक्के नामधारी थे तथा लोगों को नाम[illegible] बना रहे थे। शहर लाहौर में बाबा देवासिंह तरांड़ी वाला, सूबा राजासिंह का जमाई इन्द्रसिंह मशीना वाला, गांव पंजग्राइयां वाला हरनाम सिंह महन्त, मक्खनसिंह ग्रन्थी नामधारियों के नेता थे।

लाहौर का रहने वाला प्रसिद्ध नामधारी दीवान बूटासिंह था। बड़े बड़े अंग्रेज अफसर इनकी मान प्रतिष्ठा से भय खाते थे। दीवान बूटासिंह के पिता का नाम गुरुदयालसिंह था तथा जाति कलाल थी। बूटासिंह महाराजा दलीपसिंह की माता महारानी जिन्दा का नौकर था। यह महारानी के समस्त काम काजों की देख-भाल करने वाला दीवान तथा बड़ा अहलकार था। मुलतान की लड़ाई के समय में उसको अंग्रेजी सरकार के विरोधियों से गठजोड़ करने के अपराध में पकड़ कर निगरानी में रख लिया गया। अंग्रेजों के पंजाब को अपने राज्य में मिला लेने के पश्चात् दीवान बूटासिंह पर विद्रोह का मुकद्दमा चलाया गया। उसको जनता को भड़काने के जुर्म में दोषी सिद्ध होने पर सात साल की कैद का हुक्म हुआ। दीवान बूटासिंह ने इलाहाबाद के किले में सात साल की कैद काटी। पूरी कैद काटने पर वापिस आ कर अपने घर लाहौर में रहने लगा। यह धनवान् पुरुष था, सम्पत्ति काफी थी। मान-प्रतिष्ठा वाले वंश का मनुष्य था। कई व्यक्तियों को घर से रोटी दे सकता था। सन् १८६६ में इन्होंने अपना छापाखाना लगा कर कानूनी मासिक-पत्र 'अनवरउल्लशम्स' निकाला। इस छापाखाने की एक शाखा पेशावर में थी तथा दूसरी अजमेर में। अजमेर वाले छापेखाने में राजपूताना गवर्नमेन्ट गज़ट छपता था। पेशावर वाला छापाखाना तो कुछ वर्ष बाद बन्द हो गया था, परन्तु अजमेर वाली शाखा सन् १८८१ में भी चल रही थी। पंजाब के नामी नामधारी सूबे लाहौर आ कर दीवान बूटासिंह के पास ही ठहरते थे। सिक्खों की धार्मिक पुस्तक गुरु ग्रन्थसाहब जी को छपवाने का प्रथम प्रबन्ध गुरु रामसिंह जी ने दीवान जी के द्वारा ही करवाया था। कई बड़े-बड़े अंग्रेज सरकारी अफसर दीवान बूटासिंह की मान-प्रतिष्ठा से इतना डरते थे कि वे कूकों के सम्बन्ध में कोई वक्तव्य अथवा रिपोर्ट लाहौर के छापाखानों में छपने के लिये नहीं देना चाहते थे। उन का विचार था कि उस वक्तव्य की नकल प्रकाशित होने से पहिले ही दीवान साहब के द्वारा गुरु रामसिंह जी तक जा

पहुंचेगी । लाहौर दरबार के पुराने कागजातों के अनुसार दीवान बूटासिंह उस षड्यन्त्र में हाथ रखता था, जिस का निशाना मंत्री लालसिंह तथा अंग्रेजी रेज़ीडेन्ट का वध करना था। यह षडयन्त्र वजीर लालसिंह ने स्वयं पकड़वाया था । परिणामस्वरूप महारानी जिन्दा को पंजाब से निकाल दिया गया था तथा दीवान बटासिंह को कैद हुई थी । पुराने कागजों में इस षड्यन्त्र का नाम प्रेमा षड्यन्त्र करके लिखा है ।

गुरुदासपुर के ज़िला में सूबा करतार सिंह जी बेदी डेरा बाबा नानक तथा नायब सूबा ज़ेलदार हरीसिंह जी सिंहपुरिये के प्रयत्नों से डेरा बाबा नानक के बहुत से बेदी साहबजादे अमर सिंह, प्रताप सिंह, जागीर सिंह तथा गुरुदास सिंह नामधारी बन गये थे। जेलदार हरीसिंह के दोनों पुत्र नारायण सिंह तथा श्याम सिंह भी कूके थे। जेलदार हरीसिंह सिंहपुरिया अत्यन्त सम्मान प्रभाव वाला पुरुष था। इसके नामधारी बनने से आसपास के गांव ठेठरके, पक्खोके आदि में बहुत लोग कके बन गये थे। श्रीगोविन्दपुर में भाई गोविन्दराम पक्के कूके थे तथा मद्रोगोल, चोरांवाली, पनुआं, खोखर के गांवों में लोग नामधारी बन गये थे ।

अमृतसर के जिला में नैनासिंह गांव विरयाह थाना सरहाली, भगवान् सिंह, फत्तेबाल, काहनसिंह ठठी, थाना सरहाली, खड्ग सिंह गांव कक्कड़ गिल्ल थाना लोपोके, बाबा महताबसिंह नम्बरदार गांव उभोके के प्रचार को सुन कर तथा शिष्टाचार को देख कर आस-पास के गांबों के बहुत से लोग नामधारी बन गये थे ।

जिला होशियारपुर में गांव पुरहीरां का जागीरदार सरदार मानसिंह एक प्रसिद्ध नामधारी था । उसके पांचों भाई उस से बैर रखते थे। मानसिंह का चचेरा भाई हमीरसिंह उस के तथा नामधारियों के विरुद्ध सरकार को सूचनायें देता रहता था । मानसिंह के घर गुरु ग्रन्थ साहब के भोग पड़ते तथा कूकों के मेले लगते रहते थे । कालूवाहर, थाना हरियाना का जागीरदार चन्दासिंह भी प्रसिद्ध कूकों में से था। इस के घर में भी भोग पड़ते तथा मेले लगते ।

जालंधर के जिला में बाबा काहनसिंह दुर्गापुर, थाना राहों में खजानसिंह गांव लधयाना, फतेहसिंह गांव मुठड्डाकलां में मैय्यासिंह, गांव जंड़याली में महताबसिंह प्रसिद्ध नामधारी लोगों को कूके बनाते थे ।

जिला फिरोजपुर की तहसील जीरा में गांव गादड़ीवाले के नत्थासिंह, प्रदेश बाहिया में गांव पूहा के खड्गसिंह अथवा जोड़ा जिन की सम्पत्ति में एक

भारत में समाजवादी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणतन्त्र की स्थापना पर नामधारी वर्तमान गुरु श्री प्रतापसिंहजी महाराज स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी को बधाई देते हुए उनके गले में नामधारी प्रतीक ऊन की माला डालकर आशीर्वाद दे रहे हैं। (सन १९५२)

गांव भटिंडा के पास खड़गसिंहवाला भी था, हरनामसिंह गांव नथाना, ध्यान सिंह गांव छतयाना थाना कोट भाई शोभासिंह गांव तामकोट थाना मुक्तसर, काहनसिंह गांव बाजा प्रदेश फरीदकोट तथा देवासिंह गांव धूर कोट थाना निहाल सिंह वाला, नाम धारी संगतों के मुखिया थे । चुगांवा थाना मोगा के सोढी फतेहसिंह जी जागीरदार तथा उन के भाई हीरासिंह चोटी के नामधारियों में से थे । गांव धूरकोट थाना निहालसिंहवाला के जोगासिंह तथा भगवान सिंह देर से नामधारी चले आ रहे थे । बाबा जवाहरसिंह गांव बिलासपुर थाना निहालसिंहवाला तथा नारायणसिंह सुपुत्र देवा सिंह दबड़ीखाने वाला जो गांव रोड़ा में जहां उन की बुवा ब्याही हुई थी, वहां के महन्त नारायण सिंह के पास रहता था, यह सब कूके थे। समुन्द सिंह गांव खोटे थाना निहालसिंहवाला, सूबा मानसिंह, नायब सूबा गुरुबख्श सिंह गांव सैदोके थाना निहालसिंहवाला बहुत धनवान् नामधारी थे । फीरोजपुर शहर में मिस्त्री निहालसिंह एक सम्मान, प्रभाव तथा उच्च शिष्टाचार वाला नामधारी था । यह गांव महतपुर थाना नकोदर जिला जालंधर का रहने वाला था । फीरोजपुर का किला बनने के समय से उसने अपना निवास फिरोजपुर में कर लिया था । ठेकेदारी तथा अनाज का व्यापार करता था। कूके उस का बहुत सत्कार करते थे । आते जाते कूके इसके घर ही निवास करते तथा भोजन करते ।

जिला लुधियाना में नामधारियों की संख्या अधिक थी । गांव खटटड़ा थाना डेहलों के सूबा अतरसिंह, दयासिंह, मस्ताना वीरसिंह, बाबा रामसिंह, समुद्रसिंह, सूबा नारायणसिंह सुपुत्र संगतिसिंह, नारायणसिंह सुपुत्र लहनासिंह, महासिंह सुपुत्र चढ़तसिंह राज, गूजरसिंह सुपुत्र ध्याना राज कूकों के पुरातन कुटुम्ब समझे जाते थे । रायपुर के बाबा दरबारासिंह नम्बरदार, जैमलसिंह नम्बरदार, धौंकलसिंह, बूटासिंह छींबा जो हरकारे का काम करता था, कालासिंह मस्ताना, बेलासिंह छींबा तथा अन्य प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यक्ति सब कूके थे । गांव लोहगढ़ कट्टर नामधारियों का गढ़ था, तथा इस गांव का नाम छोटी भैणी पड़ गया था । नम्बरदार काहनसिंह पुत्र अलबेलसिंह को सरकार अत्यन्त भयानक आदमी समझती थी । सरदारसिंह सुपुत्र लालसिंह । महताबसिंह पुत्र विसावासिंह पुलिस से आंख मिचौनी खेलते रहते तथा खुल्लमखुल्ला अंग्रेजों के विरुद्ध प्रचार करते रहते थे । पंजाब सिंह पुत्र वसावासिंह फिरंगियों को निकालने के स्वप्न लेता । साहिबसिंह पुत्र केशरसिंह, दीपसिंह पुत्र जवाहरसिंह, सावनसिंह पुत्र कूमासिंह, जीवन सिंह पुत्र गर्भासिंह सब कूके थे । इन में से प्रत्येक अंग्रेजों को निकालने

के लिये अपना बलिदान देने के लिये तैयार रहता । गुजरवाल के जमादार समुदंसिंह पुत्र भूपसिंह, सूबा बुद्धसिंह पुत्र मोहरसिंह, कालासिंह पुत्र बुद्धसिंह, चैनसिंह पुत्र धन्नासिंह, तथा चिड़ोमारों की पत्ती का नम्बरदार सब कट्टर कूके थे । गांव कलाहड़ के कृपालसिंह, बुद्धसिंह, खजानसिंह थानेदार विशाखासिंह पुत्र दसौंदासिंह, नम्बरदार लालसिंह, बेलासिंह गांव खंड़ो के कालासिंह पुत्र सन्तासिंह, गांव रुड़का के वीरसिंह मस्ताना, काहनसिंह मस्ताना, गांव खेड़ा के झावासिंह महिमासिंहवाला का चड़तसिंह नाई, गांव लताला के ईश्वरसिंह पुत्र गर्भासिंह, लालसिंह पुत्र गुरदयालसिंह, भागसिंह पुत्र गरीबू कूके थे, और फिरंगी राज्य के कट्टर बैरियों में से थे ।

थाना साहनेवाल के गांव राइयां के बहादुरसिंह पुत्र मानसिंह, मंगल सिंह पुत्र मुहरसिंह, कोट गंगूराय का दयासिंह पुत्र हिम्मतसिंह, छोटी कटानी का ज्वालासिंह पुत्र साहिबा, भैरोंमुन्ने का भंगासिंह पुत्र टहलसिंह सभी पक्के नामधारी थे । थाना रायकोट गांव जोहल के रामसिंह पुत्र महताबसिंह सुनार तथा नारायणसिंह पुत्र खड़गसिंह गांव बुर्जहरीसिंह का मस्सासिंह पुत्र मोहरु, ताजपुर का शोभासिंह पुत्र बूटासिंह नाई, अचरवाल का देवासिंह पुत्र उत्तमसिंह, छोटे बोपाराय का नारायण-सिंह पुत्र जीवनसिंह बढ़ई, बुर्ज हरीसिंह के रामदास अथवा मुहरसिंह तथा बघेलसिंह पुत्र हिम्मतसिंह, बसीआं का साहिबसिंह पुत्र महासिंह, पक्खो-वाल का प्रेमसिंह, अचरवाल का उत्तमसिंह पुत्र काहनसिंह, छोटे बोपाराय के किशन सिंह पुत्र शेरसिंह छीवा तथा श्यामसिंह पुत्र जीवनसिंह बढ़ई, ठठूर का भूपसिंह पुत्र आलम हरावल दस्ता के कूके थे । थाना माछीवाड़ा के गांव तखरों के खजानसिंह पुत्र टेकू, जवाहरसिंह पुत्र गुरदयाल, माछीवाड़ा गांव का नम्बरदार अतरसिंह तथा उस का छोटा भाई रतनसिंह, गांव बिजलीपुर का नारायणसिंह पुत्र भगवानसिंह, गहलेवाल का साहबसिंह पुत्र सैदासिंह लुहार, बड़ा ककराला का दयालसिंह पुत्र देवासिंह सब ऐसे कूके थे जो अंग्रेजों के विरुद्ध हर समय कमानें कसे रहते थे । थाना खन्ना के बड़ी बगली गांव के नम्बरदार साहिबसिंह पुत्र बहादुर, देवासिंह पुत्र रायसिंह हरकारा, शुद्धसिंह, बुद्धसिंह, रामसिंह मस्तानसिंह, गांव उटालां के सुक्खासिंह नाई ज्ञानी हरनामसिंह पुत्र रणसिंह बढ़ई, गांव दयालपुर के बेलासिंह, बुद्धसिंह, बालसिंह, पंजाबसिंह, महताबसिंह चारों सगे भाई, गांव दीवा के लहनासिंह नम्बरदार समशेरसिंह तथा भागसिंह, भमदी का मेघसिंह पुत्र बीरसिंह, दोद-

पुर का सुन्दरसिंह पुत्र मोहासिंह गांव बूथगढ़ का लालसिंह पुत्र बहाली, खन्ना के खड्गसिंह झीवर, बसावासिंह जाट, दीवानसिंह झीवर, अतरसिंह जाट, जयमलसिंह दुकानदार, कोटला अजमेर का जागीरदार विश्नुसिंह पुत्र भूपसिंह, फैजगढ़ का लक्खासिंह बढ़ई गाँव शहाबपुरा का बुद्धसिंह, गांव सेह के मस्तानसिंह, संगतसिंह, दयासिंह बौना तथा, बधावासिंह, विश्नुसिंह बढ़ई गांव हरगना का मानसिंह गांव गंडवां का वजीरसिंह तथा जवाहरसिंह सब प्रथमपाल के कूके थे, जो विदेशी शासकों को हिन्दुस्तान से निकालना धर्म समझते थे। गांव राएसर के उत्तमसिंह, भगवानसिंह, दीदारसिंह तथा काबलसिंह, गांव चीमना के मलूकसिंह तथा प्रतापसिंह, गांव भोतना के चंचलसिंह तथा नत्थासिंह गांव वक्तगढ़ के निधानसिंह कर्मसिंह तथा गांव शैहना के दसौदासिंह बढ़ई सरकार अंग्रेजी की पुलिस के कागजों में खतरनाक कूके थे। थाना दाखा के गांव दाखा का अतर सिंह जाट तथा थाना जगरांवा के गांव कमालपुरा के गुलाब सिंह, खजान सिंह जाट, गांव छज्जावाल के शोभा सिंह बढ़ई तथा समुन्द सिंह जाट पक्के नामधारी थे।

बड़े-बड़े गांवों डल्ला, मल्ला, रसूलपुर, काउंके आदि में कई कई पत्तियां (गांव का एक हिस्सा) कूकों की थीं।

जिला अम्बाला के गांव मन्डौर, के सूबा बाबा शुद्ध सिंह, गांव सढौरा के नायब सूबा हीरा सिंह नाटा तथा सूबा हीरा सिंह लम्बा, कोट कछवा का अतर सिंह जागीरदार जो अवध पुलिस में इन्सपैक्टर था और अब पेन्शन ले रहा था, चुन्नीकलां का हीरासिंह, झाड़मड़ी का दलसिंह नम्बरदार, बालियां का दया सिंह तथा शहर अम्बाला का भाई मस्तानसिंह ठठेरा नामधारी थे। जिला सिरसा अथवा हिसार के गांव थराजवाला थाना खेड़ो के प्रसिद्ध जमींदार बाबा खुशहाल सिंह जी नामधारी थे। यह अत्यन्त दयावान् तथा पुन्यदान करने वाले पुरुष थे। इन का पटियाला तथा नाभा की रियासतों के नामधारियों से घनिष्ठ सम्बन्ध था।

जैसे जैसे लोग अमृत पान कर नामधारी बनते गये, वे पुराने भ्रमों को छोड़ कर गुरुबाणी के पाठ तथा गुरु सिक्खी के रीति-रिवाज की ओर झुकते चले गये। कई गांवों में नामधारियों ने अपने पूर्वजों जठेरों की समाधें तथा मढ़ियां बिल्कुल ही तोड़ दीं। मातारानियों अथवा बीवडियों की मढ़ियां भी साफ कर दीं। ब्राह्मणों की सहस्रों वर्षों की मानसिक तथा हार्दिक दासता के नीचे दबी हुई ग्रामीण जनता गुरुबाणी की शिक्षा लेकर उठने लगी।

नामधारी सिक्ख बन कर लोगों ने अपने अपने गांवों में से सखीसरवरसुल्तान के पीरखाने तथा मुसलमान फकीरों की खानकाहें खत्म करनी आरम्भ कर दीं । "ढैंदी दीहनी ऐं मजार ढैंदी दीहनी ऐं" (टूटता नजर आ रहा है, मजार टूटता नजर आ रहा है) उस समय कूकों के गीतों की अन्तिम तुक थी । हिठाड़ सतलुज के प्रदेशों में मुगल राज्य के समय में मुसलमान सूबेदारों तथा शासकों ने कालीपोश और मदारी फकीर दूतों के रूप में नियुक्त किये हुये थे । जाटों के बड़े गांवों में मुसलमान सक्के हलाल किये हुये बकरों की खालों की बनी हुई मश्कों के साथ घरों में जा कर घड़ों में पीने वाला पानी भरते थे तथा चमड़े के बोकों से कुओं में से इस पानी को निकालते । कालीपोश सवेरे आ कर ही सारे गांव की गलियों में मुसलमानी कलाम पढ़ते तथा मदारी भिक्षुक हर शाम को हर घर जाकर "यारबफज़ल" कह कर रोटियां मांगते । साथ के साथ ही यह लोग हिन्दू प्रजा के समाचार भी मुसलमान शासकों तक पहुंचाया करते थे। नामधारी बन कर लोगों ने कालीपोशों तथा भिक्षु मुसलमान फकीरों का गांवों में आना बन्द कर दिया। मुसलमान सक्कों को घरों में आकर पानी भरने से हटा कर लोहे के डोल का पानी पीना आरम्भ कर दिया। इस से मुसलमान फकीरों, भिक्षुओं तथा बेकारों का यह टोला भी नामधारियों के विरुद्ध हो गया। ब्राह्मणों तथा नामधारियों की प्रारंभ से ही अनबन चली आ रही थी। नामधारी ब्राह्मणों को चिढ़ाने के लिये यह गाया करते थे, "गई ब्राह्मणो तुम्हारे हाथों से खीर। आगे तो मिलती थीं पूरी धोतियां अब न मिलती लीर"। हुक्का पीने वाले ब्राह्मणों को नामधारी गदहीचूस तथा मांसखानेवालों को कटराखाने कहा करते थे। मंगतों, फकीरों, ब्राह्मणों तथा गांव के पारस्परिक बैर लेने वालों ने समाधीं-मजारों को तोड़ने वाली बात का नामधारी सिंहों के विरुद्ध उपयोग किया। पुलिस के अफसर भी नित्य-नित्य नामधारियों के विरुद्ध जांच करने से तंग आये हुये थे। अतः उनको भी अब नामधारियों के विरुद्ध गुस्सा निकालने का अच्छा अवसर मिला। गांव खटड़ा थाना डेहलों जिला लुधियाना के नामधारियों ने अपने जेष्ठों की मढ़ियां तोड़ दीं। यहां के ब्राह्मणों के साथ एक बार पहले भी नामधारियों की लड़ाई हुई थी। ब्राह्मणों ने पुलिस में शिकायत की। मुकद्दमा चला। कूकों ने स्पष्ट रूप में बयान दिये कि जबसे वे कूके बन गये हैं, तबसे वह अपने जेष्ठों की मढ़ियों को नहीं मानते। परन्तु फिर भी चार कूकों खजानसिंह, काहनसिंह, बसावासिंह तथा बहादुर सिंह को ६-६ महीने कैद तथा दस-दस रुपया जुर्माना की सजायें हुईं। गांव

भमद्दी थाना खन्ना के मेघसिंह, शेरसिंह, जोतासिंह तथा गुलाबसिंह मजहबी ने अपने गांव में एक मढ़ी तथा पीरखाना तोड़ दिया। लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर के सम्मुख साफ-साफ कह दिया कि मंढ़ीआं तथा पीर-खाने उन के पूर्वजों ने बनाये थे, परन्तु अब वह इन की पूजा नहीं करते अतः तोड़ दिये हैं। इन को भी ६-६ महीने कैद तथा दस-दस रुपया जुर्माना की सजाएं हुईं। सन् १८६६ तथा १८६७ में इस किस्म की कई घटनायें लाहौर, अमृतसर, गुरुदासपुर तथा गुजरांवालां के जिलों में हुईं। नामधारियों को जुर्माना तथा कैदें हुईं। परन्तु जब नामधारियों ने यह देखा कि धर्म पर चलते हुये स्वेच्छाचारी होने से ब्राह्मणों, फकीरों, बेकारों, पीरखानों के मजारों तथा विदेशी सरकार के कर्म-चारियों को धर्म के विरुद्ध गुस्सा निकालने का अवसर मिलता है, तो उन्होंने ऐसा करना बन्द कर दिया।

प्रचार के दूसरे चार वर्ष

सन् १८६७ से १८७१ तक

सन् १८६७ के पश्चात् के चार वर्ष गुरु रामसिंह जी ने भ्रमण कर के पंजाब के जिलों अम्बाला, लुधियाना, फीरोज़पुर, सिक्ख रियासतों के प्रदेशों, होशियारपुर, जालंधर, अमृतसर, गुरुदासपुर, स्यालकोट तथा गुजरांवाला में अमृत पान कराने, सिक्ख धर्म फैलाने तथा सामाजिक कुरीतियों का सुधार करने में लगाये। नामधारियों की हस्तलिखित तथा अमुद्रित पुस्तकों में आपके इन देशाटनों का वर्णन विस्तार से किया हुआ है। इस को यदि क्रमपूर्वक सम्वत् के अनुसार लिख दिया जावे तो ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह पंजाब के सामाजिक जीवन के इतिहास के लिये बहुमूल्य सामग्री होगी।

सन् १८६८ में प्रचार करते हुए गुरु रामसिंह जी दीवाली के अवसर पर अमृतसर पहुंचे। लाहौर में से गुजरते हुये सम्वत् १६२५ को माघी संक्रांति का दिवस आपने बाबा जमैयतसिंह के पास गांव गिल्ल जिला स्यालकोट में मनाया। आपने इस सम्वत् का होला, जो मार्च १८६६ में था मानाबाला के सरदारों हीरासिंह तथा सरदार बुद्धसिंह आदि के पास मनाया। गांव मानावाले का यह होला नामधारी इतिहास में एक बहुत प्रसिद्ध मेला है। इस बार आपने सरदार लहनासिंह घरजाखिया जिस के साथ जनरल हरीसिंह जी नलवा की पुत्री ब्याही हुई थी, को नामधारी बनाया। इससे नलुआ वंश के साथ भी गुरु रामसिंह जी का घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। सरदार हरीसिंह नलुआ का पुत्र मोतीसिंह नैपाल राज्य की फौज में एडजूटेंट था। यहां ही आपने उच्चारण किया था कि मैंने ढाई सिक्ख देखे हैं। सरदार लहनासिंह घरजाखीया पूर्ण, बाबा जमैयत सिंह काहनेवाला पूर्ण तथा बाबा जमैयत सिंह गिल्लांवाला आधा। यहां ही महाराजा रणजीतसिंह के पेशावर के गवर्नर सरदार महासिंह का भतीजा तारासिंह गांव मिश्रीमीनेवाला आप के कर कमलों से अमृत

पान कर नामधारी बना। कोट शेरा की माई भागन आप को अपने गांव में ले गई तथा वहां भण्डारा किया। सन् १८६८ की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार गूजरांवाला के प्रदेश के लोग नामधारी बन रहे थे। सरकारी कर्मचारियों की इस वर्ष की रिपोर्ट में नामधारियों के विरुद्ध बहुत ही बुरी बुरी बातें लिख कर परिणाम निकाले गये हैं। उसमें लिखा है, कि लोग इस वर्ष नामधारी नहीं बन रहे जो कि वास्तव में बिल्कुल गलत है। जिस महला चन्दो को सरकारी अफसरों ने प्रचारिका लिखा है, वास्तव में वह केवल १५ वर्ष की लड़की थी। रिपोर्ट के अन्त में लिखा है कि सरकार को नामधारियों पर निगरानी रखनी चाहिये, क्योंकि यह भी सम्भव है कि दबी हुई अग्नि पुनः प्रचंड ज्वाला बन जाये।

नामधारियों की सभाओं पर प्रतिबन्ध ढीले होने से कूकों ने अपने अपने इलाकों में मेले तथा दीवान लगाने आरम्भ कर दिये थे। सम्वत् १६२५ के अथवा मार्च १८६९ होला के मेले के लिये बाबा खुशहाल सिंह तथा मस्तान सिंह थराजवाला निवासियों ने आसपास के नामधारियों को निमन्त्रण भेज दिये। मुक्तसर, फाजिलका तथा अबोहर के इलाकों की नई बन्दोबस्त हो रही थी। मोगा, भटिंडा, फरीदकोट के प्रदेशों के केसधारी जाट मसलमान बोदलों, खोखरों, और हिंदू बागड़िये, विशनुइयों, आदि से चार आने से ले कर १) रुपया बीघा के हिसाब से भूमि खरीद रहे थे। भूमि बरानी थी। असाड़ी श्रावणी की फसलें वर्षा होने पर हो जाती थीं। दूर दूर तक रेत के टीले ही टीले चले जाते थे। इन नये आबादकारों ने प्रबंध यह रक्खा हुआ था कि एक कुटुम्ब के कुछ व्यक्ति तो पिछले गांव में रहते तथा कुछ अगले गांव चले जाते। चोरी डाके से डरते हुये कई कई गांवों के लोग एकत्रित हो कर सफर किया करते। थराजवाला के होला के मेले के समाचार सुन कर आसपास के बहुत से नामधारी सिंह तथा उनके संगी-साथी मुक्तसर से कुछ दूर गांव रुपाना में एकत्रित हो गये। नई नई आबादियां थीं। सारे जाट सिक्ख पुराने मुसलिम निवासियों के मुकाबले में इकट्ठे रहते थे। तथा एक दूसरे का दुख बटाते थे। जहां मुसलमान संगठित हो कर झोपड़ियां जलाते तथा बाहुबल से ढोर ले जाने का यत्न करते, यह सारे संगठित रूप में डट कर मुकाबला करते। अधिकतर स्थानों में नये सिक्ख आबादकार जो नामधारी बन गये थे इस प्रदेश के गौघातक मुसलमानों को मौत के दूत हो कर मिलते थे। इन प्रदेशों के सोढी गुरु, नामधारियों के स्वाभाविक ही विरोधी थे। मुसलमान पुलिस वाले, पटवारी मुन्शी मुसद्दी, जाट सिक्खों के मुसलमानों की इस निरोल आबादी

में आ कर भूमि खरीदने तथा गांव बसाने के सख्त विरोधी थे। रुपाने से तैयार हो कर नामधारियों का जत्था गांव थराजवाला को चल पड़ा। मुसलमान थानेदार दीवानबख्श व्यर्थ ही सिक्खों के इस जत्थे के पीछे हो लिया। दो दिन तो जत्थे के सिक्खों ने इसे कुछ न कहा, परन्तु जब वह खुल्लम खुल्ला इनका निरादर करने लगा तो जत्थे के नेताओं ने उस को धैर्य से समझाया कि वह थराजवाला में होला के मेले पर जा रहे हैं। इस पर भी वह सर पर ही चढ़ता गया। अतः जत्थे में से कुछ जोशीले सिक्खों ने दीवानबख्श के साथ वही व्यवहार किया जो तंग आये हुये जाट ऐसे समय पर बुरे हाकिमों के साथ किया करते हैं। थानेदार ने अफसरी मान में आकर छेड़खानी की, इस पर दंगा हो गया। उस ने तलवार चलाने की धमकी दी। सिंहों ने उस की तलवार छीन ली तथा डण्डे अथवा (मौलाबख्श) से दीवानबख्श थानेदार की मरम्मत कर दी। उसके घोड़े को एक दो सोटे मार कर पीछे भगा दिया। थानेदार के साथ का सिपाही भी झाड़ खा कर लौट आया।

दीवानबख्श ने आते ही नामधारियों के विरुद्ध जिला के अफसरों को उसे जान से मार डालने की नीयत से हमला करने तथा बलवा करने के इरादे से इकट्ठा होने, अंग्रेजी शासन के विरुद्ध नारे लगाने, तथा हुकूमत को न मानने के अपराधी होने की रिपोर्ट भेज दी।

रिपोर्ट मिलने पर फिरोजपुर का सुपरिटेंडेन्ट पुलिस मि० टर्टन स्मिथ तथा असिस्टेंट कमिश्नर मि० वेकफील्ड लगभग २० सिपाहिओं को साथ ले कर थराजवाला की ओर चल पड़े। घुड़सवार पुलिस भी साथ थी। १ मार्च को रात के २ बजे वह मुक्तसर पहुंचे। सोढी मानसिंह तथा उस के भाई ने साहब बहादुरों को आ कर सलाम की तथा अपनी ओर से हर प्रकार की सहायता प्रस्तुत की।

प्रातःकाल अंग्रेज अफसर तथा पुलिस के सिपाही थराजवाला को चले। अफसरों को तथा टोडियों को कूकों के नाम से ही बुखार हो जाता था। अतः थराजवाला से दूर ही यह बात बनाई गई कि पुलिस को पीछे रक्खा जावे तथा गांव वालों को आगे करके नामधारियों को पकड़ने का यत्न किया जावे। दो बजे समस्त पार्टी थराजवाला पहुंची। इन्सपैक्टर कुतुबशाह, आठ पुलिस वाले, और बन्दोबस्त का सुपरिटेंडेन्ट अलीमौला, यह सब गांव से बाहर अफसरों के पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इन्सपैक्टर कुतुबशाह ने अपनी सारी कारगुजारी अंग्रेज अफसरों को सुनाई और कहा कि, "सेवक ने हुजूर के आने से पहले फूलेवालिये कूका

मलूक सिंह के द्वारा विद्रोही कूकों को स्वयं ही हमारे. हवाले करने का हुक्म दिया था, परन्तु मस्तानसिंह थराजवाला ने मलूकसिंह की पेश नहीं जाने दी। मलूकसिंह के द्वारा फिदवी मस्तान सिंह को भी मिला जिस ने मेरा परिहास किया तथा सरकार की नौकरी छोड़ कर कूकों के साथ मिल जाने के लिये कहा। अलोमौला के समझाने पर कूकों ने उस पर ढेले भी फेंके।"

उधर मुसलमान देशी अफसर नामधारियों को हुकूमत के विद्रोही सिद्ध करने तथा उन्हें फांसी के दंड दिलवाने के यत्नों में लगे हुये थे, इधर निष्कपट नामधारी गुड़ बांटने तथा आपस में मिल कर मेला करने की तैयारियां कर रहे थे। अंग्रेज अफसरों का आना सुन कर नामधारी खुले हृदय से इन के पास मुसलमान कर्मचारियों की शिकायत करने को आये। परन्तु उलटे उन में से ही ४४ आदमी पकड़ कर मलोट के थाने में भेज दिये गये। तथा नामधारियों के सोना-चांदी के आभूषण जो सरकारी रिपोर्ट के अनुसार ५०००) मोल के थे, अफसरों ने अपने कब्जे में कर लिये।

दो मार्च को ४४ नामधारी कैदी मलोट से मुक्तसर लाये गये तथा फिरोजपुर भेज दिये गये। फिरोज़पुर के डिप्टी कमिश्नर मिस्टर नाकस के सामने मुकद्दमा पेश हुआ। पंजाब सरकार की आज्ञानुसार लाहौर के कमिश्नर मि० क्रेकक्राफट ने डिप्टीकमिश्नर को लिखा, कि दोषियों पर विद्रोह का मुकद्दमा न चलाया जावे, बल्कि बलवा का मुकद्दमा चला कर कुछ एक को ही कड़े दंड दिये जावें।

सरकार की मान प्रतिष्ठा को कायम रखने के लिये थराजवाला गांव के मस्तानसिंह तथा बेलीसिंह, कराईवाला के विचित्रसिंह, औलख के हरनामसिंह, चन्नो के मन्नासिंह, फ़लेवाले के गुरमुखसिंह, को थोड़ी-थोड़ी कैद की सजाएँ दीं और जुर्माने किये। शेष तीस आदमियों को मुकद्दमा चलाये बिना ही छोड़ दिया गया।

सोढ़ी मानसिंह को सरकार की सहायता देने के बदले में आनरेरी मजिस्ट्रेट बना दिया गया। गांव वालों को भी नक़द इनाम दिये गये। परन्तु पुलिस वालों में से किसी को भी कुछ न मिला। वास्तव में अंग्रेज अफ़सरों को यह निश्चिय हो गया था, कि छोटे मुसलमान अफसरों ने षडयंत्र करके झूठा मुकद्दमा खड़ा कर दिया है और असल बात कुछ है ही नहीं।

सन १८६९ अथवा सम्वत् १९२६ में गुरु रामसिंह जी ने लुधियाना, लाहौर, गुरुदासपुर तथा स्यालकोट के ज़िलों का पर्यटन किया। जब दड़प के देशाटन से लौटते हुये गुरुदासपुर के ज़िले से गुजर रहे थे तो सरकारी रिपोर्ट के अनुसार आपके साथ १५० आदमी थे। इस समय उनके साथ

सरदार बुद्धसिंह मानावाले का, स्यालकोट का जोतासिंह, तथा सरदार मंगलसिंह पटियालावाले उनके साथ थे। बाबा नारायणसिंह जिन्हें नामधारी पंथ में दीवान साहब के नाम तथा सम्मान से बुलाया जाता था भी आपके साथ थे।

मौलवी गुलामभीख जालंधरी अपनी उर्दू की अप्रकाशित पुस्तक तारीख वाकरी में पृष्ठ १४२ से १४८ तक कूकों के विषय में इस प्रकार लिखता है। (इस पुस्तक को लिखकर समाप्त करने की तारीख सन् १८८२ है।)

"मैं स्वयं भैणी गया और देखा--कूकों ने जो तरीका अखत्यार किया है वह और कुछ नहीं है, वह असल मजहब सिक्खों का ही है और उसे उन्होंने दुबारा रौनक दी है। मैलान उनकी तबियत का व असली रुख सिक्ख मजहब को जानब है। 'पर उनके तरीक और डेढ़ लाख आदमियों से भी ज्यादा गिरोह के इतफाक से, यह भी अयां (स्पष्ट) है कि यह लोग गुरु गोबिन्दसिंह के तरीके पर चलते हैं। उनकी जोलानिये तबाह, सख्त गुज़रान, नीमशबी (अर्धरात्रि) पंचायतें और सिपाहियाना वज़ा को देखकर गवर्नमेन्ट पंजाब की नज़र उनके ऊपर हुई, और उन्होंने उनके सरग्रोह को निगाह में रखा था।"

"नानकशाह की तरह रामसिंह भी हर कौम और हर जाति के आदमी को अपने मज़हब व फिरके में मिला लेता है। मुसलमानों को भी कूका कर लेता है। इन कूकों में अक्सर नीची जाति के लोग मिसल पंजाबी जाट और चमार वगैरह के हैं। अकायद (नियम) उनके साफ़ और आसान हैं। यानी बुतपरस्ती किसी तरह की जायज़ नहीं। किसी ज़ाति की कैद नहीं है। गुरू गोबिन्दसिंहजी को अपना देवता मानते हैं। हर किस्म की बुराई को गुनाह मानते हैं। चोरी, जनाकारी, शराबखोरी और कुल मुस्करातेफसाद (मादक पदार्थ) गोश्त और झूठ उनके कतई मना है। जो कोई कूका होता और यह मज़हब अख्तियार करता है, उसके ऊपर अतायत (आधीनता) गुरु की और पाबन्दी अकायद की ओर जफाकशी और जानफशानी जबरन लाज़िम करवाते हैं। बड़ा मकूला उनका यह है—मरना कबूल करो, जीने की ख्वाहिश छोड़ो। अपने को खाक समझो, तब कूका बनो--कूकों का रोज रात के तीन बजे उठकर नहाना होता है और नहा धोकर ग्रन्थ के श्लोक पढ़ते हैं। उनको तमाम उमर, नेकी और नेकचलनी की ताकीद की जाती है......कूका फ़िरका में किसी ने मक्कार और बदइखलाक कम देखा

होगा। इन लोगों के बड़े गरोह को देखकर मालूम होता है कि इस जदीद (नये) फिरके को बड़ी जल्द तरक्की हुई है। गांव के गाँव और मौज़े के मौज़े कूके हो गये। जिस वक्त गुरु नानक जी मौजूद थे और उन्होंने सिलसिला अरशाद शुरू किया, उनको यह नशीब न हुआ कि दस वर्ष में भी एक हजार आदमी उनके चेलों में होता उसके मज़हब का अरूज (उन्नति) पिछले मसनद नशीनों (उत्तराधिकारियों) के वक्त में हुआ था, इस मूजिद (गुरू) की जिन्दगी में लाखों कूका हो गये।"

"जबकि गुरुजी को कोई नया गश्ती हुक्म जारी करना मंजूर होता है तो वह लिखकर एक कूके को दे देते हैं। जितना उससे दौड़ा जाता है वह उस हुक्म को लेकर सफ़र करता हुआ दौड़ता है और फर्माबरदारी अपने गुरु की अपने ऊपर फ़र्ज जानता है। जब वह थककर चलने के काबिल नहीं रहता, किसी दूसरे कूके को दे देता है। जब वह भी दौड़ता कूकों को उस गश्ती हुक्म से मतलाह (सूचित) करता हुआ थक जाता है तो वह भी किसी दूसरे कूका को दे देता है, वह भी इसी तरह अमल करता है। ग़रज़ इस तरह वह हुक्म अजब सुरअत (तीव्रता) के साथ कूकों मे पहुंच आता है। चेले उसके रोज़बरोज़ ज्यादा होते गये और बिलाशक इख़लाक उसके चेलों का सिक्खों की निसबत बेहतर होता चला था। ग़रज़ कूका सिक्खों में ऐसे हो गये कि जैसे मुसलमानों में व्हाबी...।"

तेरह चौदह वर्ष के प्रचार का यह प्रभाव पड़ा कि खण्डे का अमृत छके हुए तया पंच ककारों को रहत रखने वाले सिक्खो में से ९५ प्रतिशत नामधारीसिंह बन गये थे। पंजाब तथा सिक्ख रियासतों के समस्त इलाकों तथा जाट गोत्रों के मानप्रतिष्ठा वाले कुटम्ब नामधारी हो गये थे।

नामधारियों का राजनैतिक कार्यक्रम

भारत के सीमान्त राज्य

काश्मीर तथा नेपाल से सम्बन्ध

गुरु रामसिंह जी ने धर्म प्रचार तथा सामाजिक सुधार आन्दोलन की नींव का निर्माण राजनैतिक विचार से किया था। आपका वास्तविक ध्येय इन दोनों साधनों से लोगों को एक सूत्र में पिरोकर विदेशी राज्य के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम के लिये जनता तथा देश को तैयार करनने का था। सन् १८६८ अथवा सम्वत् १९२५ तक बाबा पुराना के वंशज बाबा गुरुचरणसिंह, तथा बाबा कन्हैयासिंह और जगतसिंह बेदी के प्रचार से काबुल, पेशावर, तीराह तथा हरीपुर हजारा तक लोग इस नवीन आन्दोलन के उद्देश्यों तथा इसके संचालक गुरु के नाम से परिचित हो गये थे। पंजाब के बहुत से वहाबियों (पवित्र जीवन वाले मुसलमानों को एक सम्प्रदाय) तथा नामधारियों के गांव एक ही थे।

अंग्रेज़ों तथा सिक्खों की पहली लड़ाई के अंत में अंग्रेजों ने महाराजा रणजीतसिंह के राज्य का काश्मीर वाला प्रदेश एक करोड़ रुपये में राजा गुलाबसिंह डोगरा के हाथ बेच दिया था। जब अंग्रेजों ने अपनी पहले से ही सोची समझी चाल के अनुसार पंजाब को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया और इस नये प्रदेश को सीमाओं का अध्ययन किया, तब उन्हें काश्मीर बेचने की ग़लती अनुभव हुई। यूरोप में हुई क्रीमिआ को लड़ाई के पश्चात् अंग्रेजों ने रूसी तुर्किस्तान तथा काश्मीर की सीमा तथा यातायात के मार्गों आदि पर पक्का कब्जा करने को चालें सोचनी आरम्भ कर दीं और रियासत काश्मीर की भीतरी समस्याओं में भी हस्तक्षेप करने लगे।

काश्मीर का महाराजा रणवीरसिंह अंग्रेजों के पुरानी संधि से अधिक हस्तक्षेप करने को बुरा समझता था । काश्मीर दरबार में उस समय दरबारियों के दो दल थे । एक प्रधान मन्त्री दीवान कृपाराम एमनाबाद वाले का जो अंग्रेजों से पक्की मित्रता रखने के पक्ष में था, दूसरा दल महाराजा गुलाबसिंह के गुरु वेदान्ती जी का, जो काश्मीर को अंग्रेजों के प्रभाव से सुरक्षित तथा अर्ध स्वतंत्र हिन्दी राज्य के रूप में रखना चाहता था । वेदान्ती जी महाराजा गुलाबसिंह जी के समय से एक विद्यालय चला रहे थे तथा उसमें स्वयं ही शिक्षा दिया करते थे। गुजरांवाला तथा स्यालकोट ज़िलों के बहुत से नामधारी वेदान्ती जी के मित्र थे तथा उनके पास इनका खुला आना जाना था ।

किशनसिंह उपनाम हरीसिंह गांव ग्रन्थगढ़ ज़िला अमृतसर तथा राजासिंह तरांड़ीवाला वेदान्ती जी को अधिकतर मिलते रहते थे । गुरु रामसिहजी के दड्डप, गुजरांवाला, स्यालकोट के देशाटन के समय १८६९ की ग्रीष्म ऋतु में ही आपके आदेश से तथा वेदान्ती जी के द्वारा हीरासिंह लम्बू सढौरेवाला, तारासिंह किलादेशासिंह वाला, तीस अन्य कूकों के साथ महाराजा काश्मोर को जम्मू में मिले । वेदान्ती जी की सिफारिश पर महाराजा रणवीरसिंह ने इन्हें जम्मू नगर से बाहर जगह दे दी । महाराजा साहब ने इन्हें बचन दिया कि यदि वह एक पलटन की पूर्ण संख्या के बराबर कूके ले आवें तो उनकी पृथक् पलटन स्थापित कर दी जावेगी । कूकों को कम्पनी कुमादान हुक्मसिंह की रेजोमेन्ट में सम्मिलित करके श्रीनगर भेज दी गई। इस रेजीमेण्ट का अजीटन गवर्नर मियांसिंह का भतीजा मिश्रीमीने गांव का तारासिंह था। नामधारियों को पूरी तरह कवायद-परेड सिखाकर तथा वर्दियाँ देकर बाकायदा सरकारी नौकर कर लिया गया । १५ मास के पश्चात् नवम्बर १८७० में नामधारी सैनिकों की संख्या ढाई सौ के लगभग हो गई । इनकी ड्यूटियां सोमान्त चौकियों पर लगाई जाती थीं ।

नामधारो सैनिकों का वेतन १०) रुपये मासिक था । जम्मू की फौज के अन्य सैनिकों से इन्हें एक रुपया अधिक मिलता था । इन सैनिकों में से दो नामधारी वह भी थे जो मुसलमानों से कूके बने थे ।

पंजाब सरकार को जब इस बात का पता चला, तो उसने इसका पूरा पूरा समाचार लाने के लिये एक अफसर भेजा, जिसने तीन अथवा चार मास पश्चात् आकर नामधारियों के काश्मीर की सेना में भरती होने का पता दिया । इस अफसर के अतिरिक्त अन्य दूत भी भेजे गये, जो इस बात

का पता लगाते रहे। यद्यपि इस समय सरकार के पास नामधारियों के विरुद्ध कोई रिपोर्ट नहीं पहुँच रही थी, तथापि पंजाब सरकार नामधारियों के इस प्रकार देशी रियासतों की सेनाओं में भरती होकर कवायद परेड सीखकर फौजी अनुशासन के पालक तथा अभ्यस्त हो जाने को बहुत खतरे वाली बात समझती थी। भरती होकर नामधारी, पुलिस की निगरानी तथा अफसरों की दृष्टि से ओझल हो जाते थे। इसलिये उनके कार्यों का कुछ पता नहीं चलता था।

दीवान कृपाराम वेदान्ती जी का विरोधी होने तथा अंग्रेजों का अपना आदमी होने के कारणों से काश्मीर की सीमान्त रियासत में नामधारियों की पल्टन खड़ी करने का कट्टर विरोधी था। वह किसी ऐसे अवसर की टोह में था जब कि वह महाराजा से इस पल्टन को तोड़ने का आदेश प्राप्त कर सके। दीवान कृपाराम एक अत्यन्त चालाक रियासती दरबारी था। उसकी अंग्रेज अफसरों से गहरी छन रही थी, अंग्रेज भी दीवानसाहब को फौज में नामधारी न रखने के लिये सदा कहते रहते थे। दीवान साहब के सम्बंध में प्रसिद्ध है कि उसने रियासत के पदों पर अपने साले तथा सालों के भी साले लगा रक्खे थे। अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के कत्ल करने वालों को फांसी मिलने समय अंग्रेजों को नामधारियों की जत्थाबन्दी के विषय में बहुत आशंकायें हो गई थीं। अतः इस अवसर पर दीवान साहब ने महाराजा के पास जाकर बताया कि उसने रैजीडेन्ट को बातचीत करते हुए स्वयं सुना है, कि अंग्रेजी सरकार कूकों के विरुद्ध है, क्योंकि कूके अंग्रेजों के कट्टर दुश्मन हैं।

महाराजा ने दीवान साहब के कहने पर अपनी निजी बेहतरी इसी में समझी कि कूकों की कम्पनी तोड़ दी जावे। कम्पनी स्थापित करने के तीन साल पश्चात् सन् १८७१ के अंत में वह तोड़ दी गई तथा नामधारी सैनिक घरों को वापिस आ गये। सढौरेवाला हीरासिंह इन नामधारियों का अगुआ सन् १८८१ के पश्चात् भी अपने गांव सढौरा में ही रहता था।

उस समय नेपाल के स्वतंत्र राज्य का प्रधानमन्त्री जंगबहादुर राणा था। नेपाल का वास्तविक महाराजा जिसको पांचसरकार भी कहते हैं, सन १९५० तक केवल नाममात्र का ही महाराजा होता था। राज्य और शासन आदि का समस्त काम सन् १८०३ से लेकर १९५० तक प्रधान मंत्रियों के ही अधीन था, जिनको तीन सरकार कहते थे। महाराणा जंगबहादुर नेपाल इतिहास में भीमसेन थापा के पश्चात् प्रथम श्रेणी का राजनीतिज्ञ

चतुर तथा अंग्रेजों की गहरी चालों को समझने वाला प्रधान मंत्री हुआ है। जंग बहादुर अपने मामाओं, उनके परिवारों तथा हितैषियों के रक्त की नदियां बहाकर, सन् १८४७ में स्वयं प्रधान मन्त्री की गद्दी का स्वामी बना। बाल्यावस्था में जगबहादुर अपने मामा जनरल मातावर सिंह थापा के साथ महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में लाहौर भी रहा था। जब सन् १८४५ में जनरल मातावरसिंह थापा लाहौर से जाकर नैपाल का प्रधान मन्त्री बना तो जंग बहादुर को भी एक बड़े पद पर लगा दिया गया। यही कारण था कि जब महारानी जिन्दां चुनार के किले से भेष बदल कर निकली तो वह सीधी नैपाल में जंगबहादुर के पास पहुंच गई। उसने महारानी को बागमती नदी के तट पर थापाथलि में रहने के लिये एक प्रासाद देकर उसके लिये रियासत की ओर से एक अच्छी धनराशि जीविका के लिए नियुक्त कर दी।

गद्दी संभालने के एक दो वर्ष पश्चात् महाराजा जंगबहादुर ने अपनी शक्ति दृढ़ करने में लगाये। १८५० में उसने तिब्बत पर चढ़ाई कर दी। युद्ध में तिब्बतियों की पराजय हुई। जंगबहादुर की ओर से संधि की दूसरी शर्त यह रखी गई, कि "लाहौर दरबार के जो केशाधारी सिक्ख सैनिक तिब्बत वालों के बन्दी थे, उन सबको छोड़कर नैपाल राज्य के हवाले कर दिया जावे।" ये सिक्ख सैनिक तथा इनका अफसर काठमांडू पहुंच गये तथा अपने साथ सरदार लहनासिंह मजीठिया का आविष्कार ऊँचे पहाड़ों पर दुश्मनों के विरुद्ध लड़ाई में प्रयोग करने के लिये चमड़े की दो तोपें भी ले आये। ये तोपें अभी तक नैपाल राज्य की राजधानी काठमांडू के शस्त्रागार में पड़ी हैं। लेखक ने सन् १९४७-४८ में अपनी आंखों से इन्हें देखा है।

महाराणा जंगबहादुर ने इन सिक्खों को अपनी फौजों को कवायद परेड कराने तथा नये ढंग के पहाड़ी तथा मैदानी युद्ध लड़ने के तरीके सिखाने के काम पर नौकर रख लिया। काठमांडू में उदासियों तथा निर्मले साधुओं के डेरे भी हैं, जिन्हें रियासत की ओर से जागीरें मिली हुई हैं। महारानी जिन्दां के वहाँ पहुँचने तथा सिक्खों की नैपाल की पल्टनों में नौकर होने के कारण सिक्खों का नैपाल में आना जाना हो गया था। महाराणा जंगबहादुर सन् १८५७ के क्रान्ति के समय में अपनी फौजें तराई में ले आया था, परन्तु जब उसने यह देखा कि हिन्दुस्तानी विद्रोहियों की योजना बिखरी हुई सी है, तो वह अंग्रेजों के साथ हो गया तथा नैपाल को वापिस जाते हुए लखनऊ की लूट भी साथ ही ले गया।

सन् १८५७ में अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़े गये स्वतंत्रता युद्ध के पश्चात्

नाना साहिब, तांतिया टोपे, नवाब अब्दुल मजीद खाँ लखनऊ वाला, बाबू कोयर सिंह, बाबू बन्धूसिंह तथा अन्य बहुत से भारतीय भाग कर नैपाल की सीमा में चले गये थे। महाराणा जंगबहादुर ने सबका स्वागत किया। नानासाहिब की महारानी लक्ष्मी के रहने के लिये पृथक् महल दे दिया तथा राशन लगा दिया। अंग्रेज़ों ने महाराणा जंगबहादुर पर इन विद्रोहियों को उनके हवाले करने के लिये अत्यन्त ज़ोर दिया, परन्तु जंगबहादुर ने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया। जंगबहादुर का विचार था कि १८५७ की सहायता के बदले में अंग्रेज़ नैपाल राज्य का वह प्रदेश जो उन्होंने सन् १८१६ के युद्ध के पश्चात् सागोली की संधि के अनुसार छीन लिया था वापिस कर देंगे, परन्तु जंगबहादुर के बार बार मांग करने पर भी अंग्रेज़ों ने इस विषय में बात चीत करने से इनकार कर दिया। इसलिये जंगवहादुर भी यद्यपि ऊपर से अंग्रेजों के साथ संधि ही रखता था, परन्तु हृदय से सदा अपने दाँव पर रहता था।

१८५७ के विद्रोह के समय लखनऊ में बंगाल रेजिमेन्ट के पंजाबी हवलदार नन्दराम राजपूत ने अपनी पलटन को अंग्रेजों के विरुद्ध खड़े करने तथा अंग्रेज़ अफसरों को मारने का सराहनीय काम किया था, इसलिये नन्दराम को अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़ने वाले सैनिक "जरनैल" के नाम से पुकारने लगे थे। यह भी भागकर नैपाल चला गया था। वह बहुत ही वीर तथा जोड़ तोड़ को समझने वाला मनुष्य था। नामधारी किशनसिंह उपनाम हरीसिंह १८६८ में नन्दराम को जा मिला। यह वही किशनसिंह अथवा हरीसिंह था जो राजासिंह तरॉडीवाले के साथ वेदान्ती जी को जम्मू में मिलता रहता था। जरनैल नन्दराम तथा हरीसिंह इकट्ठे ही रहने लगे। ये दोनों भूटान के देवराजा की ओर से महाराणा जंगबहादुर के नाम आवश्यक सैनिक सहायता लेने देने का सन्देश लेकर नैपाल पहुँचे। इन्हीं दिनों में महाराणा जंगबहादुर के कुछ आदमी काश्मीर भी आये। अंग्रेज शासकों को जब इनके काश्मीर आने का पता चला तो वह बहुत घबराये।

महाराणा जंगबहादुर प्रत्येक उस भारतीय के साथ जो अंग्रेज़ों के विरुद्ध हो, निजी सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था। पंजाब सरकार ने किशनसिंह नामधारी के एक क़त्ल के मुकदमे में वारंट जारी कर दिये थे। यह वारंट नैपाल के रेज़ीडेन्ट के पास पहुँचाये गये, परन्तु जंगबहादुर ऐसे लोगों को लेने देने की बात अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट से कदापि नहीं किया करता था।

गुरु रामसिंह जी का नाम सुनकर जंगबहादुर ने उनसे सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा प्रगट की। उसका सन्देश पहुँचने पर गुरुजी ने दो प्रसिद्ध तथा सुघड़

नामधारी सूबों को एक जोड़ा खच्चरों का तथा दो भैंसें भेंट के रूप में देकर चार नामधारी स्वयंसेवकों के साथ नैपाल को भेज दिया ।

नैपाल पहुँचने पर कृपालसिंह ने नामधारियों का परिचय जंगबहादुर के पुत्र युवराज जनरल बबरजंग से करवाया । युवराज बबरजंग ने इनको अपने पिता महाराणा जंगबहादुर के सामने प्रस्तुत किया । सौगातों के बदले गुरु रामसिंह जी के लिये महाराजा तीनसरकार की ओर से ५००) रुपये नक़द, एक कस्तूरी के नाफों से गुंथी सोने की माला, एक दोशाला, एक तिब्बती घोड़ा तथा दो खोखरियां सौगात के तौर पर भेजी गईं ।

अंग्रेज़ी सरकार को कूकों के नैपाल जाने से अत्यन्त शंका पैदा हो गई थी । इसलिये अंग्रेज़ शासक अपने दूत नैपाल भेजते ही रहते थे । सन् १८७१ में काशीपुर वाले राजा शिवराजसिंह को नैपाल भेजा गया, जिसने आकर रिपोर्ट दी कि "बातचीत में महाराणा जंगबहादुर ने अमृतसर के बूचड़ों के घात का उल्लेख किया है । कृपालसिंह भी उसको मिला है तथा उसने उसके साथ बातें भी की हैं, परन्तु किशनसिंह का कुछ पता नहीं लगा ।" राजा साहब ने यह भी बताया कि उसने जंगबहादुर को अंग्रेज़ों से मित्रता स्थापित करने को भी कहा था ।

नैपाल में अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट मि० लारेन्स किसी न किसी ढंग से महाराजा जंगबहादुर और नामधारियों की बातचीत का पता चलाने के यत्नों में लगा रहता था । एक दिन जंगबहादुर ने बातचीत करते हुए उसे बताया कि उसकी सूचनानुसार पंजाब में तीन लाख कूके हैं । नैपाल की सेना में कूकों के भरती होने के विषय में जंगबहादुर ने रेज़ीडेन्ट को यह कह कर टाल दिया, कि वह गोरखों के अतिरिक्त किसी और को अपनी सेना में नहीं रखता । रेज़ीडेन्ट को जंगबहादुर ने यह भी बताया कि नामधारी अंग्रेजी शासन के कट्टर विरोधी हैं तथा समय आने पर वह अंग्रेज़ों के विरुद्ध अवश्य खड़े हो जावेंगे ।

पंजाब पर अंग्रेज शासकों का अधिकार

गोवध की स्वतन्त्रता

मुसलमानों और हिन्दू-सिक्खों में बैर भावना का बीज बोना

अमृतसर तथा रायकोट की घटनाएं

सन् १८४५-४६ के युद्ध में लाहौर दरबार की सेनाओं की पराजय होने के पश्चात् मार्च १८४६ को भरोवाल के स्थान पर अंग्रेज़ अधिकारियों और लाहौर दरबार के मध्य एक सन्धि हुई, इसके अनुसार ब्यास नदी से नीचे का समस्त प्रदेश जब्त करके अंग्रेज़ों ने अपने राज्य में समाविष्ट कर लिया। महाराजा दलीपसिंह राजगद्दी के मालिक माने गए और उनकी माता महारानी जिन्दां राज्य की Regent नियुक्त हुईं। लालसिंह मन्त्री बने और तेजसिंह सेनापति। ये दोनों न सिख थे और न ही पंजाबी। लाहौर दरबार में अंग्रेज़ दूत नियुक्त किया गया। सन्धि के अनुसार अंग्रेज़ी फौजों ने लाहौर के किले में अपने डेरे डाल दिए।

जीत होने पर अंग्रेज़ों ने युद्ध के कर की मांग की। युद्ध का कर एक करोड़ रुपया लगाया गया। सरकारी कोष बिल्कुल खाली था, इसलिये काश्मीर का प्रदेश महाराज गुलाबसिंह डोगरा को इस तावान की रक़म देने के बदले में बेच दिया गया। गुलाबसिंह ने जम्मू काश्मीर की नई रियासत स्थापित कर ली। इसका सीधा सम्बन्ध अंग्रेजी शासन से रक्खा गया। लाखों माताओं के लालों के बलिदान देकर बनाये हुये पहिले स्वतंत्र पंजाबी राज्य को स्वार्थी नेताओं ने इस तरह बरबाद किया कि

महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के बारह वर्ष पश्चात् उसके वंश में से कोई एक भी पंजाब में उपस्थित नहीं था।

युद्ध के परिणाम स्वरूप एक अंग्रेज रेज़ीडेन्ट लाहौर में रहने लगा। रेजीडेन्ट के सम्बंध में उस समय में यह विचार प्रचलित था, कि जहां एक अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट बैठा हो तो समझ लो कि वहां ५० हजार संख्या में अंग्रेज फौज बैठी है। सिंहासन का स्वामी महाराजा दिलीप सिंह अनुभवहीन था। लाहौर दरबार के अफ़सर रेजीडेन्ट के सम्मुख आँख उठाकर नहीं देख सकते थे। शासन के छोटे बड़े कार्यों में रेजीडेन्ट हस्तक्षेप करता था। युद्ध में पराजय होने के पश्चात् भी दरबारियों में पारस्परिक दलबन्दी, एक दूसरे से द्वेष तथा बैर उसी प्रकार विद्यमान थे।

२४ मार्च सन् १८४७ को लाहौर के रेजीडेन्ट मि० हेनरी एम-लारेंस ने गवर्नर जनरल का यह हुक्म जारी किया कि 'अंग्रेज़ों की प्रजा में से कोई भी मनुष्य दरबार साहब अमृतसर अथवा उसकी परिक्रमा में जूती पहन कर नहीं जा सकेगा।' इसमें यह भी लिखा था कि अमृतसर में गोवध नहीं किया जावेगा। तांबे की चादर पर यह आदेश अंकित करवाकर दरबारसाहिब की ड्योढ़ी पर लगाया गया।

लाहौर के सिंहासन पर सिक्ख महाराजा के होते हुए ऐसा आदेश निकालने की आवश्यकता क्यों हुई? कौन लोग थे जो दरबारसाहब में जूतों के साथ चले जाते थे? अमृतसर में गौवध कौन करते थे तथा क्यों करते थे? इन बातों की अधिक खोज करने की आवश्यकता है। अग्रेज़ी लिपि में तांबे की चादर पर लिखा हुआ यह आदेश आजकल भी दरबारसाहिब अमृतसर के तोशाखाना में स्थित है।

सिक्खों तथा अग्रेज़ों में मुलतान, चेलियाँवाला तथा गुजरात की लड़ाइयों के पश्चात अग्रेज़ों ने अनुभवहीन महाराजा दिलीपसिंह को लाहौर दरबार के सिंहासन से उतारकर पंजाब को अपने भारतीय साम्राज्य में मिला लिया। २९ मार्च १८४९ को किले में एक दरबार करके मि० इलियट ने यह घोषणा कर दी कि लाहौर दरबार की सेनायें तोड़ दी गई हैं और अंग्रेज़ों की सेनाओं ने पंजाब की छावनियों में आकर उन पर अधिकार कर लिया है।

अंग्रेज़ों की सेनाओं में अंग्रेज सिपाही गोमांस खाते थे, इसलिये अंग्रेज़ी फौजों के आने से लगभग सवा महीने पश्चात ही भारत सरकार की सम्मति से पंजाब के

बोर्डआफ-एडमिनिस्ट्रेशन के गश्ती पत्र नं० ३ दिनांक ५ मई १८४६ के अनुसार पंजाब में मांस भक्षण के लिये गोवध की आज्ञा दे दी गई। लाहौर के कमिश्नर मि० आर० मिन्टगुमरी के पत्र नम्बर १२ दिनांक १० मई १८४६ के अनुसार इस आदेश के पालन करने की सूचना हुई। कई ज़िलों के अंग्रेज डिप्टी कमिश्नरों ने इस हुक्म के सम्बन्ध में अधिक तथा स्पष्ट सूचनायें माँगीं। मेजर हरबर्ट एडवर्डज़ ने मुल्तान के असिस्टेन्ट कमिश्नर लेफ़्टीनेन्ट जेम्ज को लिखा, "किसी शर्त पर भी नगरों तथा कस्बों की सीमाओं के अन्दर गौमांस को दुकानों में रखकर न बेचा जावे। माँस के लिये गोवध, शहर से बाहर ही किया जावे। यदि मुसलमान जान बूझकर खुल्लम खुल्ला अपने हिन्दू पड़ोसियों के दिल दुखाने के लिये ऐसा करें तो उन्हें कड़े दंड दिये जावें। ऐसे कड़े प्रतिबन्ध न लगने का परिणाम यह होगा कि मुसलमान एक ऐसे स्वाधिकार का जिससे वे चिरकाल से वंचित हैं, अनुचित प्रयोग करेंगे, तथा फिर हमें हिन्दुओं और सिक्खों को जो कल ही पंजाव के शासक थे, मुसलमानों के हाथों होनेवाले ऐसे निरादर से बचाना पड़ेगा।"

२० मई १८४९ को गवर्नर जनरल ने एक सरकारी हुक्म जारी किया जो इस प्रकार था :—

"No one should be allowed to interfere with the practice by his neighbour's of customs which that neighbour's religion either enjoins or permits."

अर्थात् "किसी व्यक्ति को दूसरे पड़ोसी की धार्मिक मर्यादा अथवा जीवन ढंग में रुकावट डालने की आज्ञा तथा स्वाधीनता नहीं दी जावेगी।"

इस घोषणा के अनुसार पंजाब में मुसलमानों तथा ईसाइयों के लिए गोवध की बिलकुल आज़ादी हो गई। पंजाब के बोर्ड आफ़ एडमनिस्ट्रेशन (प्रशासन मंडल) ने इस आज्ञा के अनुसार इस प्रकार की सूचनायें जारी कीं (१) गोवध के लिये हर नगर तथा कस्बे की सीमा से बाहर एक विशेष स्थान निश्चित किया जावे। (२) शहर अथवा कस्बे की सीमा में गौमाँस बेचने के लिये कोई दुकान न खोली जावे।"

अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर एम० सी० सान्डर्स नें राय तख्तमल तथा अन्य हिन्दू पंचों की सम्मति से शहर की सीमा से दूर एक स्थान गौवध के लिये चुना। इसके साथ ही बूचड़ों को निम्नलिखित सूचनाओं के पालन करने का आदेश दिया—(१) गोवध एक विषेश स्थान में चारदीवारी के अन्दर किया जावे, (२) कोई बूचड़ गौमाँस को बेचने के लिये

राष्ट्रपति श्री डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी का एक लेख

सन् १६३५—

श्री गुरु रामसिंह जी स्वतन्त्रता को भी धर्म का आवश्यक अंग समझते थे। नामधारियों का संगठन बहुत शक्तिशाली हो गया था। हमारे देश में महात्मा गाँधी जी ने जो असहयोग इतने ज़ोर से चलाया, उसको गुरु रामसिंह जी ने प्रायः पचास वर्ष पूर्व ही नामधारियों में प्रचारित किया था। उनके सिद्धान्तों में पाँच वस्तुएँ हैं—

(१) सरकारी नौकरी का बहिष्कार,

(२) सरकारी स्कूलों का बहिष्कार,

(३) सरकारी अदालतों का बहिष्कार,

(४) विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार,

(५) ऐसे कानून मानने से इन्कार, जो अपनी आत्मा के विरुद्ध हैं।

अखबार सतिजुग, बसन्त अंक

१० माघ १९९२

श्री नेहरू जी की ओर से गुरु रामसिंह जी की सेवा में श्रद्धांजली

गुरू रामसिंह जी ने असहयोग और देश के लिए बलिदान करने की लहर चला कर देश भक्तों को जो मार्ग दिखलाया है, अगर सारा देश उसको समझले तो थोड़े दिनों में ही अपनी गिनती स्वतन्त्र देशों में करवा सकता है। गुलाम तो उसको कोई रख ही नहीं सकता। इस लहर को अच्छी तरह समझने का फल यही है कि प्रत्येक हिन्दुस्तानी देश के सामूहिक संगठन कांग्रेस में सम्मिलित हो जाये और अपनी सेवा उसे सौंप कर उसकी शक्ति को बढ़ाये। ७० साल पहले देश की स्वतन्त्रता के लिए यह शान्तिमय आन्दोलन जितना प्रभावशाली था, आज भी वह उतना ही नया और बलवान् है।

सतिजुग

२२ माघ विक्रमी सम्वत १९९४

शहर में नहीं ले जा सकता, यदि कोई एसा करेगा तो उसको दंड दिया जावेगा, (३) गोमांस खाने वाले तथा खरीदने वाले स्वयं बूचड़खाने से माँस खरीदेंगे और उसे कपड़े में लपेटकर अपने घरों में लायेंगे। ऐसा करने वाले किसी प्रकार भी हिन्दुओं के हृदय दु:खी नहीं करेंगे।

इस आज्ञानुसार शहर में गौमाँस बेचने के लिये कोई दुकान नहीं खोली जा सकती थी तथा न ही कोई व्यक्ति गोमांस को टोकरी आदि में रखकर शहर में बेच सकता था।

इस समय अमृतसर नगर में हिन्दुओं तथा मुसलमानों की जनसंख्या समान थी। सिक्ख केवल आटे में नमक बराबर ही थे। केशाधारी सिक्ख या तो कुछ भाटड़े थे या अरोड़े दुकानदार; शेष गुरुद्वारों के महन्त तथा पुजारी थे। रामगढ़िया सरदारों के साथ थोड़े से बढ़ई और लोहार-सिक्ख जीवकार्जन के लिये गांवों से उठकर नगर में बसे हुये थे।

बूचड़खाना खुलने के पश्चात् अमृतसर के बड़े बड़े जागीरदार धनाढ्य साहूकार, व्यापारी, हिन्दू तथा सिक्ख रईस, अंग्रेज माई बाप की हर बात में हाँ मिलाकर प्रशंसा प्राप्त करने में अपना मान समझते थे, किंतु आम जनता बधगृह को सिक्ख गुरुओं के कर कमलों से बनी हुई नगरी के माथे पर एक महाकलंक का टीका समझती थी। धनवान् और निर्धन के धर्म, रीतिरिवाज़ और चालचलन में धरती आकाश के समान अन्तर होता है। निर्धन एवं पुरुषार्थी कभी भी धर्म की हानि नहीं देख सकता। यदि ऐसा हो, तो रोटी कमाने वाला हाथ तलवार पर जा अटकता है तथा धर्म विघातक को मार कर स्वयं मर जाना ही अपना धर्म समझता है।

अमृतसर की मध्य बर्ग की हिन्दू-सिक्ख जनता के हृदय में बूचड़खाना एक माँसखोर फोड़े की भाँति दुखता था। दीवाली और बैसाखी के मेलों के मौकों पर जब बाहर के ग्रामीण सिक्ख, जाट, बढ़ई आदि शहर में आकर यहाँ के वधगृह की बात सुनते तो वे बहुत ही दु:खी होते, परन्तु वे विवश थे, लाचार थे कुछ भी नहीं कर सकते थे। न ही कोई नेता था तथा न ही सहारा देने वाला। पंजाब को अंग्रेजी शासन में सम्मिलित करने के पश्चात् बिना लायसेंस के किसी प्रकार का शस्त्र रखना जुर्म घोषित कर दिया गया था। सिक्खों का धार्मिक चिन्ह कृपाण अथवा तलवार भी इसी में शामिल थी। अंग्रेजी सरकार की ओर से गुरुद्वारों के नियुक्त किये गये संरक्षकों तथा तख्तों के पुजारियों ने तो हर समय पहनने वाली कृपाण की लम्बाई केवल तीन इंच बतलाकर अंग्रेज़ माई

बाप की प्रसन्नता प्राप्त कर ली थी। पवित्र नगरी में खुल्लम खुल्ला गोवध होते देखकर ग्रामीण लोग आह भरकर चुप हो जाते।

समय व्यतीत होता गया, अंग्रजों न पंजाब को भली भांति अपने अधिकार में कर लिया। दीवान मूलराज मुलतान, राजा चतुरसिंह अटारी, राजा शेर सिंघ अटारी, राजा सूरतसिंह मजीठिया, सरदार लालसिंह मुराड़िया, दीवान बूटा सिंह आदि नेताओं पर सिक्खों की दूसरी लड़ाई में भाग लेने के अपराध में राजनैतिक मुकद्दमे चलाये गये तथा उन्हें देश निर्वासन का दण्ड दे दिया गया था। २१ दिसम्बर १८४९ को महाराजा दिलीपसिंह को पंजाब से देश निर्वासित करके फतेहपुर सीकरी पहुँचा दिया गया। मार्च १८५३ में अनुभवहीन दलीपसिंह को प्रेरित करके उसके केश मुंड़वा दिये गये। अंग्रेज शासकों ने उसे अपने ईसाई धर्म में दीक्षित कर लिया। अप्रैल १८५४ में महाराजा दिलीपसिंह को इंग्लैंड भेज दिया गया।

गोवध की खुली आज्ञा होने के पश्चात् पंजाब में किस प्रकार की परिस्थितियाँ आईं, इनकी खोज करने की अभी आवश्यकता है। अमृतसर नगर के हिन्दू और मुसलमानों के दिलों में एक दूसरे के विरुद्ध शंका, द्वेष तथा विरोध के भाव अवश्य आ गये। अंग्रेजों की विदेशी शासन की राजनीति का सबसे बड़ा शस्त्र था "आपस में लड़ाओ और राज्य करो"। शहर की जनता में शत्रुता की चिन्गारियाँ प्रज्ज्वलित होनी आरंभ हो गईं। ७ मई १८५६ को खुला गौमाँस वेचने के विषय में एक मुकद्दमा मि० एफ० कपर के सामने पेश हुआ।

बधगृहों के खुलने से पंजाब में कच्चे चमड़े का व्यापार खूब चला। उत्तरी भारत में अमृतसर का नगर चमड़े की सबसे बड़ी मण्डी बन गया। इंग्लैंड की चमड़े का व्यापार करने वाली कम्पनियों ने अमृतसर में अपने एजेन्ट नियुक्त कर दिये। रोगी अथवा वृद्धावस्था के कारण मरे हुए जानवरों के चमड़े तथा जीवित पशुओं को मार कर उतारे हुए चमड़े के मूल्य में बहुत अन्तर होता है। एक वर्ष से कम उम्र के बछड़े का चमड़ा तथा हल में जोतने से पहिले के बछड़े का चमड़ा विशेष कामों के लिये प्रयोग में लाया जाता है तथा अधिक मूल्य देता है। इंग्लैंड की व्यापारिक फर्में हिन्दुस्तानी पशुओं का कच्चा चमड़ा यहां से ले जाकर कुछ तो यूरोपीय देशों की मंडियों में बेच देतीं तथा शेष अपने कारखानों में रंगकर लाभ कमातीं। अमृतसर में मुसलमान शेखों ने व्यापारिक फर्में खोल लीं तथा बूचड़ों ने धड़ाधड़ जवान गायें, बैल, बछड़े, वृद्ध बैल तथा वृद्ध गायें मारनी आरम्भ कर दीं। गाय तथा बछड़े का चमड़ा भैंस के चमड़े की अपेक्षा मँहगा बिकता

है। इनका मांस भी भैंस तथा भैंस के बच्चे के माँस की अपेक्षा अधिक पसन्द किया जाता है। बधिक लाभ कमाने के लिये गाय, बछड़े तथा बैल का ही हलाल करते थे। अंग्रेजी शासकों ने प्रत्येक वधगृह में वध किये जाने वाले पशुओं की संख्या तथा उनकी अवस्था पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाये थे। अनुमान है कि वधगृह में मरे हुए पशुओं का चमड़ा, माँस, खुर, सींगों आदि का मूल्य वास्तविक मूल्य की अपेक्षा कम से कम दुगुना होता है। बकरे के माँस से गोमाँस केवल एक तिहाई कम मूल्य पर बिकता है।

थोड़े ही समय में अमृतसर मुसलमान बूचड़ों और चमड़े के मुसलमान व्यापारियों का एक बहुत बड़ा अड्डा बन गया।

नगर में मजदूरी करने वाले काश्मीरियों और गरीब मुसलमानों पर भी इसका प्रभाव पड़ा और वे सभी सस्ता गोमांस खाने लगे। दुर्भाग्यवश इन वर्षों में लगातार वर्षा न हुई। आर्थिक संकट आये और सभी चीज़ों का भाव चढ़ गय। अनाज खरीदने के लिये किसान लोगों ने ढोर बेचने आरम्भ किये। गांवों में ढोर सस्ते हो गये। बूचड़ों तथा ठेकेदारों को असीम लाभ होने लगा। अमृतसर नगर में गौमाँस की खपत बहुत बढ गई। तथा ६० प्रतिशत मुसलमानों के घर गौमाँस पकने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि अमृतसर, गुरुदासपुर तथा लाहौर के ज़िलों में अच्छी जाति की दूध देने वाली गाएं तथा जुतने वाले बैल मिलने बन्द हो गये। फलतः गांवों के जाट सिक्ख बैलों के स्थान पर भैंसे हलों में जोतने लगे।

गुरु की नगरी अमृतसर में बधगृह खुले को १४ वर्ष हो गये थे। किसी भी प्रसिद्ध हिन्दू अथवा सिक्ख ने इसके विरुद्ध आवाज़ नहीं उठाई थी। श्रमिक-निर्धन हिन्दू तथा सिक्ख उन मुहल्लों में रहते थे जहाँ मुसलमान प्रतिदिन गौमाँस पकाते थे तथा जूटी हड्डियाँ कूड़े में फेंक देते थे। कौए तथा चीलें इन हड्डियों को उठाकर हिन्दू तथा सिक्ख पड़ोसियों के घरों की मुंडेरों पर जा बैठती थीं। नोचकर पंक्षी हड्डियों को वहीं छोड़ जाते और इस प्रकार मुसलमानों के पड़ोस में रहने वाले निर्धन हिन्दू सिक्खों के घर गाय की हड्डियों से भ्रष्ट हुये रहते थे। दूसरी ओर शहर के मुसलमानों के हौसले बहुत ही बढ़े हुये थे, क्योंकि गौभक्षक अंग्रेज शासक इस विषय में सदा ही मुसलमानों का पक्ष लेते थे। सारे मुसलमान एक थे तथा हिन्दू, सिक्ख बिखरे हुये। पुरानी कहावत है, "कि १०० मुसलमान संगठित होकर एक हुक्के पर इकट्ठे बैठ सकते हैं, परन्तु दो हिन्दू अथवा दो सिक्ख नदी पार करने के लिये एक नौका में इकट्ठे चढ़ना पसंद नहीं करते।"

पहले पहले मुसलमान बधिकों ने गोमाँस शहर में लाकर छुप छुप कर

बेचना आरंभ किया, क्योंकि इतने अधिक ग्राहक शहर से बाहर जाकर बधगृह से माँस नहीं ला सकते थे । इसके पश्चात् मुसलमानों के मुहल्लों में विशेष स्थानों पर गोमाँस बिकने लगा । धीरे-धीरे मुसलमानों के हौसले इतने बढ़े कि वह गोमाँस को टोकरों में डाल कर बेचने लगे। गली-मुहल्लों में, आवाज़ें लगाकर बेचते तथा कई बार हिन्दुओं के मुहल्लों में टोकरा उठा कर फिरते हुये, उन मुहल्ले में रहने वाले एक आध मुसलमान को गोमाँस बेच जाते।

मई १८६३ में एक मुसलमान हिन्दुओं के मुहल्ले में गौमाँस बेचता पकड़ा गया । यह मुकद्दमा दो आनरेरी मैजिस्ट्रेटों के सामने आया, जिनमें से एक हिन्दू तथा दूसरा मुसलमान था । दोनों मैजिस्ट्रेटों ने उसको अपराधी सिद्ध करके ३ महीने की कैद तथा ५०)रु० जुर्माना का दंड दे कर मिसल डिप्टी कमिश्नर के पास भेज दी । मिसल में मजिस्ट्रेटों ने यह भी लिखा, कि नगर में गौमाँस बेचने की आज्ञा कदापि नहीं है और न ही ऐसा पहिले कभी हुआ है । मेजर फॉरिंगटन ने इस मुकद्दमे का रूप ही बदल दिया तथा लिख दिया कि इस प्रकार का कोई आदेश अथवा सूचना दफ्तर के रिकार्ड (कागजों)में नहीं मिली। जुडीशल कमिश्नर ने २९ जून १८६३ को अपील का फैसला सुनाते हुए दोषी को बरी कर दिया तथा निर्णय का नोट लिख दिया कि "न्याय की सम्मति के अनुसार नगर अमृतसर में गोमाँस का बेचना बन्द नहीं किया जा सकता। यदि पहिले कभी ऐसा आदेश दिया गया है तो वह स्थानीय अथवा अस्थायी होगा, उसकी कानूनी हैसियत कुछ नहीं हो सकती। यह दलीलें देकर उस मुसलमान को साफ बरी कर दिया गया। कमिश्नर तथा जुडीशियल कमिश्नर ने यह सब कुछ स्वेच्छाचार ही किया था तथा पंजाब सरकार से कोई स्वीकृति अथवा सम्मति नहीं ली गई थी ।

मुसलमान वधिकों तथा गोमाँस बचने वालों ने इस मुकद्दमें के फैसले वाले हुक्म से लाभ उठाया। गोमाँस समस्त शहर में लाया जाने लगा तथा टोकरों में डाल कर हिन्दू बहुसंख्या वाले मुहल्लों में भी आवाजें लगाकर मुसलमान ग्राहकों को बेचा जाने लगा । बकरे का मांस बेचने वाले मुसलमान कसाई नफा कमाने के लिये कई बार गौमाँस बकरे के माँस में मिलाकर हिन्दू ग्राहकों को बेच देते । उस समय शहर में सिक्ख झटकइयों की दुकानें कम थीं तथा बहुत से हिन्दू और सिक्ख मुसलमान कसाइयों की दुकानों से ही हलाली मांस खरीद कर खा लेते थे। आजकल भी शहरों में बसने वाले हिन्दू, मुसलमानों की दुकानों से हलाली

मांस खरीद कर खा जाते हैं ।

नवम्बर १८६४ में शहर के हिन्दू और मुसलमानों में शहर के अंदर गौमाँस बेचने के प्रश्न पर फिर तनातनी बढ़ी । इस मुकद्दमे की मिसिल अभी तक लेखक ने नहीं देखी । सन् १८६९ में अमृतसर की म्युनिसपिल कमेटी ने पशु के कटे हुए सिर पर आठ आने टैक्स लगा दिया । अप्रैल १८७१ में गोहत्या तथा शहर में गोमांस बिकने पर हिन्दू मुसलमानों में फिर झगड़ा हो गया । ३ अप्रैल को हिन्दू-मुसलमानों में दंगा होते होते रह गया । मेजर डब्ल्यू० जी० डेविड ने होशियारी से अवसर को संभाल लिया । २४ अप्रैल वाले दिन भाई देवासिंह सेवक भाई वीरसिंह नौरंगवादी ने गाय की हड्डी दरबारसाहब के मन्दिर में श्री गुरुग्रन्थसाहब के सामने रख दी और दर्शकों को बतलाया कि यह हड्डी उसने पवित्र मन्दिर की सीमा में पड़ी हुई उठाई है । इस पर शहर के हिन्दू सिक्खों में बड़ा जोश फैल गया तथा साम्प्रदायिकता की दबी हुई आग फिर भड़क उठी । हिन्दुओं तथा सिक्खों की टोलियाँ इकट्ठी होने लगीं । रईसों को छोड़ कर शेष हिन्दू और सिक्ख जनता की ओर से यह माँग की गई कि गुरु की पवित्र नगरी में गौहत्या बिलकुल बन्द की जाये । छोटी-छोटी बातों की आड़ में शहर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे होने आरम्भ हो गये । सरदार मंगलसिंह रामगढ़िया ने भाई देवासिंह को पकड़वा दिया । भाई देवासिंह पर विधान की विशेष धाराओं के अनुसार मुकद्दमा चला तथा उसको १८७१ को तीन साल कड़ी कैद का आदेश हुआ । साथ ही एक मास की कोठरीबन्द कैद भी सुनाई गई ।

८ मई की रात को नगर में फिर शोर मच गया तथा हिन्दुओं ने तीन काश्मीरी मसलमानों को पीट दिया । दंगा छिड़ते ही जिला सुपरिटेंडेन्ट पुलिस मि० टर्टनस्मिथ घटनास्थल पर पहुँच गया और लोग तितर बितर हो गये । मि० स्मिथ को किसी ने ढेला दे मारा । इस समय हिन्दुस्तानी मजिस्ट्रेट अथवा म्युनिस्पल कमेटी के हिन्दुस्तानी सदस्यों में से कोई भी सुपरिटेंडेन्ट पुलिस के साथ नहीं था । इस बात का पता लगने पर डिप्टी कमिश्नर ने कमेटी के समस्त हिन्दुस्तानी सदस्यों तथा मुहल्लों के चौधरियों को अपनी कोठी पर बुलाया और सूचनायें दीं ।

दंगा करने के अपराध में ९ मई को २२ हिन्दुओं पर मुकद्दमा चलाया गया । मुकद्दमे का प्रभाव शहर के मध्य तथा निम्न वर्ग के हिंदुओं और सिक्खों पर पड़ा । उन्होंने मुसलमानों का व्यापारिक

बहिष्कार करना आरम्भ कर दिया। शहर के कसेरों (तांबे पीतल के बर्तन बनाने व बेचने वालों ने) मुसलमानों के घरों के टूटे-फूटे पीतल तांबे के वर्तन लेकर बदले में नये देने बन्द कर दिये। उनका विचार यह था कि मुसलमान इन बर्तनों में गोमांस पकाते हैं। साथ ही साथ नगर के हिन्दुओं ने आषाढ़ की निर्जला एकादशी के दिवस पर दान करने के लिये मिट्टी के घड़े तथा सुराहियाँ आदि मुसलमान कुम्हारों से खरीदने का भी बहिष्कार कर दिया।

६ मई को डिप्टी कमिश्नर ने शहर के सम्मानित व्यक्तियों की एक बैठक बुलाई। इसमें शहर के निवासी हिन्दू-मुससमानों को आपस में सम्बन्ध रखने तथा प्रेम से रहने की प्रेरणा की गई।

अमृतसर नगर की इस प्रकार बिगड़ी हुई स्थिति को देखकर पंजाब सरकार के अंग्रेज़ कर्मचारी दिल ही दिल में बहुत खुश थे, कि उनका हिन्दू मुसलमानों में फूट डालने के लिये चलाया हुआ तीर ठिकाने पर जा बैठा है, और गोहत्या के प्रश्न पर अब हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे की जान के दुश्मन बन चुके हैं। भड़कती हुई आग को हवा देने के लिए मेजर डब्ल्यू. जी. डेविस, कार्यवाहक कमिश्नर अमृतसर डिवीजन, २० मई १८७१ शनिवार वाले दिन अमृतसर पहुँच गया। इससे पहिले म्युनिसपल कमेटी की एक बैठक में हिन्दू और मुसलमान सदस्यों ने यह सम्मति दी थी कि अगले वर्ष से शहर के रहने वालों के हाथ गोमांस बेचने के लिये बूचड़खाने का ठेका बन्द कर दिया जावे। योरोपियन सदस्य इस मत पर बहुत दुखित हुये थे। डिप्टी कमिश्नर ने इस विषय पर दोबारा सोच विचार करने के लिये २२ मई को पुनः कमेटी की बैठक बुलाई हुई थी। कमिश्नर ने अमृतसर पहुँचते ही २२ तारीख की बैठक के लिये रास्ता साफ करने के लिए शहर के बड़े-बड़े धनवान् हिन्दू-सिक्ख नेताओं को अपने पास बुला कर समझाना आरम्भ किया।

२२ मई की बैठक में कमिश्नर ने अमृतसर नगर में गौहत्या के विषय पर स्वयं भाषण दिया। उसने बताया कि २४ मार्च १८४७ वाला आदेश जिसके द्वारा अमृतसर में गोहत्या बन्द की गई थी केवल उसी समय के लिये ही लागू किया गया था, जब तक पंजाब की हुकूमत महाराजा दलीपसिंह के नाम पर चलाई जा रही थी। सिक्ख राज्य म क्योंकि कोई गौहत्या नही होती थी, इसलिये अंग्रेजी सरकार ने भी सिक्ख महाराजा के सम्मान के लिए गौहत्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया था, परन्तु जब सिक्ख राज्य समाप्त हो गया तो पंजाब हिन्दुस्तान के अंग्रेज़ी राज्य का भाग बन

गया था। तब से यह प्रतिबन्ध सर्वथा हटा दिया गया था। उसने यह भी कहा कि गवर्नर जनरल की २० मई १८४९ की घोषणा में अंग्रेज़ी शासन का यह नियम बताया गया है कि 'किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्ति के धर्म में हस्तक्षेप करने की आज्ञा नहीं दी जावेगी।' इसी घोषणा अनुसार पंजाब के नगरों तथा कस्बों में बूचड़खाने खोले गये हैं। कमिश्नर ने अन्त में धमकी देते हुए कहा कि 'अमृतसर में बूचड़खाना हर हालत में जारी रहेगा। सरकार हिन्दुओं को मुसलमानों की ओर से जान बूझ कर दिल दुखाने वाली बातों से बचायेगी तथा हिन्दू-सिक्खों को भी दृढ़ता से गौहत्या के सम्बंध में दंगा अथवा झगड़ा खड़ा करने से रोकेगी। यदि हिन्दुओं सिक्खों की गौमांस को विक्री के सम्बंध में उचित शिकायतें अथवा मांगें हैं, तो वह ठीक ढंग से सरकार के पास पेश करें और सरकार उन पर विचार करके शिकायतों को दूर करने का यत्न करेगी।" कमिश्नर के इस भाषण का यह प्रभाव पड़ा कि नगरपालिका के मुसलमान सदस्य अंग्रेज़ सदस्यों से मिल गये। कुछ हिन्दू सदस्यों ने वोट ही न दिये और केवल थोड़े से हिन्दुओं ने इसके विरुद्ध वोट दिये। वधगृह के ठेके को जारी रखने का विचार पास कर दिया गया। सरकारी समर्थन तथा स्वीकृति होने पर मुसलमान बूचड़ों, मुसलमान ठेकेदारों तथा मुसलमान व्यापारियों ने गोवध का काम अधिक तेज़ी से आरम्भ कर दिया।

नगर की साधारण हिन्दू-सिक्ख जनता में इस प्रस्ताव के पास होने पर अत्यन्त क्रोध और जोश फैल गया। प्रस्ताव के पास होने के दिन से लेकर एक सप्ताह तक कमिश्नर तथा डिप्टी कमिश्नर नगर में चक्कर काटते रहे और प्रतिदिन देशी अफ़सरों, धनवानों तथा रईसों को बुला कर वधगृह के विषय में समझाते बुझाते रहे।

मुसल्मान कुम्हारों से निर्जला एकादशी के लिये घड़े व सुराहियाँ न खरीदने, तथा कसेरों का मुसलमान गाहकों को टूटे तांबे पीतल के बदले नये बर्तन न देने के आन्दोलन, बल पकड़ते गये। इस पर कमिश्नर ने सरदार हरचरनदास, ज्ञानी प्रदुम्मनसिंह तथा खाँ मुहम्मदशाह और नगर के अन्य अमीर पुरुषों को बुलाकर कहा, कि मुसलमानों से व्यापारिक असहयोग का आन्दोलन बन्द होना चाहिये। दूसरे दिन इन भद्र पुरुषों ने कमिश्नर साहिब को रिपोर्ट दी, कि "आली जनाब हुज़र वाला की कृपा दष्टि से सब कुछ ठीक हो गया है।" साथ ही साथ इन्होंने कमिश्नर के सम्मुख दो प्रण-पत्र भी ले जाकर

रक्खे । एक मुसलमान कुम्हारों तथा हिन्दुओं के मध्य, दूसरा हिन्दू कसेरों और मुसलमानों के मध्य। मगर अंग्रेज़ कमिश्नर तथा डिप्टीकमिश्नर ने हुकूमत के इन पुश्तैनी बूट चाटने वाले टोडियों की बातों पर विश्वास न किया और इनकी बातों की फिर तफ़तीश की।

३ जून को कमिश्नर ने टाऊनहाल में एक दरबार किया, जिसमें नगर के बड़े-बड़े लोग तथा मीरमुहल्ला बुलाये गये। कमिश्नर ने इस दरबार में एक लम्बा घोषणा पत्र पढ़ा जिसमें वधगृह के संम्बन्ध में सरकारी आदेशों तथा नीति की व्याख्या की गई थी।

४ जून तक कमिश्नर अमृतसर में रहा तथा इन दो सप्ताहों में कोई हिन्दू मुसलिम दंगा न उठा। कमिश्नर ने जाने से पहिले यह आदेश दिया कि बूचड़ों तथा इस पेशे से सम्बंधित लोगों को अच्छी तरह समझा दिया जाए कि उन्हें कोई ऐसा काम न करना चाहिये जिससे हिन्दू तथा सिक्खों के हृदय पीड़ित हो।

भाई देवासिंह के कैद होने, २२ हिन्दुओं पर मुकद्दमा चलने तथा कमिश्नर के दरबार में घोषणा करने पर कि "अमृतसर में गौवध कदापि बन्द नहीं किया जा सकता", हिन्दुओं और सिक्खों के मध्यवर्ग तथा निम्नश्रेणी के लोगों के हृदयों में यह बात भली भाँति बैठ गई, कि अंग्रेज़ शासक खुल्लमखुल्ला मुसलमानों की सहायता करने पर तुले हुये हैं। दो जून को एक बूचड़, जिसको नगर में गौमाँस बेचने के अपराध में तीन महीने की कैद हुई थी, अपील में बरी हो गया। इस पर मुसलमानों ने अंग्रेज़ शासकों के बल पर गप्पें उड़ानी आरंभ कर दीं कि शहर में खुल्लम खुल्ला गौमांस बेचने के लिये चार दूकानें खोलने की स्वीकृति मिलने वाली है और एक दुकान दरबारसाहबवाले घन्टाघर के पास ही होगी। इससे मुसलमानों के जीवट बढ़ गये तथा बूचड़ों ने खुले रूप में नगर में गौमाँस लाना आरम्भ कर दिया जहाँ से बेचने वाले टोकरें में रखकर गली मुहल्लों में बेचते फिरते। इससे गरीब हिन्दुओं और सिक्खों का नाक में दम आ गया।

धर्म हानि को हटाने के लिये निर्धनों की बाज़ी का अन्तिम दाव जान से होता है। शहर के रहने वाले शोर बहुत मचाते थे, बातों से पर्वत गिराते थे, तर्क से आकाश फाड़ते थे, परन्तु जब मरने मारने की बात आती थी तो जल पर बने हुये बुदबुदे की भांति अन्तर्ध्यान हो जाते थे। शहर के सिक्खों के नेता भाई प्रद्युम्नसिंह जी ज्ञानी थे, जो श्री दरबारसाहब के भीतर गुरु ग्रन्थसाहब की उपस्थिति में मदिरा पीकर

कथा किया करते थे । बाकी सब पेट पूजने वाले पुजारी, ग्रन्थी, अरदासिये, सरकारी जागीरदार तथा वेतन में हिस्सा लेने वाले नौकर । नगर में सिक्खों की संख्या बहुत ही कम थी तथा वह भी अरोड़ों की, जो दुकानदारी से उदरपूर्ति करते थे । बाबा फूलासिंह के बुर्जवाले पांच-सात निहंगसिंह भाँग में मस्त हर बात से उदासीन थे । कभी-कभी कोई निहंग-सिंह एक आध मुसलमान बूचड़ को तुरकड़ा कहकर लड़ाई झगड़ा कर लेता था, परन्तु गुरु की नगरी में से गोहत्या का कलंक हटाने के लिये बलिदान करने का साहस किसी को नहीं होता था । अंग्रेज़ शासकों की सख्तियों के होते हुये भी नामधारी आन्दोलन ज़ोरों पर चल रहा था, तथा १८७१ तक गाँवों में जाटों के लाखों कुटुम्ब अमृत छककर नामधारी तथा उनके हिमायती बन चुके थे । अमृतसर में गोवध होने से धर्म के अपमान की बात नामधारियों के हृदय में घूमने लगी थी । अंग्रेज़ी सरकार नामधारियों को अपना तीव्र वैरी समझती थी । सरकारी आदेशों के अनुसार नियुक्त किये गये गुरुद्वारों के संरक्षकों, महन्तों, पुजारियों तथा ज्ञानियों ने अंग्रेज़ शासकों की गुप्त आज्ञानुसार गुरुद्वारों में नामधारियों का प्रवेश करना बन्द करवा दिया था । इस समय केवल नामधारी सिक्खों का ही एक ऐसा दल था, जिसके सदस्य विदेशी शासकों तथा अंग्रेज़ों को अत्यधिक घृणा करते थे और भारत को इनकी दासता से स्वतंत्र कराने के प्रणों पर डटे हुये थे ।

अमृतसर में हिन्दुओं तथा सिक्खों की दुर्दशा हो रही थी । मुसलमानों तथा बूचड़ों ने इनका नाक में दम कर रक्खा था । नगर में कुछ नामधारी सिखों के घर भी थे । एक गरीब किरती भाई लहनासिंह बढ़ई नामधारी सूबा के घर गुरु की पवित्र नगरी के माथे से वधगृह के कुष्ट कलंक को दूर करने के विचार होने लगे । निश्चित हुआ कि शीश दिये जावें तथा सर्व प्रथम आक्रमण वधगृह के बूचड़ों पर ही किया जाय । जब से कमिश्नर ने खुले दरबार में बूचड़ों की पीठ ठोंकी थी तबसे उन्होंने नगर में ऊधम तथा भय फैला रक्खा था । रविवार वाले दिन आषाढ़ की संक्रान्त का मेला तथा स्नान भी आ गया । बाहर से कई नामधारी सिक्ख तथा उनके अन्य साथी भी पहुँच गये । बूचड़ों के अत्याचार देख तथा सुनकर सबको जोश आ गया । दस मिति से शहर वाले नामधारीसिंह बूचड़ों का घात करने के उपाय कर रहे थे । इस काम को पूरा करने के लिए वह तोप के चलने तथा नगर के द्वार बन्द होने से पहिले ही बाहर निकल जाते थे ।

परन्तु घात करने का अवसर नहीं मिलता था। १४ तथा १५ जून की रात को प्रातःकाल ही मंगल के दिन सिक्ख दीवारें फांद कर वधगृह के अन्दर प्रवेश कर गये और उन्होंने पीरा, जीवन शादी और अमामी चार बधिकों को उसी स्थान पर कत्ल कर दिया । कर्मदीन, इलाहीबक्श तथा खीबा इन तीनों को अधमरा करके बाहर निकल आये । यह तीनों बूचड़ पश्चात् बच गये । सिक्खों ने इस आक्रमण में परसे, गंडासे, तथा तलवारों का प्रयोग किया । कृपाण तथा तलवार रखने के लिये लायसेंस लेना पड़ता था । अमृतसर पुलिस लायन के सिपाही लालसिंह नामधारी ने पुलिस लायन में से तलवारें लाकर दीं । बूचड़ों को उनकी करतूतों का दंड देकर सिंह अपने ठिकानों को चले गये । इस आक्रमण में बीहलासिंह संन्धू नारली गाँव वाला, लहनासिंह लोपोके, फतहसिंह भाटिया अमृतसरका, मोहड़ेका हाकिमसिंह ब्राह्मण, अमृतसर का लहनासिंह बढ़ई, गाँव ठठ्ठा का झण्डासिंह जाट, चाहलाँ का लक्ष्मणसिंह, भरहाना का भगवानसिंह, सम्मिलित थे ।

बूचड़ों के कत्ल होने पर नगर के मुसलमानों के हृदयों में भय छा गया । डिप्टी कमिश्नर ने दोषियों को पकड़ने के लिये कड़े आदेश दिये । शहर के बड़े-बड़े लोगों को कहा गया कि वह दोषियों को पकड़वाने के यत्न करें । २४ जून तक पुलिस तथा तहसीलदार ने बहुत से आदमियों को शक में पकड़ा, परन्तु अपराधियों का कुछ पता न चला । सरकार ने यह सोचकर कि अमृतसर की पुलिस इस मुकद्दमें की छानबीन में सफल न हो सकेगी, पंजाब के सब से अधिक चालाक तथा सुप्रसिद्ध जासूस पुलिस अफसर मिस्टर क्रसटी को इसकी छानबीन के लिये भेजा । मि० क्रसटी २४ जून १८७१ को अमृतसर पहुँचा, उसने आते ही सन्देह में पकड़े हुए सब लोग छोड़ दिये । छानबीन करने के लिये होशियारपुर ज़िला की पुलिस के इन्सपेक्टर फज़लहुसेन, डोगरमल डिप्टी इन्सपैक्टर, अतरसिंह, सुर्जन सिंह तथा मैय्या सिंह तीन सारजेन्ट तथा आठ कान्सटेबिल अपने स्टाफ के लिये बुलाये । कोतवाली से पृथक् एक मकान लेकर इस स्टाफ ने छानबीन आरम्भ की और दोषियों का पता व निशान देने वाले को एक हज़ार रुपये इनाम देने की घोषणा की । राजा साहिबदयाल, सरदार मंगलसिंह रामगढ़िया, सरदार भगवानसिंह, राय मूलसिंह, खान मुहम्दशाह आदि से सम्बन्ध स्थापित करके उनसे हर प्रकार की सहायता के प्रण लिये ।

खान मुहम्मदशाह बहादुर को दिन रात यही चिन्ता थी, कि किसी

नेहरू जी का एक सन्देश

सतगुरू रामसिंह जी ने अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्रता दिलवाने के लिए आज से पौनी सदी पहले जो महान् गौरवशाली परिश्रम किया था, उसकी महत्ता से कोई भी हिन्दुस्तानी इन्कार नहीं कर सकता।

कांग्रेस ने आपके दिखाये हुए रास्ते को स्वीकार करके ही सफलतायें प्राप्त की हैं। लगभग ७४ वर्ष का समय बीतने पर भी वह कार्यक्रम पुराना नहीं हुआ, जिसको वास्तविक रूप देने के लिए आपको अधिक कठिनाइयां उठानी पड़ीं।

मुझे विश्वास है कि अगर समस्त सिक्ख लोग उसी मार्ग पर जो गुरूजी ने उनको दिखाया था, चल पड़ें तो हिन्दुस्तान के स्वतन्त्रता संग्राम में बहुत गर्मी पैदा हो जाय और आश्चर्य नहीं कि सिक्खों की आजमाई हुई वीरता के कारण इस गरिमाशाली देश की पराधीनता की जंजीरें बहुत जल्दी टूट जायें।

(सतयुग पत्रिका माघ सम्वत १९९५)

भारतीय स्वतन्त्रता के पुजारी "नेता सुभाषचन्द्र बोस" जी का कथन

"गुरु रामसिंह जी के स्थापित किये हुए आजादी के झण्डे के नीचे नामधारियों ने जो कुर्बानियां की हैं, हमारे देशवासियों को उन पर सदा गौरव रहेगा। अब फिर भारतवासियों के देश प्यार की परीक्षा होने वाली है। पौनी सदी से शान्तिमय असहयोग आन्दोलन का अनुभव रखने वाले नामधारी सिंहों से यह आशा की जाती है कि वे आजादी का झण्डा उठा कर सारे देश के आगे चलते हुए दिखाई देते रहेंगे और दूसरे देशवासियों को भी बलिदान देने के लिए उत्साहित करते रहेंगे।"

सतयुग माघ संवत १९९४ नामधारी पुस्तकालय, जीवन नगर।)

न किसी तरह उसके धर्म-भाई बूचड़ों के घातकों का पता चल जाय। उसने सरदार निहालसिंह आहलूवालिया के साथ परामर्श किया। निहालसिंह मदिरा पीने, कबाब खाने तथा वैश्या गमन में खान बहादुर का गहरा मित्र था। निहालसिंह दो और आदमियों गुरमुखसिंह तथा काहनसिंह को खान बहादुर के पास ले आया। यह विचार बनाया गया कि गुरमुखसिंह तथा काहनसिंह लोगों में यह बात उड़ा दें कि अमृतसर के बूचड़ों का घात करने वालों में वह भी सम्मिलित थे। खानबहादुर ने उन्हें सरकारी इनाम और इसके अतिरिक्त और धन भी देने का पक्का वचन दिया। परन्तु यह दोनों इस बात से भी डरते थे, कि यदि वह दूसरे शहरों में यह बात कहते हुए पकड़े गये, तो वहाँ को पुलिस उन्हें वास्तिविक दोषी समझकर कहीं जेल में न बन्द कर दे। इससे बचाने के लिये मि० क्रिस्टी ने उन्हें अपने हस्तलिखित गुप्त पत्र दिये, जिनका ऐसा समय आने पर वह प्रयोग कर सकते थे। फिरते फिराते वह कुछ समय पश्चात् अमृतसर लौट आये। उनके निशान देने पर लहनासिंह तथा रुढ़सिंह दो कूके पकड़े गये। इन दिनों में ही झन्डासिंह ठठ्ठेवाला भी संन्देह में पकड़ा गया, परन्तु मि० क्रिस्टी ने तीनों को ही छोड़ दिया।

मि० क्रिस्टी को एक सप्ताह तक अपराधियों का कुछ पता न चल सका। उसने नगर के सबसे बड़े हिन्दू बदमाश मोहरी को अपनी सहायता के लिये साथ मिला लिया। पुलिस के रोज़नामचों की तफतीस होने लगी। शहर के थाने में करीमबक्श तथा पीरबक्श दो पुलिस कान्सटेबिलों की २१ जून को लिखाई हुई निम्नलिखित रिपोर्ट निकली। "उन दोनों ने हीरा भाटड़ा को उस दिन बूचड़खाने के पास सन्देहास्पद स्थिति में फिरते देखा था।" इस रिपोर्ट के आधार पर हीरा भाटड़ा को मि० क्रिस्टी ने स्पेशल स्टाफ वाले निवासस्थान में २ जुलाई को बुला लिया। हीरा भाटड़ा किसी समय सरदार भगवानसिंह के पास नौकर रहा था। सरदार ने तत्काल कह दिया कि हीरा बदमाश है। घायल बूचड़ों ने हीरा को पहचानकर बयान दिये कि कत्ल से कई दिन पहिले यह वधगृह के पास हमारे साथ कुछ सन्दिग्ध बातें करता रहा था। हीरा को जब स्पेशल पुलिस ने अपने तरीकों से दुःख दिया तो वह ३ जौलाई को 'वादा मुआफ' गवाह बनकर शेष दोषियों के नाम बताने के लिये तयार हो गया। हीरे ने आहिये बदमाश का नाम ले दिया। आहिये की जब मरम्मत हुई तो उसने भी ७ जौलाई को अन्य दोषियों के नाम बताने के लिए हाँ कर दी। आहिये को भी 'वादा मुआफ'

गवाह बना लिया गया। इन दोनों ने मिलकर सेठ जैराम दलाल का नाम ले दिया। पुलिस ने सेठ जैराम के भी खूब मरम्मत की। उसे लाल मिर्चों तथा विष्ठा की धूनियाँ दीं। औंधा लटकाकर जूतों से उसके चूतड़ों की पिटाई की गई। उसकी गुदा में डण्डे दिये गये और लाल मिर्चें डाली गईं। कई दिन की कठिनाइयां सहन करने के पश्चात् उसने भी दस या १२ जौलाई को अपने आप को कत्ल के दोषियों का साथी मान लिया। अमृतसर का डिप्टी कमिश्नर मि० बर्च सेठ जैराम को वायदा मुआफ गवाह बनाने के पक्ष में नहीं था, परन्तु मि० क्रस्टी ने उच्च अफसरों से इसको वायदा मुआफ गवाह बनवा लिया। डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान मि० क्रस्टी के छानबीन करने के ढंगों को अच्छा नहीं समझते थे। बदमाश मोहरी मि० क्रस्टी की मूँछ का बाल बन गया था। नगर में धड़ाधड़ गिरफ्तारियाँ आरम्भ हो गई थीं। स्पेशल स्टाफ वालों ने एक बड़ा हौज़ बनवाकर उसमें मेहतरों से विष्ठा डलवा दिया था, जिस पर भी दोषी होने का शक पड़ता उसको ही इसमें खड़ा कर दिया जाता। सोने न दिया जाता। दिन रात खाट के इधर उधर टांगें चौड़ी करके खड़ा किया जाता तथा नाना प्रकार के दुःख दिये जाते। दोषी बनाये गये लोग इन अत्याचारों से डरते फांसी के रस्से से लटक कर एक ही बार मर जाने को अच्छा समझते। २० जौलाई तक मि० क्रस्टी ने अपनी छानबीन समाप्त कर दी।

२१ तारीख को इन तीन 'वायदा मुआफ' गवाहों को छोड़कर शहर अमृतसर के बारह आदमियों, सन्तराम, रामकिशन, मन्नासिंह निहंग, ज्वालासिंह, पन्नाजी, मूला, निहालसिंह, मैय्या, सुन्दरसिंह, भूपसिंह, टेका तथा शोभा का वधिकों की हत्या के मुकद्दमे में मजिस्ट्रेट के न्यायालय में चालान कर दिया गया। झूठे गवाह बनाये गये। शपथें दिलवा दिलवा कर गवाहियां दिलवाई गईं तथा मैजिस्ट्रेट साहब ने २५ जौलाई को दोषियों की मिसिल सम्पूर्ण करके डिप्टी कमिश्नर के पास भेज दी। २६ जौलाई को डिप्टी कमिश्नर ने यह मिसिल सेशनजज के पास फैसले के लिये भेजी।

इस मुकद्दमे के दिनों में ही १५ जौलाई को आधी रात के समय रायकोट जिला लुधियाना में वधगृह पर आक्रमण हुआ, जिसमें चार आदमी मारे गये तथा ७ अन्य बुरी तरह घायल हुये। अंग्रेज शासकों तथा अफसरों के हृदय त्रस्त हो गये तथा उन्होंने इस ज्वाला को प्रज्वलित हो उठने के पूर्व ही बुझाने के प्रबंध आरम्भ कर दिये। पंजाब के डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस ने लुधियाना पहुँचने के

पहिले ही यह निश्चय कर लिया था कि बधिकों की हत्यायें नामधारियों अथवा कूकों ने की हैं। लोगों के दिलों में हकूमत का दबदबा बिठाने के लिए २२ जौलाई को महाराजा पटियाला की सहायता से गांव पित्थो रियासत नाभा तथा मन्डी रियासत पटियाला से पकड़े गये सात कूकों पर २५ अथवा २६ जौलाई को बसियां की कोठी में मुकद्दमा चलाया गया। २७ जौलाई को सेशन जज ने अपराधियों को फांसी की सज़ा दी तथा एक अगस्त को भाई मस्तान सिंह, भाई गुरुमुखसिंह तथा भाई मंगलसिंह को वधगृह के पास रायकोट में फांसी दे दी गई। इस घटना का वृतान्त आगे दिया जा रहा है :--

अमृतसर के सेशन जज ने अभी तक मुकद्दमा सुनना भी आरम्भ नहीं किया था कि कर्नल बेली, डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस पंजाब लुधियाना से २७ जौलाई को एक तार डिप्टी कमिश्नर अमृतसर के नाम पहुंचा कि अमृतसर के बधिकों के घातकों का पता चल गया है तथा वह शीघ्र ही वायदा मुआफ गवाह को साथ लेकर अमृतसर आ रहा है। कर्नल बेली १५ जौलाई की रात से रायकोट में वधिकों की हत्या की छानबीन के सम्बंध में ज़िला लुधियाना में पहुंचा हुआ था। २ अगस्त को कर्नल बेली गुलाबसिंह 'वायदा मुआफ' गवाह को साथ लेकर अमृतसर पहुँच गया।

गुरु रामसिंह जी के पास इन मुकद्दमों के समाचार गाँव भैंणी में पहुँचते रहते थे। रायकोट वाले मुकद्दमे में उन्हें स्वयं बसीयां जाना पड़ा था जहाँ उन्होंने वायदामुआफ गवाह गुलाबसिंह के झूठ को नंगा कर दिया था। जब उन्होंने देखा कि अंग्रेज शासक बूचड़ों की हत्या के कारण निर्दोष मनुष्यों को ही फाँसी पर लटकाने लगे हैं तो उन्होंने आदेश दे दिया कि निर्दोष लोगों को फांसी से बचाने के लिये नामधारी अपने दोष को स्वीकार कर लें। इस पर भाई बीहलासिंह तथा उसके साथियों ने स्वयं न्यायालय में उपस्थित होकर अमृतसर वाली घटना के दोष को अपने सिर ले लिया। २ अगस्त से ७ अगस्त तक पुलिस ने मुकद्दमा तैयार करके मैजिस्ट्रेट को प्रस्तुत किया। मैजिस्ट्रेट ने गवाहियां लेकर बीहलासिंह सन्धू नारली, फतेहसिंह भाटड़ा दुकानदार अमृतसर, हाकिमसिंह पटवारी मोहड़ा, लहनासिंह पुत्र मुसद्दासिंह बढ़ई अमृतसर, लहनासिंह लोपोके को भारतीय दंड विधान की धारा ३०२ के अनुसार तथा लालसिंह, लहनासिंह को भारतीय दंड विधान को धारा १०६ तथा ३०२ अनुसार सैशन जज के पास चालान कर दिया। मेहरसिंह लोपोके, झन्डासिंह गांव ठठ्ठा तथा लक्ष्मणसिंह गांव चाहल

जिला गुरदासपुर तीनों को भगोड़े घोषित किया गया। मि० डब्ल्यू. जे. डेविस सैशन जज ने सरदार रणजोधसिंह, खांन गुलामकादिर तथा बालमुकन्द, तीन असेसरों की सम्मति से ३१ अगस्त १८७१ को बीहलासिंह जाट फतहसिंह भाटरा, हाकिमसिंह ब्राह्मण तथा लहनासिंह बढ़ई चारों नामधारियों को फांसी की सज़ाएँ दीं और लालसिंह तथा लहनासिंह पुत्र बुलाकासिंह दोनों को काले पानी की सजाएँ दीं।

६ अगस्त १८७१ को इन चारों प्राणदंड के प्राप्त मनुष्यों की मिसल पंजाब चीफ कोर्ट के जज मि० जे० एस० केम्पबैल के सामने आई। जज साहब ने प्राणदंड को उचित ठहराया। ११ सितम्बर को मि० सी. आर. लिन्डसे ने मि० कैम्पबैल के निर्णय का समर्थन कर दिया।

१५ सितम्बर १८७१ वाले दिन इन चारों नामधारियों को अमृतसर में रामबाग के एक विशाल वट के वृक्ष के साथ, फांसी का यन्त्र बांधकर, लोगों के सामन फांसियां दे दी गई। अप्रकाशित पुस्तक 'गुरुविलास' में इन फांसियों का वर्णन इस प्रकार किया हुआ है :—

"फाँसी वाले सिंहों को फिरंगी ने कहा जो कुछ खाना है सो खा लो। जिसको मिलना है मिल लो। सिंहों ने कहा, हमारा खाना परमात्मा, अकालपुरुष, का नाम है। मरने से हमें कोई भय नहीं, क्योंकि हमारे पूर्वजों ने धर्म हेतु शीश दिये हैं तथा सी तक नहीं की। इसी प्रकार हम शीश देंगे। सम्बंधी हमारा धर्म है। हम किसी को नहीं मिलना है। सुनकर फिरंगी चुप रहा, कोई उत्तर न जंचा। सिंहों ने अमृतसर सरोवर में स्नान करके, गुरु ग्रन्थसाहब का भोग डाला तो तत्काल सिपाहियों ने हुक्म आ सुनाया कि चलो। सिंह ढोलक बजा कर शब्द पढ़ते हुये चले :—

'तेरी शरण मेरे दीन दयाला, सुख सागर मेरे गुरु गोपाला।
करि कृपा नानक गुण गावे, राखो शर्म असाढ़ी जीऊ॥'

"उन्होंने बड़े सुन्दर ढंग से शब्द पढ़ा और चले। बीहलासिंह ने अरदास की और चले आये फाँसी वाले स्थान पर। सिंहों के मुखमण्डल शान्तिमान हो रहे थे। निश्चिन्त थे। उनके मन में मृत्यु का भय नहीं था, निर्भय शब्द पढ़ते हुये, फाँसी के तख्ते पर चढ़े। अन्तिम श्वासों की अरिदास की और कहा कि हे भगवान तेरे प्रताप से हम (फांसी के) तख्ते पर चढ़े हैं, बड़ी नेकनामी हुई है उच्च पद पाया है।" बड़े साहस वालों ने फाँसी वाले मेहतर को पास नहीं फटकन दिया। अपने हाथों रस्से गले में डाले। हंसों जैसा श्वेत पहनावा पहनकर सतश्रीअकाल बुलाई। पैरों के नीचे से पटरा खिचा। अन्तिम हिलोरा आया। प्राण पृथक हुये......फाँसी से मृतक शरीरों को उतार कर बाह

संस्कार किया गया......सन्मुख होकर शीश दिये हाथ नहीं की । शूरवीरों ने आगे ही पग धरे ।"

नामधारी सिक्खों के स्वयं ही अपराध को मान लेने पर मि० क्रास्टी का बहुत निरादर हुआ । लोग पुलिस के दिए कष्टों तथा अंग्रेजी शासन के न्याय के सम्बन्ध में कड़ी बातें कहने लगे । नगर में बहुत शोर मचा । नामधारी सिंहों तथा गुरु रामसिंहजी की जयजयकार होने लगी। गुप्तचरों तथा 'वायदामुआफ' गवाहों को लोग बुरा भला कहने लगे । ३ अथवा ४ अगस्त को सैशन जज के सामने मुकद्दमा पेश हुआ । वायदामुआफ गवाह जैर्ग्ष अपने बयानों से मुकर गया । पुलिस ने कार्रवाही करते हुये अदालत से र्थना की, कि इस मुकद्दमे में वायदामुआफ गवाह अपने बयानों पर पक्के नहीं रहे, इसलिये पृथक अन्य कोई प्रमाण दोषियों के विरुद्ध उपस्थित नहीं कर सकते । मिसलों के पेट भरकर ६ अगस्त को झूठे वायदा-मुआफ गवाहों तथा निर्दोष पकड़े गये १२ दोषियों के विरुद्ध मुकद्दमा वापस ले लिया गया ।

५ तथा ६ दिसम्बर १८७१ को इस मुकद्दमे के निर्दोष 'मुलजिमों' मन्नासिंह, रामकिशन तथा भैय्या ने सरकार से हीरा, अहिया तथा जयराम के विरुद्ध मुकद्दमा करने की आज्ञा माँगी । आज्ञा मिलने पर मन्नासिंह ने १७ अक्तूबर १८७२ को हीरा तथा 'आहिया वायदामुआफ' गवाहों पर मुकद्दमा कर दिया। हीरा भाग गया तथा आहिया को दो साल कड़ी कैद तथा तीन महीने कोठी बन्द के दंड मिले । सेठ जयराम के विरुद्ध भी मुकद्दमा करने की आज्ञा माँगी गई । यद्यपि डिप्टी कमिश्नर बर्च इस स्वीकृति के पक्ष में था। परन्तु जयराम ने न्यायालय में प्रस्तुत होकर ऐसे बयान देने की धमकी ी, जिससे मि० क्रष्टी तथा अन्य अफसरों के विरुद्ध दोषियों पर कई प्रकार। के दुखः देने के अपराध सिद्ध होते थे । यह आज्ञा न दी गई । राजा साहिबदयाल तथा सरदार बहादुर मंगलसिंह रामगढ़िया ने भी सरकार ो यही सम्मति दी, कि सेठ जयराम पर मुकद्दमा चलाने की आज्ञा नहीं दी जानी चाहिये। ११ अगस्त सन १८७३ कों झन्डासिंह गांव ठठ्ठावाला पकड़ा गया । १२ अगस्त को उसपर भी मुकद्दमा चला तथा उसको फांसी दे दी गई ।

२—रायकोट की घटना

पंजाब में अंग्रेजों का शासन स्थापित होने तथा मुसलमानों को गोवध की खुली आज्ञा मिलने पर नगरों के अतिरिक्त मुसलमान लोगों के छोटे छोटे कस्बों में भी बूचड़खाने खुल गये। जिला लुधियाना के प्रसिद्ध कस्बा रायकोट में भी सन् १८५६ में जिला के डिप्टी कमिश्नर मि० रिकटस के आदेशानुसार नगर की चहारदीवारी के बाहर गुरु गोबिन्दसिंह जी के गुरुद्वारे की ओर बूचड़खाना खोला गया था। यहाँ के दोनों बूचड़ राँझा तथा बूटा वहुत ही क्रूर थे। व बध किये पशुओं की हड्डियां पास के जोहड़ में डाल देते थे। मुसलमान गूजरों की पत्तियों (गाँव का एक हिस्सा) की भैंसें तथा ढोर इसी जोहड़ से पानी पीते थे। मुसलमान गूजरों की पत्तियों के नम्बरदारों ने इस बात का बूचड़ों पर दावा कर दिया। साथ पसाथ ही रायकोट की नगरपालिका ने भी बूचड़ों पर नियम भंग करने का मकद्दमा किया था। इन दोनों मुकद्दमों में तहसील जगरांव के तहसीलदार ने बूचडों को दस रूपये जुर्माना किया था। बूचड़ों ने जुर्माना के हकम के विरुद्ध अपील कर दी थी। रायकोट के आस पास बहुत से गावों में नामधारी रहते थे। एक दिव कुछ नामधारी गुरुद्वारा में माथा टेकने के लिये गये। वहां के सेवादार ने दुखित हृदय से उन्हें यह बात बताई, कि चीलें तथा कौवे बूचड़खने से गौओं की हड्डियाँ उठाकर गुरुद्वारासाहिब की दीवारों पर आ बैठते हैं, और इस प्रकार प्रतिदिन पवित्र गुरुद्वारा भ्रष्ट ही जाता है।" अमृतसर की घटना से एक महीने पश्चात् १५ जौलाई १८७१ को रायकोट के बूचड़-खाने पर आक्रमण हुआ, जिसमें बूचड़खाने में सोये हुये मनुष्यों में से दो की मृत्यु हो गई, तथा सात बुरी तरह घायल हुये।

१६ तारीख को ६ दस बजे के लगभग जब इस घटना का डिप्टी कमिश्नर को पता चला तो उसने जिला के पुलिस कप्तान द्वारा सब थानों के अफसरों को आज्ञाएँ भिजवा दीं, कि वह अपने अपने इलाके के बूचड़खाने तथा बूचड़ों की रात के समय नया हुक्म मिलने तक रक्षा करें। अप्रकाशित

पुस्तक 'सतगुरु विलास' में यह घटना इस प्रकार वर्णित है।

"८ तलवारें ज्ञानसिंह ने एकत्रित कीं। इनको वह और उसके साथी ऊँटों की किचावों में रखकर गांव मोड़ा से छीनीवाल ले आये। रत्नसिंह न गया। शामसिंह न गया। हवन किया, कड़ाहप्रसाद (हलवा) के गफ्फ लगाय। हलवा बूटाराम के डेरे गाँव ताजपुर में किया। अरिदास की। सिक्ख शेरों की भाँति चले। वर्षा हो रही थी। नगर के पास पानी चढ़ा हुआ था। पानी से गुज़र कर बूचड़खाने के द्वार पर आये, तो बचड़ों ने पूछा कौन है? सिंहों ने कहा हम ऊँटों वाले हैं। हुक्के में आग रखनी है। बूचड़ों ने झट दरवाजा खोल दिया। सावन महीने की संक्रान्ति को १२ बजे रात को रायकोट के बूचड़खाने में बंधी हुई गायों के रस्से काटकर उन्हें बाहर निकाल दिया। फिर बूचड़ों का सिर काट कर जयकारा लगाते जांय, तलवार मारें और जयकारा लगावें, तीन सिंह तो अन्दर बूचड़ों का वध करते रहे थे, शेष पहरे पर खड़े थे।"

डिप्टी कमिश्नर मिस्टर कावन तथा डिप्टी सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस मि० हैंचल १६ जुलाई को दोपहर से पहले लुधियाना से जगरांव पहुंचे। जगरांव से सवारी का प्रबन्ध करके ५ बजे सुबह चलकर काफी रात गए रारकोट पहुंचने पर पता चला, कि जिन बूचड़ों को मारने के लिये यह आक्रमण किया गया था, वह दोनों ही बच गये हैं। बूटा लुधियाना में अपील करने के लिये गया हुआ था और रांझा आक्रमण होने पर घर की छत से कूद कर भाग गया था।

दसौंधी गूजर तथा उसकी स्त्री बस्सी, जो इस आक्रमण में मरे, बचड़ों के पास पाहुनों के रूप में आये हुए थे। दसौंधी की लड़की रहममती तथा दो छोटे बच्चों के भी घाव आये। बूटा बूचड़ की स्त्री कोणी तथा उसकी दोनों लड़कियां बेजा तथा धन्ना भी घायल हुईं। अक्का राजपूत, जाता-जाता रात को यहीं ठहर गया था, उसको भी तलवार के १३ घाव आये। चौकीदारों का दफ़ादार अहमदखां जो शहर की फसील से बाहर चौकीदारों के साथ गश्त कर रहा था, शोर सून कर आया परंतु उस समय आक्रमण करने वाले भाग गये थे। पुलीस का आना बूचड़खाने से पांद सौ गज़ ही पर था। हाहाकार यहां तक सुनाई देता था। बड़ा थानेदार मुसलमान था। वह कहीं शहर में सोया पड़ा था तथा छोटा मुसलमान थानेदार ज्वर से ग्रस्त पड़ा था। पुलिस रात को ही उस स्थान पर पहुंची, परन्तु घातकों का कोई निशान न मिला। पीले रंग का एक चाथड़ा मिला, जो तलवार के म्यान का कपड़ा प्रतीत होता था। रात को हवा चलती थी। मशाल जलाई नहीं जा सकती थीं। पदचिन्हों का जानकार भी उस समय पाने में

नहीं था, इसलिये पुलिस वालों ने पदचिन्हों का पीछा न किया। दूसरे दिन भंगासिंह तथा भूपा पदचिन्हों को पहचानने वाले दोनों खोजी आठ आदमियों के पदचिन्ह रायकोट से गांव जलालदीवाल रियासत नाभा में ले आये। जलालदीवाल से दो आदमियों के पदचिन्ह पृथक् रास्ते पर हो पड़े, तथा शेष ६ आदमियों के पदचिन्ह रियासत पटियाला के दो गांवों में से होते हुये गांव छीनीवाल पहुंच गये।

डिप्टी कमिश्नर ने रायकोट पहुंचते ही सुपरिंटेंडेन्ट पुलिस लुधियाना को स्थिति से सूचित किया। सुपरिंटेंडेन्ट पुलिस ने सब थानों में लिखित आज्ञाएँ भेज दीं, कि नये आदेश तक ज़िले के बूचड़ों के प्राणों की रक्षा की जावे। साथ ही साथ लुधियाना के सिविलसर्जन को रायकोट आकर घायलों की देखभाल करने के लिये भी लिख दिया। डिप्टी कमिश्नर ने दोषियों का पता देने वाले को एक हज़ार रुपये इनाम तथा 'वायदामुआफ़' गवाह को दंड से बचाने की घोषणा की। गांव छीनीवाल में पदचिन्ह पहुंचने पर पंजाब गवर्नमेन्ट ने महाराज महेन्द्रसिंह साहिब पटियाला को तार दिया कि "रायकोट के बूचड़ों के घातकों के पदचिन्ह गांव छीनीवाल, रियासत पटियाला में पहुंच गये हैं, इसलिये लेफ्टिनेंट-गवर्नर साहब आपको कहते हैं, कि आप इन दोषियों को गिरफ़्तार कराने के लिये हर प्रकार की सहायता दें।"

महाराजा पटियाला ने तार मिलते ही दोषियों को पकड़वाने वाले को २५०) नकद इनाम देने की घोषणा कर दी, तथा रियासत के इलाकों के नाज़िमों के नाम हुक्म भेज दिये, कि दोषी शीघ्रातिशीघ्र पकड़ जावें। नाभा के महाराजा हीरासिंह ने लुधियाना में अपने वकील तथा अन्य अफ़सरों को हुक्म भेजे, कि इस विषय में लुधियाना के अंग्रेज़ अफ़सरों को हर प्रकार से सहायता की जाय। २० जुलाई को महाराजा पटियाला ने निम्नलिखित तार पंजाब सरकार को भेजा। "आपका तार मिलने के पहले ही नाज़िमों के नाम इस सम्बन्ध में हुक्म जारी कर दिये गये थे। हमारा वकील इस विषय में आपको पूरी-पूरी सूचना देगा।"

१७ जुलाई को डिप्टी कमिश्नर इलाके के प्रतिष्ठित लोगों अहमदअली गांव तलवंडी तथा शर्फ़हुसेन जगरांववाला के साथ परामर्श करने और लोगों के बयान सुनने में व्यस्त रहा। इनाम के प्रलोभन में गदाइया नामक व्यक्ति ने आकर बयान दिया, कि १३ तारीख को जब वह लुधियाना की ओर जा रहा था, तो उसने हलबारा के पास दो सिक्ख देखे थे। यह दोनों आदमी १५ तारीख को सायंकाल आक्रमण होने से पहिले उसके

कुएं पर पानी पीने के लिये आये थे । रांझा बूचड़ की स्त्री नूरी ने भी यही बयान दिया, कि गदाइया के बताई हुई शक्ल वाले दो मनुष्यों ने १५ तारीख को उसके घर के पास से गुज़रते हुए यह पूछा था, कि रास्ता किधर को जाता है और जोहड़ में कितना पानी है ? गदाइया ने यह भी बयान दिया, कि ये दो सिक्ख एक हिन्दू साहूकार के सम्बन्ध में पूछ रहे थे तथा मैं ने अपने कानों इस हिन्दू को अपने भाई को यह कहते हुए सुना, कि "शीघ्र जाकर यह काम करो ।" इससे मैं ने यह अभिप्राय निकाला, कि "शीघ्र बूचड़ों का बध करो ।" गदाइया शपथ लेता था, कि इसी हिन्दू ने बूचड़ों का सिक्खों मे घात कराया था । गांव हलवारा तथा आसपास के गांवों में छानबीन आरम्भ की गई । हिन्दू साहूकार को भी पुलिस वालों ने स्पष्ट बात बताने के लिये कहा । अन्त वही ढाक के तीन पात । पता चला, कि इस हिन्दू ने गदाइया से कर्ज़ लेना था, तथा १४ तारीख को अदालत ने गदाइया के विरुद्ध डिग्री दे दी थी ।

दुर्जन तो ऐसे अवसर की ताक में ही रहा करते हैं । नूरपुर गांव के गाज़ी नामक मुसलमान गूजर ने आकर बयान दिया, कि कत्ल से १२ दिन पहिले रायकोट का नानक क्षत्री उसके पास आया था और उसने कहा था, कि यदि वह टोला संगठित करके बूचड़ों का बध करदे, तो नानक उसको २५०) रु० देगा । गाज़ी ने अपने गांव के चौकीदार गंढ़ी से स सम्बन्ध में पूछा, जिसने इस काम से बचने की सम्मति दी । छानबीन करने के पश्चात् बात यह निकली, कि नानक ने गाज़ी के विरुद्ध अदालत से कर्ज़ा चुकाने की एक डिग्री ली थी ।

एक और गुप्त दूत नाई ने सौगन्ध खाकर कहा कि जैसे मनुष्यों के नख-शिख का वर्णन गदाइया तथा नूरी ने किया है, उनमें से एक पुरुष अवश्य ही कस्बा जगरांव की तहसील का कका चपड़ासी है । बेचारा कूका चपरासी बुलाया गया और उसकी अत्यधिक पिटाई की गई । निर्दोष का मार-मार कर भुरकुस निकाल दिया, किन्तु पुलिस वाले चपड़ासी से कुछ पता न निकाल सके । आखिर बेचारे की बुरी तरह पिटाई करके छोड़ दिया गया ।

पटियाला तथा नाभा के वकील और अफसर भी अब छानबीन में सम्मिलित किए गए थे । जलालदीवाल तथा छीनीवाल गांवों के कूके पकड़ कर लाये गये । उनके पदचिन्ह पहिले पदचिन्हों से मिलाये गये, परन्तु दैवयोग से उनमें से किसी के पदचिन्ह न मिले ।

एक महीने के अन्दर अन्दर अमृतसर, मुरेण्डा, रायकोट आदि स्थानों पर बूचड़ों पर आक्रमण होने से पंजाब सरकार को बहुत चिंता हुई । पंजाब का डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस कलनल वेली २० जुलाई से पहले स्वयं रायकोट

पहुंचा। यहां पहुँचने से पहिले उसको यह दृढ़ विश्वास था, कि रायकोट के कसाइयों का वध कूकों ने किया है, तथा इसमें गुरु रामसिंह जी का हाथ है।

कलनल बेली के रायकोट पहुँचते ही नामधारियों का कट्टर शत्रु आनन्दपुर वाला लहनासिंह निहंग भी उसके पीछे ही वहां जा पहुँचा। उसने भी हत्या का आरोप कूकों पर लगाया तथा शपथ उठाकर अपने बयान डिप्टी कमिश्नर को लिखवा दिये। लहनासिंह ने इसके पहिले दयालगढ़ जिला अम्बाला के तीन कूके पकड़वा दिये थे।

लहनासिंह निहंग इस बात का बहुत आग्रह करता था, कि बूचड़ों का घात गुरु रामसिंह जी की आज्ञानुसार हो रहा है। लहनासिंह के कथनानुसार जब ग्रन्थी दलसिंह से यह बात पूछी गई, तो उसने लहनासिंह की कहानी को झूठा बताया।

हरनामदास जो अपने आपको कूका कहता था, उसने भी यही बयान दिये, कि मैंने अपने कानों एक दरबार में गुरु रामसिंह को यह कहते सुना था कि "एक बूचड़ के घात का पुण्य सौ गायों के दान के पुण्य जितना होता है।" हरनामदास ने यह बयान उस समय दिया, जब उस पर अम्बाला के न्यायालय में एक चौकीदार को मारने का मुकद्दमा चल रहा था।

अम्बाला में किसी सुन्दरसिंह ने भी यही बयान दिये, परन्तु कप्तान हार्सफोर्ड अम्बाला के डिस्ट्रिक्ट सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस ने मि० कावन को यह बात बताई कि सुन्दरसिंह के बयान भी हरनामदास की तरह बिल्कुल झूठे हैं।

मि० कावन अपनी रिपोर्ट नम्बर १८ तिथि २० जोलाई १८७१ में इन सब बातों का वर्णन करते हुए लिखता है, कि "हत्या बेशक कूकों ने ही की हो, परन्तु मुझे सन्देह है कि गुरु रामसिंह ने कूकों को बचड़ों का घात करने के लिये आज्ञा दी है :" साथ ही वह लिखता है, "मान लो, कि कत्ल कूकों ने ही किये हों, तो अमृतसर वाले जो अपराधी मुकद्दमे में फंसे हुये हैं, उन में से किसी का भी इस घटना में हाथ नहीं। अतः यह बात कि गुरु रामसिंह की आज्ञानुसार बूचड़ कत्ल हुये हों, मानने योग्य नहीं है।" मि० कावन की रिपोर्ट कमिश्नर अम्बाला तथा उसकी नकल होम सेक्रेटरी को भेजी गई। यह रिपोर्ट पढ़ने के योग्य है। डिप्टी कमिश्नर कावन ने रायकोट से आकर २००) रुपए कोष में से निकालकर पुलिस वालों को दिए तथा सरकार से रायकोट के अलिया नामक जराह को ५०) पुरस्कार देने की स्वीकृति मांगी।

श्री जवाहरलाल जी नेहरु और डा० पट्टाभिसीतारमैया गुरु प्रतापसिंह जी महाराज के साथ (नामधारी केन्द्र भैणी साहब में १७-२-३१) (मोटर पर नामधारी ध्वज लहरा रहा है)

पटियाला और नाभा की रियासतों के कर्मचारी तन्मय होकर ज़ोर-शोर से रायकोट के बूचड़ों को कतल करने वालों की खोज करने में जुटे हुये थे। पटियाला का महामंत्री खलीफा मोहम्मदहसन तथा पंजाब सरकार का कार्यवाहक सेक्रेटरी मि० एल० एच० गिफ्रन आपस में बहुत घनिष्ठ मित्र थे। अतः खलीफा साहिब हार्दिक रूप से चाहते थे, कि इस मुकद्दमे का पता अवश्य चल जाय। अंग्रेज़ हाकिम आले को रियासत (पटियाला) तथा चौधरी की रियासत (नाभा) दोनों के राजाओं पर ज़ोर डाल रहे थे कि "अपराधी तुम्हारी रियासतों में हैं, उन्हें किसी प्रकार शीघ्रातिशीघ्र ढूंढ़कर हमारे हवाले करो।" २० जौलाई को रियासत पटियाला के वकील ने डिप्टी कमिश्नर लुधियाना को यह बताया, "पता चला है कि कत्ल की घटना से लगभग ५ दिन पहिले कुछ कूके गांव नाईवाला में एकत्रित हुये देखे गये थे और उन्हें खोज निकालने के यत्न किये जा रहे हैं।"

२१ तारीख को पटियाले वालों ने डिप्टी कमिश्नर को सूचना दी, "कि उन्होंने ७ कूके अपनी रियासत में से पकड़ लिये हैं, तथा उनकी तलवार भी पकड़ ली गई हैं। पंजाब के सेक्रेटरी मि० ग्रिफन ने मि० ई० सी० बेली गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया के सेक्रेटरी को उस सूचना की रिपोर्ट देते हुए लिखा, 'यद्यपि स्वभाविक तौर पर सिक्ख, कूकों पर यह आरोप लगावेंगे, परन्तु मुझे अब भी दृढ़ विश्वास नहीं कि वास्तविक अपराधी व्यक्ति पकड़े गये हों।" साथ के साथ यह भी लिखा, "महाराजा साहिब बहादुर पटियाला इस मुकद्दमे में हमारी पूर्ण सहायता कर रहे हैं।"

२२ जौलाई को लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर ने होम सेक्रेटरी को तार दी कि "कत्ल के स्थान से लेकर गाव पित्थो रियासत पटियाला तक सात कूकों के पदचिन्ह मिल गये हैं। पटियाला के अफसरों तथा हमारी पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया है।"

सेशनजज मेक्नाव तथा चीफ़कोर्ट के जज बेलोनीस के निर्णयों के अनुसार मंगासिंह तथा भूपा खोजी आठ व्यक्तियों के पदचिन्ह खजानसिंह के डेरे तक ले आये थे। खजानसिंह को पटियाला के थानेदार मुवक्कलहुसेन के सामने प्रस्तुत किया गया। खजानसिंह ने थानेदार तथा गांव धनेर रियासत पटियाला के नम्बरदार मुनयमखां को तीन तलवारें निकलवा दीं, तथा बयान दिया कि छीनीवाल गांव का दलसिंह, नाईवाला गांव का रत्नसिंह तथा पित्थो के तीन आदमी बूचड़ों के घातक हैं।

जुर्म को मनवाने के लिये पुलिस जो व्यवहार दोषियों से करती है उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त पंजाब तथा पुरानी रियासतों के ग्रामीण भली भांति जानते

हैं । पटियाला की गुप्त पुलिस तो इन बातों के लिए अब तक प्रसिद्ध है। आजकल भी कई पुराने पुलिस अफ़सर जीवित हैं जो बता सकते हैं, कि निर्दोष व्यक्ति को भी किस प्रकार दो चार घंटों के अन्दर अन्दर दोष मनवा कर मिसलों के पेट भरकर न्यायालयों में पेश कर दिया जाता था । पुरानी बातों को छोड़ो, हम में से कई सज्जनों ने सांडर्स वध केस, कालिका शूटिंग केस, नाभा-पटियाला केस, बब्बर-अकाली केस तथा अनेक मुकद्दमों में पुलिस अफसरों की उस्तादियां देखी हैं ।

दलसिंह को छीनीवाल से लाकर वसीयां की कोठी के स्थान पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया । दलसिंह ने गुलाबसिंह चूहड़चक वाले का नाम लिया जिसको २३ जौलाई को उसके गांव से पकड़ लिया गया । दलसिंह ने मैजिस्ट्रेट के सामने अपने जुर्म को मान लिया । इस पर उसको उसी स्थान पर लाया गया जहाँ तलवारें दबाई हुई थीं। चार तलवारें और निकाली गईं । मुनियमखां, फैजअलीखां तथा अन्य गवाहों ने सौगंध उठाकर कहा, कि तीन तलवारों पर बिलकुल ताज़ा रक्त लगा हुआ था तथा लहू वाले स्थान पर बालू भी लगा हुआ था। समस्त गवाहों ने शपथ लेकर यह भी बयान दिये, कि एक तलवार के दस्ते के साथ थोड़ा सा मांस और चमड़ी भी लगी हुई थी । पित्थो वाले सिक्खों के पकड़े जाने का वृत्तान्त "सतगुरुविलास" में इस प्रकार लिखा है :—

"दल्लू पित्थो वालों को जाकर पकड़वाने लगा । तेजासिंह ढिलवांवाले ने सूचना दी, कि तुम को पकड़ने के लिये जेठूपुरा में रिसाला आ उतरा है । तुम अपना प्रबंध करो । समस्त सिंह बन में जा बैठे । दूलासिंह ने कहा तुम भाग जाओ, तुम्हारा उत्तरदायित्व है, तुम नहीं बचोगे । मस्तानसिंह ने कहा, कि यदि भाग गये तो सिपाही दूसरों को दुःख देंगे। "हमने किया है, अतः हम सहन करेंगे, औरों को दुःख देना ठीक नहीं । कार्य करके भागना न चाहिये । सन्मुख होकर शीश देंगे ।" जो गुरु ने करनी है, वही होगा । देखी जायगी हम भागते नहीं हैं ।" दोपहर ढलने पर रसाला आगया। बेगारियों को हुक्म दिया, कि कूकों को एकत्रित करके ले आओ । समस्त कूके एकत्रित करके लाये गये । वे आठ व्यक्तियों को ले गये । दल्लू की स्त्री ने कहा कि तीन तो मेरे घर आये थे । मस्तानसिंह, मेंगलसिंह तथा गुरुमुखसिंह तीनों ही आये। गुलाबू भी घर से पकड़ मंगाया । अतरसिंह दस वर्षों का था, फिरंगी ने कहा इसको क्यों लाये ? उसे छोड़ दिया गया, तत्काल शेष को बेड़ियां पहना दीं गईं । आठवें ज्ञानसिंह को दल्लू ने नगर खन्ना से जा पकड़वाया । रत्नसिंह नाई को भी जा पकड़वाया, कान्हा भी पकड़वा दिया । कान्हा ने

गांव बाग वाले के रहने वाले पकड़वा दिये। गांव गुलाबू निंदक मराणा से पकड़वा दिये। वायदामुआफ़ गवाह बनने पर बोल उठा—तीनों कहते कि सद्गुरु ने ज्ञानीसिंह को हुक्म दिया था, कि बूचड़ों का बध करो। ज्ञानीसिंह नें सिंहों को यही बात कही थी। सतगुरु जी की आज्ञा है कि बूचड़ों का घात करो। सिंहों ने ही बूचड़ मारे हैं। गुप्तचरों के कहने से गुरु रामसिंह जी भी बुलाए गए।"

२४ जौलाई १८७१ को मि० कावन ने वसीयां नामक स्थान से इस घटना की कड़ी की अगली रिपोर्ट पंजाब सरकार को भेजी, जो २७ जौलाई को केन्द्रीय सरकार को भेजी गई। इसमें लिखा था:—"सात पकड़े हुये कूकों में से चार निःसंदेह कत्ल के दोषी हैं। उनकी तलवारें भी मिल गई हैं। इनमें से चार तलवारों पर रक्त के छींटें हैं, तथा मांस भी लगा हुआ है। दलसिंह 'वायदामुआफ' गवाह बन गया है। उसने दुखित हृदय से कत्ल की घटनायें बताई हैं, परन्तु उसकी स्त्री ने जो चतुर दीख पड़ती है, अपने पति को बचाने के लिए सारे मामले को स्पष्ट रूपसे बता दिया है। गुलाबसिंह पकड़ा गया है, परन्तु अभी तक वह वसीयां के स्थान पर मैजिस्ट्रेट के सामने पेश नहीं किया गया। इन प्रदेशों का सूबा ज्ञानीसिंह है। रत्नसिंह उसका उपनाम है। ज्ञानीसिंह पहिले भी पटियाला में दो साल की क़ैद पा चुका है तथा मन्द व्यक्ति है।"

२४ जौलाई के पश्चात् गुरु रामसिंह जी तथा अन्य सूबों को भी वसीयां के स्थान पर इस मुकद्दमे में गवाही देने के लिये बुलाया गया। आप ३६ नामधारी सिंहों के साथ २८ जौलाई को बसीयां पहुँचे, तथा अदालत वाले स्थान के पास ही डेरा डाला। इस समय दस घुड़सवार भी आपके साथ थे। आपने वसीयां पहुँचकर दलसिंह वायदामुआफ तथा शेष झूठे गवाहों के पोल खोली। (टूक सैशनजज वाली मिसल)। सतगुरुविलास में गुरुजी का वसीयां जाकर गवाही देने का वर्णन इस प्रकार लिखा है:—

"ऊँट सवार आया, परवाना दिखाया, आपको-बसीयां में याद किया है। प्रार्थना करके दीनानाथ जी चले। जब गुजरवाल गांव में आये, तो उन्होंने कहा कि, यदि ८०-१०० सिंह धर्म हेतु लग जांय तो क्या बड़ी बात है? यदि धर्म रह जाय। वसीयां आये तो फिरंगी ने पूछा, बाबा रामसिंह तुमने सिंहों को बूचड़ों को मारने का आदेश दिया है? गुप्तचर कहते हैं—तुमने स्वयं हुक्म दिया है।" गुरु जी ने कहा, कि मैंने कब ऐसा कहा? स्वयं ही जाकर काटते फिरते हैं। हम को कुछ खबर नहीं। कान्हा, दल्लू तथा गुलाबू तीनों ही कहने लगे

कि तुमने व्यय देकर भेजे हैं, कि जाओ बूचड़ों को काटो। गुरु जी कहने लगे यदि व्यय दिया होगा, तो बही में लिखा होगा। फिरंगी ने बही मंगवाई, किन्तु उसमें नाम न निकला। गोपालसिंह ने कहा जिसको मैं देता हूँ, नाम लिखता हूँ। यदि दिया होता तो लिखा भी होता। गुरुजी ने कहा, यदि हुक्म देना होता, तो क्या इन्हें ही देता? और बहुत से सिंह मेरे पास थे, मैं उनको हुक्म दे देता। इनको क्यों हुक्म देता ?"

पटियाला और नाभा रियासतों तथा अंग्रेजी प्रदेश के पुलिस अफसरों, कर्मचारियों और वकीलों की सहायता से वसीयां के स्थान पर मैजिस्ट्रेट ने एक दो दिनके अन्दर अन्दर पूर्ण मिसल तैयार करके दोषियों को सैशन जज के अधिकार में दे दिया। अम्बाला डिवीज़न के सैशनजज साहब भी वसीयां में पहुंचे हुये थे।

२७ जौलाई १८७१ को मि० ए० डबल्यू. मेकनाब सैशनजज ने वसीयां के स्थान पर इस मुकद्दमे में मस्तानसिंह, गुरुमुखसिंह, मंगलसिंह पित्थो गांव वालों को तथा गुलाबसिंह चूहड़चक गांव वाले को कत्ल के दोषी बताकर प्राण दंड दिया। असैसरों ने भी इन्हें दोषी घोषित किया।

१ अगस्त १८७१ को पंजाब चीफ कोर्ट के जज सी० बोलीनोत चारों दोषियों की फांसी की सजा की पुष्टि कर दी। दूसरे जज जे० एस० कम्पबैल ने भी इसी तिथि को इसी निर्णय के साथ अपनी सम्मति दे दी।

इस मुकद्दमे का विशेष पक्ष यह है, कि चीफकोर्ट से फांसी का हुक्म होने के पश्चात् गुलाबसिंह को वायदामुआफ गवाह बनाया गया। क्या न्याय के अनुसार ऐसा हो सकता था? परन्तु नामधारियों पर कानून की बजाय राजनीति लागू थी, क्योंकि उन्होंने बूचड़ों को मार कर सरकारी हुक्म तोड़ा था तथा सरकार का मान मिट्टी में मिला दिया था।

कलनल बेली ने अमृतसर तार दिया, कि गुलाबसिंह वायदामुआफ गवाह ने अमृतसर के बूचड़ों के घातकों का पता दे दिया है, तथा वह उसको साथ लेकर अमृतसर पहुँच रहा है।

इस मुकद्दमें के दोषी २४ जौलाई को नाभा तथा पटियाला की रियासतों में से पकड़ कर अंग्रेजी इलाका के गांव वसीयां में लाये गये। पुलिस अफसरों ने एक दो दिन में मजिस्ट्रेट के सामने इनके बयान दिलवाये। मैजिस्ट्रट ने २७ तारीख तक दोषियों को फांसी के दण्ड दे दिये। इसके पश्चात् चार दिन के अन्दर अन्दर चीफ़ कोर्ट ने फाँसी की सजा की पुष्टि कर दी। सारा मुकद्दमा नो दिन में समाप्त कर दिया गया।

२८ तारीख के पश्चात् फांसी के दंड प्राप्त तथा दोषियों ज्ञानीसिंह और रत्नसिंह गांव नाईवाला को लुधियाना जेल में लाया गया। चीफ़कोर्ट से सजायें पक्की होने पर फांसी लगाने का समस्त सामान तथा ३ अपराधियों को रायकोट लाया गया। डिप्टी कमिश्नर मि. एल. कावन स्वयं भी रायकोट पहुंचा। बूचड़-खाने के पास ही फांसी गाड़ी गई, तथा ५ अगस्त १८७१ को सूर्योदय के साथ लोगों के सामने मस्तानसिंह, गुरमुखसिंह तथा मंगलसिंह पित्थो गांव वालों को फांसी दे दी गई। इस समय लगभग दो सौ आदमी फांसी का दृश्य देखने के लिए आये हुए थे। इनमें दस या बारह कूके भी थे। पित्थो से फांसी पाने वाले वीरों के कुटुम्बी पहुंचे हुए थे। वह मृतक शरीरों को गांव पित्थो ले गये जहाँ उनका दाह संस्कार किया गया।

(टूक—पंजाब सरकार कम्यूनिक नम्बर १०६० मिती १० सितम्बर १८७१)

ज्ञानी रत्नसिंह तथा रत्नसिंह गाँव नाईवाला को फांसियां

पंजाब के डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस का यह मत था, कि यदि कूकों को कड़े दंड देकर न दबाया गया, तो वह अंग्रेजी सरकार से अवश्य टक्कर लेंगे। कई अंग्रेज अफ़सरों का विचार था, कि गुरु रामसिंह जी तथा उसके बड़े-बड़े नामी सूबों पर मुकद्दमे चलाकर बढ़ते जा रहे नामधारी आन्दोलन का नाश कर दिया जाय। ज्ञानी रतनसिंह मन्डी वाला नामधारी सिंहों में अच्छा विद्वान, चतुर तथा मान प्रतिष्ठा वाला सज्जन था। नामधारी सिंहों ने गुरु रामसिंह जी की आज्ञानुसार शासन के सरकारी न्यायालयों का बहिष्कार किया हुआ था। पारस्परिक झगड़े निबटाने के लिये नामधारियों में से ही मुकद्दमा सुनने वाले पंच, सरपंच तथा न्यायाध्यक्ष भी बनाये हुये थे। ज्ञानसिंह अथवा ज्ञानी रतनसिंह मन्डी वाला हिठाड़सतलुज के प्रदेशों में नामधारियों का मुख न्यायाध्यक्ष माना जाता था। वह स्वयं प्रत्येक स्थान पर पहुँच कर इनके पारस्परिक झगड़ों तथा मुकद्दमों में निर्णय देता। इस कार्य के लिये उसको हर समय स्थान स्थान पर आना जाना पड़ता था।

रायकोट के मुकद्दमे में तीन हत्याओं के लिये तीन दोषियों को फाँसी हो चुकी थी। साथ ही साथ इस मुकद्दमे का हवाला देकर ज्ञानीसिंह अथवा रत्नसिंह मन्डी गांववाला तथा रतनसिंह गांव नाईवाला को भारतीय दंड संहिता की धारा १०९ तथा ३०२ के अनुसार मैजिस्ट्रेट ने मुकद्दमा २१ सितम्बर १८७१ को सैशन जज के हवाले कर दिया था। आरोप यह था, कि घातकों ने घात इनकी सहायता तथा इनकी प्रेरणा से किये हैं। मिसलों के पेट गुप्तचरों तथा गवाहों के बयानों से भरे पड़े थे। सैशनजज ने दलसिंह तथा गुलाबसिंह वायदामुआफ सरकारी गवाहों तथा दलसिंह की स्त्री रामकौर की गवाहियाँ दूसरी बार अपने न्यायालय

में ज़ीं। फैसले में सैशनजज साहब लिखते हैं, कि इस बार दलसिंह की गवाही पहिले मुकद्दमे की गवाही की अपेक्षा कई नुकतों पर बहुत स्पष्ट है।

सरकारी गवाह गुलाबसिंह ने सैशनजज के सामने यह बयान दिया, कि वह अमृतसर के बूचड़ों के कतल की घटना में कातिलों के साथ सम्मिलित था। गुरु रामसिंह जी से मालवा (दरिया सतलुज से नीचे का इलाका) में बूचड़ों को मारने की आज्ञा लेकर वह तथा उसके साथी भगवानसिंह, लक्ष्मणसिंह तथा जवाहरसिंह पांचवें दिन गांव खुड्डी में ज्ञानीसिंह के पास पहुँचे। सैशनजज, गुलाबसिंह की गवाही का मूल्य कम समझता था। उसने फैसले में लिखा है, कि मेरे सम्मुख आये गवाहों में से दो जाटों को छोड़कर शेष दीदारसिंह साधू, जीवनसिंह नम्बरदार गाँव जोगा, कालासिंह, जवाहरसिंह तथा गुरुदत्तसिंह सबने उतने कड़े बयान नहीं दिये, जितने उन्होंने मैजिस्ट्रेट के सामने दिये थे। पता चला है, कि मेरे सामने २३ तारीख को मुकद्दमा प्रारम्भ होने से एक दिन पहिले यह भेंगा गये थे। फैसला लिखते हुये जज ने बहुत ही जटिल बातें लिखी हैं। अंत में घूम फिर कर वह गुलाबसिंह के गांव खुड्डी में ज्ञानीसिंह को मिलने वाली बात पर आ जाता है।

निर्णय वाली पंक्तियों में लिखा है,, कि ज्ञानीसिंह तथा रतनसिंह नाईवाला दोनों का गांव मोड़ के मेले पर उपस्थित होना, तलवारें एकत्रित करना तथा अन्य मनुष्यों को बूचड़ों के घात के लिये प्रेरणा देना इस बात का प्रमाण है कि उन्हें हत्या के षड्यंत्र का पूर्ण ज्ञान था। अंत में ज्ञानीसिंह का गाँव जोगा में जाकर रत्नसिंह के आने तक वहीं ठहरना तथा रत्नसिंह के साथ आये भगवानसिंह कातिल को मिलना आदि प्रमाणों के होते हुए, इस बात में सन्देह नहीं रह जाता, कि ज्ञानीसिंह ने अपराधियों को प्रेरणा तथा सहायता देकर बूचड़ों को कत्ल करवाने में भाग लिया है।"

भारतीय दंड विधान की धारा १०९ तथा ३०२ के अनुसार सैशनजज ने ज्ञानीसिंह गांव मन्डी तथा रत्नसिंह गांव नाईवाला को प्राण दंड दिये। तीनों असैसरों, मीर गुलाममुहम्मद, श्री चन्दूलाल तथा श्री कन्हैयालाल ने भी दोषियों को हत्या के अपराधी ठहराकर साहब बहादुर के निर्णय की पुष्टि की।

मुकद्दमे का फैसला २६ अक्टूबर १८७१ को हुआ। मैकनाब साहब ने फैसले की नक़ल अपने पत्र नं. १०५ मिति ३० अक्टूबर १८७१ द्वारा चीफ़ कोर्ट को भेज दी। यह फैसला फौजदारी मुकदमा नं. ६५ सन् १८७१ के हवाला के साथ भारतीय दंड की संहिता की धारा २९८ के अनुसार चीफ

कोर्ट के तीन जजों मिसटर सी. बोलीनोस, मिसटर सी. आर. लिन्डसे मिसटर जे. सी. कैम्पबेल के बैंच के सामने पेश हुआ। मुकद्दमे की समस्या इस प्रकार थी।

"सरकार विरुद्ध (१) रत्नसिंह पुत्र बुद्धसिंह जाति कूका आयु २८ वर्ष गांव नाईवाला, (२) ज्ञानी उपनाम रत्नसिंह पुत्र रामकृष्ण जाति कूका आयु ३५ वर्ष गाँव मन्डी। अपराध। कत्ल करवाने के लिये प्रेरणा देना भारतीय दंड संहिता की धाराय १०९ तथा ३०२।

जज बोलीनोस ने हर नुक्ते पर बड़ी ही खोज तथा चतुराई से तर्क किया। उसने लिखा, कि सैशनजज ने रत्नसिंह नाईवाला के बयान को गवाही बनाकर ज्ञानीसिंह को प्राणदंड दिये हैं। कार्यवाही नियाये के मूलनियमों के विरुद्ध। दोनों दोषियों पर सम्मिलित रूप से एक ही अपराध में एक ही मैजिस्ट्रेट के सामने मुकद्दमा चल रहा है। इसलिये जो कुछ भी रत्नसिंह नाईवालिया ज्ञानी रत्नसिंह के विरुद्ध कहता है, न्याय के नियमों के अनुसार इसको गवाही नहीं माना जा सकता। जज साहब ने गुलाबसिंह, दीदारसिंह मोड़वाला, गुरुदत्तसिंह, रामकौर, दलसिंह की गवाहियों के झूठसच का खूब विश्लेषण किया। यहाँ तक लिखा, कि दलसिंह तथा रामकौर अपने आपको बचाने के लिये ज्ञानी के विरुद्ध ऐसी गवाहियां देते हैं, जो ठीक मानी नहीं जा सकतीं। यह भी लिखा, कि पुलिस वाले गवाहों को बयान पढ़ाते-सिखाते रहे हैं।

गुलाबसिह की गवाही के विषय में जज साहब ने लिखा, कि यह गवाह ज्ञानीसिंह के विरुद्ध बहुत कड़ी गवाही देता है, परन्तु उसकी गवाही एक वायदामुआफ व्यक्ति की गवाही है। तथा इस रूप में इसकी गवाही में वह सारी बनावटें तथा त्रुटियां हैं, जो ऐसे गवाहों की गवाहियों में होती हैं। जीवनसिंह तथा कालासिंह की गवाहियां ज्ञानी के विरुद्ध नहीं जातीं।

अंत में जजसाहब लिखता है, कि मैं मुकदमे के सारे पक्षों पर विचार करके प्राण दंड देने से झिझकता हूं। ऐसे मुकद्दमे में न्यायाधीश को भी अपनी स्वेच्छा का प्रयोग करने की छूट है। परन्तु मैं बहुत गहराई म अनुभव करता हूँ, कि इस मुकद्दमे में मृत्यु दंड न दिया जावे। मिसल में आई गवाहियों से यह सिद्ध नहीं होता, कि ज्ञानी ने वास्तव में इन हत्याओं में सीधा भाग लिया है। संभव है, कि हत्या के विषय में हुये परामर्शों में वह भी अनुमति देता रहा हो। जज साहब ने फैसला दिया, कि मै ज्ञानी के मृत्यु दंड को बदलकर आजीवन कारावास का दंड देता हूं, तथा रत्नसिंह

नाईवालिया को प्राण दंड की बजाय कारावास आजीवन का दंड देता हूँ ।

जज साहब बोलीनोस ने अपना यह निर्णय ११ नवम्बर १८७१ को लिखा ।

जज कैम्पवेल ने अपना फैसला १४ नवम्बर १८७१ को लिखा । उसने फैसले में इस मुकदमे को एक अर्धराजनैतिक रूप देकर अपराधियों के लिये सैशन जज वालो फांसी के दंडों को ही पुष्ट कर दिया ।

जज लिंडसे ने २३ नवम्बर १८७१ को संक्षेप शब्दों में अपना निर्णय देते हुए ज्ञानीसिंह तथा रत्नसिंह नाईवाला को सैशन जज की ओर से दिये गये प्राणदंड का समर्थन किया ।

२६ नवम्बर १८७१ वाले दिन दोनों नामधारी सज्जनों को लुधियाना जेल के बाहर फांसियां दे दी गईं । सतगुरुविलास में इनके फांसी चढने का वृत्तान्त इस प्रकार दिया है :—

"फांसी वाले दिन दही के साथ स्नान किया । श्वेत पोशाकें कहकर इस दिन के लिए बनवाईं थीं । श्वेत वस्त्रों के साथ फांसी चढ़ेंगे । जेलवाला यह नीला (पहरावा) नहीं पहनना । साथ ही चमड़े की तन्दी गलेमें नहीं डालनी । कह कर रेशम के रस्से बनवाए । फांसी गड़वाई, फौज आईं । अन्य लोग भी बहुत देखने आये । धर्म के हेतु सिंह शहीद होते हैं । बाबा ज्ञानसिंह के चेहरे पर शान्ति दमकती है । फिरंगी दोनों निर्दोषों को फांसी देने लगे हैं, कत्ल में साथ नहीं थे । गुप्तचरों के कथनानुसार ही दंड दिया । फाँसी के तख्ते पर खड़े हुए बाबा ज्ञानसिंह ने रत्नसिंह से वचन किया ।

चूका निहोरा सेरी सखी सहेरी ।
भरम गया गुरू पिर संग जोरी ॥

जब बाबा ज्ञान सिंह तख्ते पर चढ़े, तो पास खड़े अंग्रेज हाकिम से बोले—"बिल्ले, (अंग्रेज) मुँह तो सन्मुख रख, पीठ दिए क्यों खड़ा है । १० मास किसी जाटिनी की कोख में काटकर फिर इस संसार में आ जायेंगे । युवक होकर फिर बदला लेंगे । सुन ओ बिल्ले, तेरी बुद्धि भ्रष्ट देखी है । तुम्हारे न्याय झूठे हैं । अन्याय होने लगा है । मुझे मारकर यह आन्दोलन बन्द नहीं होने लगा है । जिसने तुम्हें मारना है वह रामदासपुरा में बैठा है । पीछे तुम्हारा विनाश करेगा । यह तो अभी बच्चों का खेल हुआ है । शेषनाग तो अभी बैठा है । पीछे तुम्हारा नाश करेगा । यदि एक दो सर्प मार दिये तो क्या हुआ ? तुम्हारा काल तुम्हारे

सिर पर बैठा है......हमें भी कहीं और नहीं जाना है, कोई माता फिर जन्म देगी। नये चोले पहन, युवक होकर पुनः तलवार पकड़ेंगे ......तुम्हारे अधिकार को उठावेंगे। तुम्हारे साथ युद्ध करेंगे। गोत बोला।

प्रभु पर स्वमित्व उनका
जिन सिर प्रभु को अर्पित किया।
संसार से ही उदासीन होकर
प्रभु से सम्बन्ध स्थापित किया।
जैसे करे प्रीत आरम्भ भक्तजन
प्रण पालें कदाचित् न फेरें जिया।
बिनु सिर दिये भगवन् न मिलता
लाखों की में एक कही था।

स्वयं फाँसी के रस्से दोनों ने गले में डाले। सत श्री अकाल बलाया। पटड़ा पैरों के नोचे से खींच लिया गया। अन्तिम हिलोरा आया। प्राण पृथक हुए। दोनों सिंहों के मृतक शरीरों को बूढ़ा दरिया के तट पर ले जाकर दाह कर दिया गया।"

न मुकद्दमों को सफलता के साथ सम्पूर्ण करने में हर प्रकार की सहायता देने के कारण अंग्रेजी सरकार की ओर से महाराजा महेन्द्रसिंह जी साहब बहादुर का बहुत बहुत धन्यवाद किया गया। इन्सपैक्टर पुलिस सरदार नरायणसिंह को ई० ए० सी० बनाकर लुधियाना में विशेष प्रकार से नामधारियों का दमन तथा विनाश करने की ड्यूटी पर लगाया गया। इन्सपैक्टर इमदाद अली को उच्च पद दिया गया।

विदेशी सरकार को नामधारियों की ओर से आशंका

मि० मैकनाब तथा मि० मैकन्डयू की रिपोर्टें

यद्यपि अंग्रेज शासक नामधारी सूबों तथा नामधारी महन्तों को लोगों की दृष्टि से गिराने के काम में तन्मय होकर लगे हुए थे, तथापि प्रतिदिन नामधारियों की संख्या बढ़ती चली जा रही थी। नामधारियों के स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के प्रणों तथा विदेशी शासन की ओर से चलाई गई समस्त संस्थाओं, सरकारी न्यायालयों, सरकारी पाठशालाओं, डाकखानों, हस्पतालों, अंग्रेज़ी औषधियों तथा रेल की यात्राआदि का पूर्ण बहिष्कार शासन के लिये अत्यन्त चिन्ता के कारण बन गये थे। नामधारियों का संगठन, उनका अपना डाक प्रबंध तथा गुरु रामसिंह जी के आदेश पालन होते देखकर विदेशी शासकों के हृदयों में इस आन्दोलन के प्रति सन्देह होना स्वभाविक था। काश्मीर तथा नेपाल की सेनाओं में भरती होकर नामधारी जंग के ढंग सीख रहे थे। इन सभी बातों के होते हुए सरकारी कर्मचारियों के हृदय में यह बात पक्की तरह बैठ गई थी कि नामधारी सिंह अवसर मिलने पर अंग्रेज़ी सरकार के विरुद्ध खुल्लम खुल्ला विद्रोह करेंगे।

५ अगस्त १८७१ को रायकोट के बूचड़ों के कत्ल के अपराध में गाँव पित्थो रियासत नाभा के तीन नामधारियों को रायकोट में जनता के सामने फाँसी दे दी गई थी, तथा ज्ञानी रत्नसिंह मन्डो गांव वाले और रत्नसिंह गांव नाईवालिये का मुकद्दमा लुधियाना ज़िले के शिशनजज के सपुरद कर दिया गया था।

८ अगस्त को अमृतसर के बूचड़ों के कत्ल करने के अपराध में मि० क्रिष्टी द्वारा पकड़े हुए सभी अपराधी बीलासिंह नामधारी के ३ अगस्त के स्वीकृत बयान के पश्चात् छोड़ दिये गये। इस पर कर्नल वेली डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस लाहौर ने सरकार की इच्छानुसार मि० मैकनाब कमिश्नर

अम्बाला तथा मि. मेकेन्डयूं डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस अम्बाला को गुरु राम सिंह जी पर बूचड़ों के कत्ल के लिये प्रेरणा देने के अपराध में मुकद्दमा चलाने के विषय में अपनी सम्मतियाँ प्रकट करने के लिये लिखा । मि. मैकनाब ने अपनी रिपोर्ट ४ नवम्बर को उपस्थित की तथा मि. मेकेन्डयूं ने २० नवम्बर १८७१ को। मि. मेकनाव की रिपोर्ट का सार इस प्रकार है :—

(१) आरम्भ में यद्यपि इस आन्दोलन के नेताओं के लक्ष्य कुछ भी हों, परन्तु इस आन्दोलन का झुकाव प्रत्यक्ष रूप में राजनैतिक है।

(२) सर्व प्रथम सरदारों अथवा धनाढ्यों में से केवल मंगलसिंह विष्णुपुरिया ही नामधारी था, परन्तु अब बहुत से सरदार तथा जागीरदार इस आन्दोलन में प्रविष्ट हो चुके हैं। उदाहरण के रूप में गुरदत्तसिंह गांव नाईवाला, बीरसिंह गांव दयालगढ़, गुरुशरणसिंह गांव मुस्तफाबाद तथा उसके तीन भतीजे, हीरासिंह जागीरदार साढौरे वाला तथा साढौरा के अन्य समस्त जागीरदार, दयालगढ़ियो सरदारों के सम्बन्धी, बुढ़ासिंह जागीरदार गांव सोहाना जिला अम्हाला, रियासत कलसिया के जयमलसिंह तथा दलीपसिंह अम्बाला जिला के छोटे-छोटे जागीदार समय आने पर खालसा राज्य पुनः स्थापित करने के इच्छुक अवश्य बन जावेंगे।

(३) पिछले वर्षों में गुरु रामसिंह ने नेपाल के युवराज द्वारा महाराजा के साथ भी सौगातें लीं और दीं।

(४) नामधारी संगठन जिला वार सूबों तथा कार्यचालक सूबों द्वारा संगठित है।

नामधारियों के दूत लखनऊ, हैदराबाद आदि शहरों में जहाँ जहाँ भी सिक्ख रहते हैं, पहुँचते हैं। गुरु रामसिंह साधू, तथा फकीरों की भाँति नहीं रहता। जब कभी भी वह किसी अफसर को मिलता है, तो राजाओं की भाँति कई घुड़सवार तथा बहुत से पैदल उसके साथ होते हैं। अफसर के कमरे में भी राजाओं के दरबारियों के समान उसके साथ कई मनुष्य अन्दर आते हैं।

उसके अपने तथा नामधारियों के पहने हुए वस्त्र बहुत ही सुन्दर तथा सफ़ेद रंग के होते हैं। ऐसा संगठन कुछ समय पश्चात् राजनैतिक कार्यक्रम की महान् शोभा बन सकता है तथा नामधारियों का प्रत्येक काम इसी लक्ष्य की ओर जाता प्रतीत होता है।

(५) जितने पदाधिकारी सूबे मुझे मिले हैं, समस्त साहसी पुरुष हैं। कुछ ही को छोड़कर जितने कूके मैंने देखे हैं, वह बहुत कसीले तथा हृष्ट-पुष्ट शरीर वाले व्यक्ति हैं ।

(६) सारे पक्षों पर विचार करके मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूँ, कि यह आन्दोलन पूर्णतः राजनैतिक है, निपट धार्मिक आन्दोलन नहीं, प्रत्यक्ष में चाहे कुछ भी हो ।

(७) गुरु रामसिंह तीक्ष्ण बुद्धिवाला, धैर्यवान्, गम्भीर तथा उच्च आचरणवाला पुरुष है। उसने अपने हर वचन, तथा प्रत्येक कर्म को अपने वश में किया हुआ है ।

(८) बूचड़ों के कत्ल के मुकद्दमों की गवाहियों से यही परिणाम निकलता है, कि गुरु रामसिंह ही समस्त बातों के आधारे थे । तथा प्रतीत होता है कि लोग उसी पर भरोसा करते हैं; सूबों पर नहीं ।

(९) हर पढ़ा लिखा कूका अपने पास दीवान बूटासिंह लाहौर वाले के मुद्रणालय (आफ़ताब प्रेस) की मुद्रित एक पुस्तक रखता है। इस पुस्तक में गुरु गोविन्दसिंहजी के ग्रन्थ में से युद्ध के लिए उत्साहित करने वाली वाणियां, चंडीपाठ तथा उग्रदन्ती दी हुई हैं ।

इन प्रकाशित वाणियों के अतिरिक्त तीन और अप्रकाशित पुस्तकें हैं, जिन्हें कूके प्रामाणिक समझते हैं । यह हैं "सौ साक्षी", 'बाबा अजित्ता की गोष्ठ' तथा 'करनीनामा'। अमृतसर के बूचड़ों के कत्ल की तफतीस में इन्स्पैक्टर इमदाद अली ने यह तीनों पुस्तकें तलाशी में भाई बोहलासिंह गांव नारली के घर से लाकर मि० टर्टनस्मिथ को दी थीं । उसने इनका अनुवाद किया था । अन्त में मि० मैकनाब गुरु रामसिंह जी के विरुद्ध राजनैतिक मुकद्दमों की रूपरेखा का इस प्रकार उल्लेख करता है :—

"गुरु रामसिंह एक ऐसी सम्प्रदाय का वास्तविक तथा नामी नेता गुरु है, जो खालसा राज्य को पुन जीवित करने की आशा रखती है और अंग्रेज़ी शासन की दुश्मन है । इस सम्प्रदाय के अनुयायियों ने पंजाब के इस भाग में रहने वाले समस्त बूचड़ों को कत्ल करने का षड्यन्त्र रचा हुआ है । गुरु रामसिंह को अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के कत्ल का पहिले से ही ज्ञान था। मेरे सामने न्यायालय म गवाही देते हुए उसने रायकोट में कत्ल किये गये निर्दोष स्त्री तथा बच्चों के कत्ल की निन्दा करने से साफ़ इन्कार कर दिया था।"

अपनी व्यक्तिगत सम्मति देते हुए मि. मेकनाब ने लिखा कि "सरकारी तौर पर स्वीकृत विशेष स्थानों पर, अथवा व्यापार कर रहे बूचड़ों का, उद्दंडों के हाथों कत्ल किया जाना सरकार के उद्देश्यों तथा शासन का खुले रूप में विरोध है। इस प्रकार शासन के विरोधी होने की अवस्था में यदि दोषियों को कड़े दंड न दिये जावें तो ये विरोधी किसी न किसी समय हमारे शासन के लिये अति हानिकारक सिद्ध होंगे।"

"इस बात को सभी मानते हैं कि शासन का विरोध होने अथवा करवाने में सम्प्रदाय के नेता गुरु की पूर्ण सम्मति है। इन कारणों को सामने रखते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है, कि देश के भीतर शान्ति स्थापित रखने के लिये गुरु रामसिंह को निर्वासन देकर ऐसे स्थान पर रक्खा जावे, जहां उसके श्रद्धालुओं में से कोई भी उसे न मिल सके।" उसके सूबों को उनके गांवों में नज़रबन्द कर दिया जावे तथा कूकों के दीवान, मेले और सम्मेलन सरकारी आदेश से बन्द कर दिये जावें। यदि उनके विरुद्ध ऐसे कड़े साधनों का प्रयोग न किया गया, तो जनसाधारण के हृदयों में यह बात बैठ जावेगी कि सरकार नामधारियों के गुरु रामसिंह से डर गई है। वह लोगों के दिलों में पहिले से भी उच्च स्थान प्राप्त कर लेगा। यदि उसकी शक्ति बढ़ती गई और उसके श्रद्धालुओं की संख्या में वृद्धि होती गई, तो सरकार को अनेक बाधाओं, दंगों और फसादों का मुकाबला करना पड़ेगा।"

आगे चलकर मि० मेकनाब रायकोट तथा अमृतसर के मुकद्दमों के गवाहों के बयानों के आधार पर यह परिणाम निकालने का यत्न करता है, कि "बूचड़ों के कत्ल गुरु रामसिंह जी की आज्ञा से हुये हैं। वह लिखता है कि यदि उसपर कत्ल की प्रेरणा देने का मुकद्दमा न्यायालय में सिद्ध न भी हो सके, तो भी उस को मुक्त नहीं करना चाहिये। अपितु यह निर्णय देना चाहिये, कि उसके विरुद्ध खुली अदालत में दोष सिद्ध नहीं हो सका, परन्तु वह दोषी अवश्य ही है। अपराध सिद्ध न होने की अवस्था में उसके विरुद्ध बंगाल एक्ट न० ३ सन् १८१८ के अनुसार कार्यवाही करनी चाहिये। मेरी यह दृढ़ सम्मति है, कि गुरु रामसिंह को आयु पर्यन्त कारावास का दंड देकर अन्डमान द्वीप में भेज दिया जावे। परन्तु यह कार्यवाही जनवरी के महीने दिल्ली में होने वाले बड़े सैनिक सम्मेलन से पहिले-पहिले हो जानी चाहिये। लुधियाना में पुलिस की संख्या बढ़ानी चाहिये और कुछ सेना जालंधर में तैय्यार रखनी चाहिये।"

आगे चलकर लिखता है "कि गुरु रामसिंह जी को दृ ता से यह बात बता दी जावे कि वह अपना प्रचार बन्द करदे तथा सूबों को भी प्रचार करने से वर्जित करदे। साथ ही साथ अपने श्रद्धालुओं को कार्यवाहियों का दायित्व अपने ऊपर ले। परन्तु मेरा विश्वास है कि इन बातों का उसपर कोई प्रभाव न होगा तथा न ही वह अपना प्रचार बन्द करेगा।" "इन बातों को सन्मुख रखते हुये मैं यह कहने का साहस करता हूँ, कि सरकार का रोब, आदर तथा दबदबा अब इस बात से ही स्थापित रह सकता है, यदि गुरु रामसिंह जी को अवश्य ही दंड दिया जावे।"

अंत में मि० मैकनाब बड़ी हास्यास्पद सी बात लिखता है। वह सरकार को चेतावनी देता है, कि उसकी यह रिपोर्ट लाहौर के किसी मुद्रणालय में न छपे। इसके लिये वह यह दलील देता है, कि मुद्रणालयों को बिरादरी में दीवान बूटासिंह की बहुत मानप्रतिष्ठा है। तथा उसे यह आशंका है कि उसकी रिपोर्ट की नक़ल मुद्रित होने से पहिले ही बूटासिंह के द्वारा गुरु रामसिंह के पास पहुँच जावेगी।

मि० मेकेन्ड्यू की २० नवम्बर १८७१ को लिखी हुई रिपोर्ट का सार इस प्रकार है :—

(१) गोवध बन्द करने के लिये बूचड़ों को मारने को नीति कूकों ने खोटा गाँव के मेले के पश्चात् अपनाई। यह मेला दमदमा साहिब में बैसाखी के उत्सव के पश्चात् प्रचार हेतु लगा था। गुरु रामसिंह जी भी इसमें उपस्थित थे।

इस मेले पर बाबा जवाहरसिंह तथा सरदार हीरासिंह सक्रोदी वालों का आपस में झगड़ा हो गया था। हीरासिंह अपनी स्त्री का काटा हुआ जूड़ा बांस पर लटकाये फिरता था। जवाहर सिंह उसे ऐसा करने से बन्द करता था,। गुरु रामसिंह ने पारस्परिक झगड़े का समाचार सुनकर तथा दुःखी होकर कुछ ऐसे वचन कहे, जिन्हें नामधारियों ने बूचड़ों को कत्ल करने का संकेत समझा।

(२) रायकोट तथा अमृतसर के मुकद्दमों की मिसलों में लिखित बयानों से यह प्रतीत होता है कि यह कत्ल गुरुरामसिंह जी की आज्ञानुसार ही हुये हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि गुरु रामसिंह जी के विरुद्ध अमृतसर तथा रायकोट के मुकद्दमों में दिये गये सरकारी गवाहों के बयानों के आधार पर

चलाया हुआ मुकद्दमा अदालत के सामने सफल हो सकेगा या नहीं । मेरी यह सम्मति है, कि गुरु रामसिंह जी पर ऐसा मुकद्दमा चलाना, जिसमें उसको कमसे कम आयुपर्यन्त कारागार अथवा देश निर्वासन का दंड न दे दिया जाए, भारी भूल होगी ।" इसलिये सरकार को किसी ऐसे मुकद्दमा के चलाने का लम्बा चौड़ा स्वांग नहीं भरना चाहिये । किन्तु मुकद्दमा चलाने के बिना ही शासन की राजनैतिक आवश्यकता के नाम पर तथा देश में शान्ति स्थापित रखने के लिए गुरु रामसिंह को देश निर्वासन का दण्ड देना चाहिये ।

"गुरु रामसिंह जी तथा उसके अनुयायियों ने निःसन्देह ही हुकूमत के न्याय और आज्ञाओं की मिट्टी पलीत कर रखी है । सरकार को इस बात की आड़ लेकर कूकों के विषय में हकूमत की परेशानी तथा कठिनाई को जो निरन्तर दस वर्ष से चली आ रही है, दूर करना चाहिये ।

(३) मि० मेकेन्डयू लिखता है कि कलनल बेली कूकों की संस्था को कुछ अधिक ही महत्व देता है । उसका अनुमान मुझे शुद्ध प्रतीत नहीं होता कि लगभग डेढ़ लाख आदमी इस पन्थ में प्रविष्ट हो गये हैं । मेरा अनुमान है कि यदि कूकों की गणना की जावे, तो पचास हज़ार के लगभग होगी

(४) अभी तक कूकों की बहुसंख्या लुधियाना, फीरोज़पुर, जालंधर, होशियारपुर तथा स्यालकोट के ज़िलों में है । परन्तु साथ ही इस बात में कोई सन्देह नहीं कि गुरु रामसिंह बहुत चतुर तथा प्रसिद्ध व्यक्ति है । सूबों के द्वारा लोगों को नामधारी संस्था में परिवर्तित करने में उसको सफलता हुई है । इन्हीं कारणों से वह अपनी मान प्रतिष्ठा का प्रयोग करने के लिये ऐसे स्थान पर पहुँच चुका है जो हमारे शासन के लिये हानिकारक होगा । उसने वर्तमान में जो उपनाम धारण किया है, उससे उसकी उन्नति का अनुमान लगाया जा सकता है । जब वह हज़रो के गुरु बालिकसिंह जी की गद्दी का उत्तराधिकारी बना, तो वह महन्त रामसिंह कहलाता था । इसके पश्चात् उसको लोग गुरु रामसिंह के नाम से याद करने लगे । इसके पश्चात् सत्गुरु रामसिंह कहने लगे और अब सतगुरु पादशाह के नाम से बुलाकर उसका सम्मान करते हैं ।

(५) जैसे जैसे उसके श्रद्धालुओं की संख्या में वृद्धि होती गई, उसकी धन सम्पत्ति भी बढ़ती गई । अब उसके पास अनेकों व्यक्तिगत सहचर व सेवक हैं । वह दरबार लगाता है । समस्त देश में से हरकारे, अनुगामी तथा जनता के प्रतिनिधि लोगों के सन्देश लेकर उसके पास आते जाते रहते हैं ।

बहुत से सिक्ख जागीरदार और सरदार उसके साथ मिल गये हैं तथा नामधारी बन गये हैं। रियासत काश्मीर में एक कूका पलटन खड़ी करने का प्रयत्न किया गया है। नैपाल राज्य की सरकार के पास भी कूका दूत सौगातें देकर भेजे गये थ । यह सब कार्यवाहियां महत्वाकांक्षा रखने वाले पुरुष के मनोभावों को प्रकट करती हैं । पूर्वी महाद्वीप के देशों में पहिले की छोटी-छोटी कार्यवाहियों से ही बड़े-बड़े ऐतिहासिक तथा निर्णयजनक परिणाम निकलते रहे हैं।

(६) मेरे उक्त मनोभाव और भी शक्तिशाली हो जाते हैं, जब मैं हकूमत के भारतीय मित्रों, सिक्खों, हिन्दुओं तथा मुसलमानों के दिये हुए समाचारों, सूचनाओं तथा अनुमतियों पर सूक्ष्मदृष्टि से विचार करता हूँ। वह बताते हैं कि कूका आन्दोलन में कोई अच्छाई नहीं। इसकी प्रवृति तथा लक्ष्य दंगा करना तथा बुराई है। हमारे शासन के भारतीय मित्र यह भी बताते हैं कि अभी तक यह आन्दोलन अपनी बाल्यावस्था में है । हिन्दू तथा मुसलमान इसके विरोधी हैं। इस समय सरकार की ओर से थोड़ी सी शक्ति तथा अनुशासन के बल से इसको एक दम कुचला जा सकता है। शासन के विरूद्ध दंगा तथा बुराई की नींव पर खड़ा किया हुआ यह आन्दोलन भविष्य में बड़ी-बड़ी आशंकाओं तथा तोड़ फोड़ की घटनाओं का जन्मदाता बन जावेगा।"

नवम्बर १८७१ के अन्त में यह दोनों रिपोर्टें लेफ्टीनेंट गवर्नर के पास पहुँच गईं। उसने इन्हें पढ़कर सर्वथा यही फैसला किया, कि गुरु रामसिंह जी के विरुद्ध बूचड़ों के कत्ल करने वाले अपराधियों को उकसाने तथा संकेत देने के अपराध में अदालत में मुकद्दमा न चलाया जावे। लाट साहब का यह विचार था, कि गुरु रामसिंह के विरुद्ध स्पष्ट रूप में ऐसे प्रमाण तथा गवाहियां मिलने की संभावना नहीं, जिनके आधार पर एक खुली अदालत में उसको अपराधी सिद्ध किया जा सकेगा। यदि सरकार की ओर से चलाया हुआ ऐसा मुकद्दमा न्यायालय में सिद्ध न हुआ, तो इस घबराये हुए तथा डरे हुए सम्प्रदाय के लोग सरकार की इस वैधानिक हार को अपनी जीत समझेंगे।

लाट साहब का विचार था कि "अभी तक इस प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न नहीं हुईं, जिन्हें आगे रखकर हिन्द की केन्द्रीय सरकार की ओर से बंगाल रैगूलेशन नम्बर ३ सन् १८१८ के अनुसार गुरु रामसिंह जी तथा

उनके प्रमुख सूबों के विरुद्ध वारंट प्राप्त किये जावें। उनका मत था, कि गुरु रामसिंह तथा उनके सूबों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये सरकार के पास काफी गवाहियाँ, मसाला तथा सामग्री अपने मुकद्दमें को पक्का करने के लिये नहीं है। न्याय की विशेष कार्यवाहियां जिनका प्रयोग केवल खास हालतों में ही किया जाता है, यहां नहीं की जा सकतीं"। यदि अभी तक सफल अदालती कार्यवाही में ही सन्देह है, तो विशेष वारंट तो दूर की बात है।" लाट साहिब ने अपनी उक्त राय देकर पत्र फायल कर दिये।

इन रिपोर्टों के आधार पर कूकों के दीवान तथा मेले लगाने बन्द कर गये। नामधारियो ने भी धर्म तथा समाज सुधार के प्रचार पर कड़े प्रतिबन्ध लगने पर विदेशी सरकार से सीधी टक्कर लेने का निर्णय कर लिया। उन्हों ने सरकार के गलत हुक्मों की अवहेलना करने के लिये प्राण हथेली पर धर लिये।

शहीदी जत्थे का उत्थान

अंग्रेज़ अधिकारी नामधारियों को विदेशी सरकार के विरोधी समझते थे। पंजाब को सिक्ख रियासतों का उस समय अम्बाला डिवीजन के कमिश्नर से ही सम्बन्ध होता था। गवर्नर पंजाब तथा हिन्द सरकार से इनकी लिखापढ़ी कमिश्नर द्वारा ही होती थी।

पटियाला, नाभा, जींद तथा फरीदकोट की रियासतों में रहनेवाले सिख अधिकतर नामधारी बनते चले जा रहे थे। इन रियासतों के कई नामी सरदारों तथा जागीरदारों के कुटुम्ब नामधारी बन चुके थे। सकोदी वाले गरेवाल सरदारों में से सरदार हीरासिंह का पिता महाराजा महेन्द्रसिंह पटियाला का सेवक था। सरदार हीरासिंह भी महाराजा के वस्त्रगृह में प्रतिहारी था। महाराजा महेन्द्रसिंह के समय में पटियाला रियासत में कार्यकर्ताओं के दो दल थे। एक दल के नेता सरदार देवासिंह तथा बख्शी प्रतापसिंह चाहल थे। देहली वाले मौलवी वंश और बसी वाले पठानवंश के सरकारी अफ़सर, सरदार गुरुमुखसिंह जान तथा चौधरी चढ़तराम इसी दल में थे। दूसरा दल खलीफा सैयद मुहम्मद हसन मुख्य मंत्री का था। सइ दल में बख्शी गन्डासिंह धालीवाल तथा शहराजा के सयद मीर वंश के व्यक्ति थे। मीर वंश को महाराजा अमरसिंह जी ने नवाब अवध की सिफारशों के साथ पटियाला में तोपों की ढलाई तथा तोपखाना स्थापित करने के लिये बुलवाया था।

महाराजा महेन्द्रसिंह अत्यन्त रंगीली वृत्ति वाला राजा था। राजकाज का सारा काम मुख्यमन्त्री साहिब के हाथ में था। खलीफा मुहम्मद हुसेन मुख्यमन्त्री तथा सर हेनरी लैपलग्रिफ़न पंजाब सरकार के मुख्य सचिव की आपस में अत्यंत घनिष्ट मित्रता थी। खलीफ़ा साहिब को उस समय के अंग्रेजों ने 'बिस्मार्क आफ़ इन्डिया' के नाम से संबोधन किया है। पंजाब की रियासतों के प्रबंध के लिये अंग्रेजी सरकार सदा ही उसका परामर्श लेती थी।

अंग्रेज़ी सरकार की ओर से नामधारियों के विषय में कड़ाई तथा प्रतिबन्धों की नीति पर अग्रसर होने के लिये यह आवश्यक था, कि सिक्ख रियासतों में भी इसी नीति का समर्थन किया जाता। लेखक को अभी तक रियासतों के कार्यालयों में नामधारियों से सम्बन्धित पुरातन मिसलें देखने का अवसर नहीं मिला, इसलिये इस समय इस विषय में सविस्तार नहीं लिखा जा सकता। सिक्ख रियासतों के इलाकों में प्रचार करने के लिये गुरु रामसिंह जी ने तीन बड़ी यात्रायें कीं। जिनके परिणामस्वरूप बराड़, सिद्धू, मान, चाहिल, गिल्ल आदि जाट जातियों के बहुत से वंश नामधारी बन गये थे।

जनश्रुति है कि जब नामधारी सम्प्रदाय बढ़ने लगा, तो इसकी प्रशंसा महाराजा महेन्द्रसिंह के कानों तक पहुंची। सम्भव है कि हिन्द सरकार ने उन्हें इस सम्प्रदाय के विषय में अधिक जानकारी मालूम करके भेजने के लिये लिखा हो। परामर्श के पश्चात् महाराजा ने एक सिक्ख थानेदार को जो अत्यन्त गुण्डा, बदमाश, दुराचारी तथा मदिरा प्रेमी था भैणी में गुरु रामसिंह जी के पास भेजा। भैणी में जाकर वह चार-पांच दिन रहा। गुरु प्रभाव से उसकी आंखें खुलीं और उसने नामधारी बनने की इच्छा प्रकट की। इस पर उसको अमृत छकाकर नामधारी बनाया गया तथा मर्यादा बता कर भजन दिया गया। जब वह लौटकर पटियाले आया, तो इनामों के प्रलोभन, कड़े बन्दी जीवन की धमकियों, तथा नौकरी से पद-च्युत करने की सज़ा के बावजूद भी उसने भजन मर्यादा तथा गुरु मंत्र बताने से न्कार कर दिया। इस पर उसको नौकरी से निकाल दिया गया।

गांव सकरौदी वाले सरदार हीरासिंह ने सम्वत् १९२९ असाढ़ महीना में अपने गाँव में ही गुरु रामसिंह जी से अमृत छका था। उसी समय से सरकारी नौकरी छोड़ दी थी। उनके साथ ही उनके चचेरे भाई लहनासिंह तथा अनूपसिंह भी नामधारी बन गये थे। सन १८७१ के अन्त तक फूलकियाँ रियासतों में नामधारी सिंहों की संख्या एक लाख से अधिक हो गई थी।

जैसे जैसे लोग नामधारी बनते जा रहे थे, अंग्रेज़ी सरकार तथा रियासतों की सरकारें, कष्टों प्रतिबन्धों तथा अन्याय से इस आन्दोलन के दमन के यत्नों में व्यस्त थीं। ज्ञानी रतनसिंह मन्डीवाला तथा रतनसिंह नाईवाला को फांसियां होने तथा गुरु रामसिंह जी के सम्बन्ध में सरकार की ओर से देशनिर्वासन के परामर्शों से नामधारियों में बहुत जोश फैल गया था। सिक्ख रियासतों के अफसरों के व्यवहार ने रियासतों के नामधारियों को अत्यन्त दुखी किया हुआ था।

जगत्-प्रसिद्ध नेता श्री जवाहरलाल नेहरू का एक भाषण

(नामधारी केन्द्र श्री भैणी साहिब की प्रथम यात्रा के समय १७-२-३९)

श्री गुरू जी, बहिनों और भाइयों,

'बहुत दिन हुए मैंने इतिहास में नामधारी पंथ और उनके गुरू रामसिंह जी के कुछ हालात पढ़े थे। आप लोगों की देश के लिए की गई कुरबानियों के हाल पढ़ कर मेरे दिल पर बड़ा प्रभाव पड़ा और मुझको इससे बड़ी दिलचस्पी हो गई। यहाँ आने के लिए पहले भी कई बार मेरी इच्छा हुई, मगर कोई अवसर न हाथ आया। अब लुधियाने में इस कान्फ्रेन्स में आने का अवसर मिला, तो इस वीर भूमि के भी दर्शन हो गए। इस समय भी एक भारी विघ्न आ खड़ा हुआ था। आज ही मुझे दिल्ली से एक तार मिला, जिसमें मुझे देहली पहुँचने का संदेश था और वह संदेश भी ऐसा जिसको मैं टाल नहीं सकता था। मगर प्रेम भरी श्रद्धा के कारण मैंने उसको टाल दिया। अगर मैं इस भूमि पर न आ सकता तो मुझे बहुत दुख होता। आप लोगों की कृपा है, जो मुझे भी ऐसे स्थान के दर्शन करने का सौभाग्य हुआ।

मैंने काफी दुनियां देखी है। कई रंगों वाले, कई भेषों वालें और अलग अलग भाषाएँ बोलने वाले लोग देखे हैं। पुराने और नये ज़माने के हालात पढ़े हैं और आजकल के समय के हालात भी देखे हैं। मगर आज मुझे हिन्दुस्तान की एक नई ही शक्ल दिखाई पड़ी है। जिसको देखकर मुझे बड़ी ही उम्मीद और खुशी हुई है, अपने देश में मैं भी पेशावर से लेकर लंका तक घूमा हूं। हमारे देश में भी लोग भांति २ के भेष पहनते हैं और अलग अलग भाषाएँ बोलते हैं, मगर उनकी एकता सब जगह साफ नजर आई है। वह यह है कि वे सब हिन्दुस्तान को अपनी जन्म-भूमि समझते हैं। कई लोगों ने बहुत कोशिश की है कि हिन्दुस्तान की

पानी सर पर से गुज़रने के कारण सरदार हीरासिंह गरेवाल ने अपने साथियों से यह परामर्श किया, कि नित्य प्रति के कष्ट झेलझेल कर मरना कायरता है। बेहतर यही है, कि तन कर शीश दिये जावें, ताकि अंग्रेज़ी सरकार तथा रियासतों की सरकारों के अन्याय, अत्याचार तथा जबरदस्ती का नग्नचित्र संसार के सामने आ जाय। इस कार्य-पूर्ति के लिये एक शहीदी जत्था प्रस्तुत करना आरंम्भ किया गया। इस जत्थे के सदस्यों से धर्म तथा गरीबों की रक्षा के प्रण लिये जाते थे। गाँव दयालगढ़ वाले बसाबासिंह, भूपसिंह तथा वर्यामसिंह भी इसी जत्था में प्रविष्ट हो गये। थोड़े दिनों के पश्चात् बाबा बिशुनसिंह काबुलवाला भी जत्थे में आ मिला। गाँव गगड़पुर के पाठ भोगों के अवसर पर नन्दसिंह ओर अतरसिंह भी जत्थे के सदस्य बन गये।

शहीद होने वाले सज्जनों की संख्या थोड़े दिनों में ही बढ़ गई। इसमें अधिक सदस्य सिक्ख रियासतों के गाँवों और लुधियाना तथा फीरोज़पुर के जिलों के रहने वाले ही थे। यह एक ऐसा संगठन था, जो किसी न किसी आड़ में जानबूझ कर अत्याचारियों के हाथों मृत्यु को स्वीकार करने की सपथ उठाये फिरता था। इन मृत्यु के मस्तानों का नाम ही "मस्तानों का जत्था" प्रचलित हो गया था।

विदेशी शासन के विरुद्ध स्वतंत्रता संघर्ष में ऐसे जत्थों का होना आवश्यक हो ही जाता है। काँग्रेस आन्दोलन में भी इस प्रकार के कई जत्थे समम समय पर उत्पन्न होते रहे।

भैणी में माघी का मेला

१२ जनवरी १८७१

नवम्बर १८७१ में गुरु रामसिंह जी की स्त्री माई जस्सां की मृत्यु हो गई। पंजाब सरकार ने मि० मैकनाब तथा मि० मैकन्डयू की रिपोर्टों के आधार पर गुरु रामसिंह जी के देशाटन पर तथा कूकों के मेलों और दीवानों पर प्रतिबन्ध लगा दिये थे। गुरु रामसिंह जी को यह आदेश दिया गया था, कि वह अगली माघी के उत्सव पर मुक्तसर के स्थान पर न जावें।

इन प्रतिबन्धों के कारण माघी का मेला भैणी में ही लगाने का फैसला किया गया। स्थान-स्थान पर हरकारे निमंत्रण पत्र देकर भेजे गये, कि संगतें माघी के अवसर पर भैणीं में बढ़ चढ़ कर दर्शन दें।

जब माघी के मेले की सूचनायें भेजी गईं, तो उस समय मस्तानों अथवा शहीदी जत्थे वाले पुरुषों का मेला गाँव गगड़पुर में लगा हुआ था। "सतगुरु विलास पुस्तक" में इसका वर्णन इस प्रकार आया है।

"जिन सिंहों ने धर्म हेतु शीश देने हैं—बाबा विशुनसिंह जी ने बचन किया। गाय गरीब के निमित्त शीश देना होगा, दो बार तो पहिले शीश दिया है, तीसरी बार फिर दो शीश। किसी ने पराजित नहीं होना। धर्म का जहाज छूटेगा। पूर भरने लगा है"। सिंहों पर रक्त कान्तियाँ चढ़ गईं, कि धर्म हेतु हमारे शीश लगेंगे। जो कर्मभाव है, वही सिंहों के हृदयों में आने लगा। इतने में भैणी से एक सिंह आया। कहने लगा, कि भैणी में पाठ व भोग होंगें। आप को बुलाया है।'

सिक्ख मर्यादानुसार हर एक मरे हुये सिक्ख पुरुष तथा स्त्री के निमित्त गुरु ग्रन्थसाहिब जी के पाठ का भोग डालकर उसकी

आत्मा की सुख शान्ति के लिये प्रार्थनायें की जाती हैं। अमृतसर और रायकोट की घटनाओं से सम्बन्धित फाँसी चढ़ने वाले सिक्खों तथा माता जस्सां की आत्मशान्ति के हित गुरु ग्रन्थसाहब जी की वाणी के १०१ पाठों के भोग सम्पूर्ण करने का काम भैणी में आरंभ किया गया था। गुरु ग्रन्थसाहब जी की २५ प्रतियों को इकट्ठा ही खोलकर इनके पाठ किये जाने लगे।

सरकार को भी माघी के मेले के विषय में गुरु रामसिंह जी के आदेश का पता चल गया था। सरकार की ओर से भैणी जाने के लिये नामधारियों को रोकने तथा प्रतिबन्ध लगाने की आवश्यकता न समझी गई। भैणी में माघी का यह पहला उत्सव था।

सन् १६५८ के प्रारम्भ से अब तक भैणी में अटूट लंगर भी चलता आ रहा था। गायें, घोड़े-घोड़ियों तथा पशुओं के लिये तबेले भी बन गये थे। लगभग ५० या ६० मनुष्य हर समय ही गुरुद्वारा भैणी तथा डेरो में उपस्थित रहते थे।

माघी के उत्सव पर बाहर की संगतें तथा नामधरी १० जनवरी से ही भैणी पहुँचने आरम्भ हो गये थे। ११ जनवरी को गुरुवार के दिन लोहड़ी का अवसर था, तथा शुक्रवार १२ जनवरी को माघी। बाबा विशुनसिंह काबुलवाला, सरदार हीरासिंह गरेवाल, सरदार लहनासिंह गरेवाल, अनूपसिंह गरेवाल, मित्तसिंह गरेवाल, दयालगढ़ के सरदार भूपसिंह तथा अतरसिंह, "मस्तानों का जत्था" इस शुभ अवसर पर पहुँच गये थे। सरदार हीरासिंह के रिश्तेदार रड़वाले सरदार भी इनके साथ ही थे। गगड़पुर वाले खड़गसिंह, प्रेमसिंह भी शहीदी जत्थे के साथ भैणीं आये हुये थे।

गुरु रामसिंह जी को मस्तानों से असीम मोह तथा प्रेम था। आपने शहीदी जत्थे का पड़ाव डेरा से २०० गज पर अकालबुंगा के कुयें पर करवा दिया।

माघी के मेले पर सरकारी रिपोर्टों के अनुसार नामधारियों की संख्या ५०० तथा १००० के मध्य थी।

इस महोत्सव में सम्मिलित होने वाले नामधारियों के हृदयों में अंग्रेजी सरकार तथा सिक्ख रियासतों की सरकारों के विरुद्ध बहुत ही रोष तथा क्रोध भरा हुआ था। फाँसी चढ़ने वाले नामधारियों की ख्याति तथा बलिदानों के विषय में अत्यन्त वीर रस भरे गीत गाये जा रहे थे।

इस महोत्सव पर गांव फरवाही रियासत मालेरकोटला के नम्बरदार गुरुमुखसिंह ने सिक्खों को बताया कि "मालेर कोटला के मुसलमान काजी तथा न्यायधीश ने मेरे साथ अत्यन्त अत्याचार कियाहै। बात साधारण थी, परन्तु उसने मन में द्वेष रखकर मेरे सामने बैल को वध करने का हुकम दिया। मुझे बैल को चिल्लाते, तड़फते, टाँगें फड़काते, बिलख-बिलख कर प्राण देते हुय को देखने के लिये विवश किया गया। मैंने जब उसके अत्याचार के विरुद्ध चीख पुकार की, तो उसने मुझे बुरा भला कहा। मेरा अपराध यह था, कि मैंने एक कुंजड़े को जो बैल पर गाजर, मूली लाद कर ऊपर आप बैठा हुआ था, केवल इतना ही कहा था, कि भाई बोझ तो पहिले ही अधिक है, फिर आप क्यों ऊपर चढ़ा बैठा है ? हृष्ट पुष्ट हो, पैदल चल पड़ो।" इस पर कुंजड़ा तथा मैं झगड़ पड़े, हम दोनों कोतवाली ले जाकर क़ाजी के सामने पेश कर दिये गये।" "मेरी दुहाई आपके पास है, मैं महापापी हूं, क्योंकि मेरे सम्मुख बैल को बिलखा-बिलखा कर मारा गया। मेरा जीना उचित नहीं, मैं अपने पाप के प्रायश्चित के लिये काज़ी के सर चढ़कर मरना चाहता हूं।"

गुरुमुखसिंह पंच की घटना ने नामधारियों के हृदयों में ज्वाला की चिन्गारी डाल दी। मस्तानों का जत्था जो पहले ही सिरों पर कफ़न वांधकर इस महोत्सव पर आया था, यह दुहाई सुनकर विह्वल हो गया। जत्थे वालों ने कोटला जाकर प्राण देने की तैयारियां आरम्भ कर दीं।

पाठों के भोगों के पश्चात् यात्रीयों ने अपने-अपने घरों को जाना आरम्भ कर दिया। १३ जनवरी शनिवार को प्रातःकाल रामसर में स्नान करने के उपरान्त सूर्योदय के समय तक दीवान लगा रहा। बाहर से आये हुये बहुत से यात्री अपने अपने घरों को लौट गये। दोपहर के समय पता चला, कि मस्तानों का जत्था अपने अपने घरों को लौटना नहीं चाहता तथा मालेरकोटला जाकर शीश देने के लिये चलने वाला है।

हंडियाये गांव वाली 'मस्तानी इन्द्रकौर ने छत पर चढ़कर दुपट्टा हिलाया, तथा ऊंचे स्वर में कहा कि, "शहीदों जहाज़ तैयार है जिन्हें चढ़ना है, चढ़ जाओं। धर्म तथा गौ गरीबों की रक्षा के लिये शीश देने वाले आ जावें।"

आवाह्न सुनकर लगभग सवा सौ सिंह आ गये। "रीठों की छील रगड़कर सरदाई तैयार की गई। जो सिंह शहीदी दल के लिये अपना नाम पेश करता उसे रीठों का जल पिला कर एक ओर बिठा दिया जाता।"

गांव के नम्बरदारों तथा चौकीदार ने यह बात इलाका के थानेदार सरफराज़खां को बताई, जो इस मेले की देखभाल के लिये यहीं उपस्थित था। इस पर सरफराज़खां ने मस्तानों के इस आवाह्न के सम्बन्ध में गुरु रामसिंह जी से आकर बातचीत की।

सतगुरुविलास में यह सारा वृतान्त इस प्रकार दिया है।

"वाणियां दशम् गुरु की पढ़ते हैं। आसा की वार, चण्डी चरित्र, अकाल उसतत चौपाई। जिसको वाणी कण्ठस्थ नहीं, वे पुस्तक से पढ़ते हैं। गुरु रामसिंह जी ने बाबा लक्खासिंह को भेजा। लक्खा सिंह ने हीरा सिंह से कहा "हीरासिंह, राज फिरंगियों का है, तुम मरने मारने की बातें यों न करो"। लक्खासिंह सूबा न आकर कहा "मरने मारने की बातें करने से नहीं टलते। श्री सतगुरु जी वचन किया, चलो हम जाकर हटा आते है। अकाल बुन्गा स्वयं आकर बचन किया। "उधर से फ़िरंगी शक्तिशाली है, इधर खालसा शक्तिशाली, मैं बेचारा मध्य में आ फंसा।" हीरासिंह के कान में बचन किया, सुना नहीं किसी ने तथा पीठ पर थपकी दी। दीनदयाल जी वचन किया, "हीरासिंह, पगचिन्ह मिटा देने।" हीरासिंह ने कहा, सतवचन, तीन बार कहा सतवचन।...हीरासिंह को वचन किया, कि तुमने तीन दिन से अन्न नहीं छका, प्रसाद छको। हीरासिंह ने कहा कि आपने छकाया नहीं, अतः हमने छका नहीं। दीन-दयाल जी बचन किया, तुम हमारा कहा नहीं मानते......बलवा न करो, जो तुम्हारी इच्छा है, वह हमारी इच्छा है। धर्म सबको प्रिय है......परन्तु क्या करें समय नहीं है.. ...उतावली न करो। सिक्ख कहलाना और गोवध होने पर अन्न खाना अवश्य पाप है, परन्तु क्या करें, समय नहीं है। कुछ समय तक हट जावेगा। तुम उतावली न करो। जो बात तुम करते हो, वह बात पुलिस वाले लिखकर फिरंगी को भेज देते हैं। हमें कहते हैं, तुम्हारे सिंह बलवा की बातें करते हैं। धैर्य करो, शीघ्रता न करो, सरकार हमें कायल करती है, तुमसे कुछ बन नहीं पड़ता।......एक वर्ष दिन ठहरो। यहीं बैठे ही सब कुछ कर लेंगे......(पन्ना ४०६) दीनदयाल जी वचन किया, गले में पल्ला डालकर......"तुम कहते हो हुक्म दो, हुक्म दो, मैं तो कुछ नहीं कहता, क्योंकि पौध छोटी है, समय नहीं है, अभी भजन वाणी करो......तुम्हें कौन हुक्म देता है"......हीरासिंह ने कहा, हमें गुरु तेग़बहादुर जी आदेश देते है। दृष्टिगोचर हो बचन करते हैं।......अब तो शीश लगेंगे ही, यदि हम ठहरेंगे तो झूठे होते हैं......गुरु तेगबहादुर जी का हुक्म है, कि तुम्हारे शीश लगने हैं......श्री सतगुरु जी बचन किया, गुरु तेगबहादुर जी की आज्ञा की अवहेलना मैं नहीं कर सकता। फिरंगी की तो

झेल लेंगे, किन्तु अकाल पुरुष की नहीं झेली जाती। रसद ले लो तथा कुएँ पर जाकर खाना बना लो, डेरा न करो।" भाई हीरासिंह ने विनय की, "जो यहाँ से आसत उठायेंगे तो चौदह भवनों को आग लगेगी, आज अपने भंडारा से प्रसाद दो। अन्तिम भंडारा है। भन्डारा छककर चढ़ाई करेंगे। त्रिलोकी तो यहां छकते हैं, हम कहां रसद उठाये फिरेंगे।" हीरासिंह ने कहा "चार दिन का तो सारा व्यथ है। दो दिन का खाना खाकर बैरियों पर जा पड़ेंगे। यदि हमने उन्हें मार लिया, तो रसदें बहुत। हम मारे गये तो हमारा व्यय दो दिन उनकी ओर रहा।"

वचन किया, "तुम तैयार होकर आजाओ, प्रसाद तैयार करते हैं।" बचन हुआ, "लक्खासिंह इन्हें प्रसाद छकाओ, इनका अंतिम प्रसाद है, फिर इन्होंने यहाँ नहीं छकना।" १३ व्यक्ति थे, उस समय प्रसाद छकने के लिये साथ ही आ गये। आगे थानेदार खड़ा था, पाँच सिपाहियों के संग। श्री सतगुरु जी ने बचन किया "तुम इनके जमाई तथा यह तुम्हारे जमाई हैं। यह तेरह शरीर बेबस हैं। मेरे कहने में नहीं हैं। इनका प्रबंध करो। तुम जानो। कहना नहीं, कि सूचना नहीं दी। हमने सूचना देनी थी, सो दे दी है।" बाबा जवाहरसिंह ने बचन किया "व्यर्थ शोर मचाते हैं। अभी पौध छोटी है। कच्चे धागे को बल दे दिया, नंगे धड़ जाकर लड़ेंगे क्या ? कोई शस्त्र भी नहीं है, इनके पास।" थानेदार ने कहा, 'इन्होंने क्या करना है, भांग पीकर शेखियां बघारते है। बावले है। इन्होंने क्या करना है।"

गुरु रामसिंह जी के हाथ से खाना खाकर मस्ताने शहीदों का जत्था शीश देने के लिये चल पड़ा। लंगर से निकलते समय लगभग २५० सिंह एकत्रित हो गये "पुस्तक युग पलटाऊ सतगुरु" पन्ना १६९ तथा १७० पर इसका वर्णन इस प्रकार है।

"सरदार हीरासिंह जी ने अकालबुन्गा स्थान के द्वार से बाहर निकलकर... कटार से धरती पर रेखा खींची तथा गर्जना के स्वर में कहा, जिसने शीश देना है वह रेखा से पार हो जावे।" उधर कुछ सिंहों ने छत पर चढ़कर आवाहन किया कि "धर्म का जहाज तैयार है, आओ यदि किसी ने चढ़ना है तो चढ़ जाओ।" २५० में से १४० सिंहों ने रेखा पार की।...... अब सरदार हीरासिंह जी ने धर्मयुद्ध के लिये प्रस्तुत होने की प्रार्थना की, तथा विदा होते समय सतगुरु जी से पूछा, 'महाराज पहिला पड़ाव कहां किया जावे ?' सतगुरु जी ने कहा "है भी रब्ब, होसी भी रब्ब।" इसका अर्थ मस्तानों ने गाँव रब्बों समझा। १३ जनवरी १८७१ शनिवार वाले दिवस दिन ढलते ही शहीदी जत्था भैणी से मालेरकोटला की ओर चल पड़ा।

साहनेवाल के थानेदार ने हवलदार कलन्दरखां, हमीरसिंह, सुक्खू नम्बरदार, दौलतराम नम्बरदार तथा भगवाना चौकीदार जत्थे के पीछे कार्यवाही का पता रखने के लिये भेज दिये। गांव भैंणी से चलकर गांव लाटों से होता हुआ जत्था गांव रामपुर कटानी रियासत पटियाला में पहुंच गया। दोनों नम्बरदार गांव लाटों से लौट आये। इस पर अंग्रेज़ी इलाका की पुलिस ने वापिस साहनेवाल आ कर थानेदार को इसकी रिपोर्ट कर दी। थानेदार ने मुकाम दोराहा रियासत पटियाला के थानेदार को यह समाचार भेज दिया, जिसके इलाका में अब जत्था पहुंच गया था।"

थानेदार सरफराज़खां शाम की गाड़ी से महोत्सव के विषय में, तथा मस्तानों के जत्थे की इच्छा के सम्बन्ध में, लुधियाना रिपोर्ट देने के लिये पहुंच गया। आते ही उसने अपनी रिपोर्ट ज़िला के पुलिस अफसर को दे दी। क्योंकि यह रिपोर्ट अत्यंत आवश्यक थी, तथा इस सम्बन्ध में विशे - पेशबन्दियों की आवश्यकता थी, इसलिये पुलिस कप्तान डिप्टी कमिश्नर को सारी बात बताने के लिये थानेदार को अपने साथ ही उसके पास ले गया। मालेर-कोटला की रियासत की गद्दी का उस समय झगड़ा चल रहा था, तथा उस समय वहां कौंसिल का प्रबंध था। यह कौंसिल डिप्टी कमिश्नर लुधियाना के ही आधीन थी। इसी कारण डिप्टी कमिश्नर ही रियासत के प्रबंध तथा इस में शान्ति स्थापित रखने का उत्तरदायी था। डिप्टी कमिश्नर मि. काबन ने सारी रिपोर्ट सुनकर थानेदार को हुक्म दिया, कि वह स्वयं जाकर फूलकियां रियासतों के लुधियाना में रहने वाले वकीलों को नामधारियों के शहीदी जत्था के मालेर कोटला को प्रस्थान की सूचना दे। रात के दस ग्यारह बजे से पहिले पहिले यह समाचार लुधियाना में रहने वाले रियासतों के वकीलों अथवा एजेन्टों को पहुंचा दिये गये।

शहीदी जत्था लाटों, कटाणी, रामपुर, पैल गांवों के रास्ता होता हुआ आधी रात से पहिले गांव रब्बों थाना डेहलों जिला लुधियाना में पहुंच गया। रब्बों में नामधारियों के कुएं पर डेरा किया। १४ मिती को सायंकाल तक जत्था यहीं टिका रहा। यहां ही खाना बनाकर खाया। गांव वाले नाम-धारियों ने भी यहां ही खाना खाया। शहीदी जत्थे में सम्मिलित बाबा पहाड़ासिंह नामधारी का जन्म मलौद का था। वह मलौद के मालक सरदार बदनसिंह का मित्र था। मलौद वाला सरदार एक बार गुरु रामसिंह जी के पास भी उपस्थित हुआ था तथा सेवा के लिये विनय की थी। गांव रब्बों में यह विचार हुआ, कि काज़ी तथा उसके हमायतियों से बदला लेने के लिये यह आवश्यक

है, कि छोटे मोटे शस्त्र पास हों। प्रस्थान के समय सवा सौ के इस जत्थे के पास दातुनें काटने वाली तीन छोटी कुल्हाड़ियां ही थीं। शीश भेंट के लिये यह आवश्यक था, कि दो चार विरोधियों को भी पार लगाया जाय, क्योंकि इसके अतिरिक्त शीश भेंट के प्रण पूर्ण नहीं हो सकते थे।

यह विचार करके निर्णय किया गया, कि सरदार मलौद से शस्त्र मांगे जायें। रब्बों से चलकर जत्था सूर्यास्त के पश्चात् गांव मलौद में पहुंच गया। पश्चिमी द्वार से जत्थे के समस्त मनुष्य किला में सरदार बदनसिंह के पास आ गये। सरदार पहिले तो बहुत आदर सत्कार से मिला, परन्तु जब शस्त्र देने की बात चली तो उसने स्पष्ट रूप में ना कर दी। इस पर पहाड़ासिंह की सरदार से तूं-तूं मैं-मैं हो पड़ी। सरदार ने स्वाभाविक ही सरदारी का रौब जमाना चाहा। इस पर हड़ियायेवाली माई इन्द्रकौर ने सरदार को कुल्हाड़ी दे मारी, जिससे उसको थोड़ी सी चोट आई। वह भाग कर अन्दर जा घुसा। किले में शोर मच गया, तथा लोग एकत्रित हो गये। नामधारियों ने सरदार की एक तलवार तथा उसके सेवक जयमलसिंह की एक दुनाली बन्दूक ले ली। तबेले में से एक घोड़ा तथा दो घोड़ियां ही मिल सकीं। सरदार के आदमियों ने खतरे का नक्कारा बजा दिया। साथ के गांव खेड़ी के नम्बरदार तथा ८०-६० आदमी मलौद आ पहुंचे। हाथों हाथ लड़ाई होने लगी। सरदार के दो आदमी बूटा तेली कोचवान तथा मुन्शी नबीबख्श मारे गये। सरदार बदनसिंह तथा एक और पुरुष निहालसिंह घायल हुये। नामधारियों में से हंड़ियायेवाला नन्दसिंह तथा अतरसिंह खेत रहे।

शहीदी जत्थे का मालेरकोटला पहुँचना

मलोद की घटना के पश्चात शहीदी जत्थे ने मालेरकोटला की ओर प्रस्थान किया। पाँच कोस की मंज़िल तै करके जत्था आधी रात से पहिले ही कोटला की सीमा में पहुंच गया। नगर से बाहर एक कोस पर एक पुराने उपवन में डेरा डाला। सूर्योदय तक यहां ही रहे। रास्ते में जत्थेदारों ने एक बार फिर रेखा खींची और कहा "कि अब आगे वही चलें, जिन्हें शीश भेंट करना हो। शेष बेशक लौट जावें।"

नामधारियों के शहीदी जत्था के मालेरकोटला पहुंचकर सिर देने के प्रणों का समाचार लुधियाना के डिप्टीकमिश्नर मिस्टर कावन ने १४ तारीख की आधी रात से पहले रियासत मलेरकोटला के अफ़सरों को पहुंचा दिया था। परिणाम-स्वरूप मालेरकोटला के दरवाज़ों पर गार्दें खड़ी कर दी गई थीं। रात के समय एक गश्ती गार्द फ़सील के बाहर भी लगा दी गई थी। परन्तु सूर्योदय से कुछ पहले गार्दें हट गई थीं।

१५ जनवरी प्रातःकाल ही शहीदी जत्था नगर की फसील के बाहर ढाबी दरवाज़ा पर पहुंच गया। इस द्वार के अन्दर साथ ही कोतवाली थी। इस मुहल्ले में ही बूचड़ रहते थे, जो जमालपुर के रुहेले पठानों की शह पर गोवध करते थे। यहां एक स्थान से फसील टूटी हुई थी। कुछ नामधारियों ने इस टूटी हुई फसील के रास्ते अन्दर जाकर बड़े फाटक खोल दिये तथा जत्था नगर में प्रवेश कर गया और चोर मारों के मुहल्ले में पहुंच कर जहां बूचड़ तथा उनके हितैषी रहते थे, जयकारे लगाने आरम्भ कर दिये। नगर में खलबली मच गई। लोग प्राण रक्षा के लिये छत्तों पर चढ़ गये, तथा जत्थे वालों को ईंट पत्थर आदि मारने लगे।

जत्थे का निशाना गुरुमुखसिंह की दुहाई के अनुसार कोतवाल, काज़ी तहसीलदार तथा नाज़िम से बदला लेना था, जिन्होंने गुरुमुखसिंह के साथ

अन्याय तथा अत्याचार किया था। जत्था जयकारे लगाता हुआ सीधा किले के चौक में कोतवाली के सामने आ गया। सरदार हीरासिंह तथा लहनासिंह सबसे आगे घोड़ों पर चढ़े हुये हाथों में तलवारें थामें शहीदी जत्थे का नेतृत्व कर रहे थे। कोतवाली के सामने चौक में डटकर लड़ाई हुई। कोतवाल अहमदखां तथा उसके सात सिपाही मारे गए। मुन्शी हाफिजअली, शेरा तथा गैन्डा सिपाही बुरी तरह घायल हुए। मीराबक्श, झन्डा, कौड़ा तथा जस्सा अधिक घायल हुये तथा बीरा, गन्डा, कम्भा, माहियों, सूबेदार शहादतखान, गुलाममुहम्मद, खुदाइया तथा दीना को चोटें आईं।

घण्टा सवा घण्टे की घोर लड़ाई में जत्थे वालों के सात साथी मरे। वापिस जाते हुये जत्थे वाले अपने सब घायलों को साथ ही ले गये परन्तु वज़ीरसिंह एवं एक और सज्जन लड़ते-भिड़ते कहीं पीछे ही रह गये, इन्हें कोटला वालों ने पकड़ लिया।

दिन होने पर जत्था केलोंवाले द्वार के रास्ते नगर से बाहर आगया। घायलों की संभाल करने तथा खाना खाने के लिये यह विचार किया गया, कि गांव रड़ पहुंच कर पड़ाव किया जावे। यहां के ६ नामधारी गुरुदत्तसिंह, हीरासिंह, विशुनसिंह, कर्मसिंह, सुन्दरसिंह तथा हरनामसिंह शहीदी जत्था के साथ थे। वे शब्द कीर्तन करते, जयकारे लगाते रड़ गांव की ओर चल पड़े। कोटला के अफसर काज़ी खुदाबक्श, रिसालदार मीरांबक्श, रिसालदार सरमस्तखां, शेरखां सवार तथा नत्थू आदि भी जत्थे के पीछे-पीछे चल पड़े। यह लोग जत्थे से सीधी लड़ाई करने का साहस नहीं करते थे। एक दो बार हल्ले किए, परन्तु जब जत्थे वाले पीछे हटकर जयकारे लगाते हुए इनपर पड़ते, तो सब पीठ दिखाकर भाग लेते।

गांव भूदन के टीले पर दफादार समुन्दखां ने सरदार हीरासिंह को हाथों हाथ तलवार के युद्ध के लिये चुनौती दी। सरदार घोड़ा भगाकर समुन्दखां के सामने जा खड़ा हुआ, तथा उसको पहिला वार करने के लिये ललकारा। समुन्दखां ने पैंतरा बांधकर सिर को तलवार चलाई। सरदार ने ढ़ाल न होने के कारण बायां बाजू आगे कर दिया। वार खाली गया। तलवार बाजू को थोड़ा सा चाट गई। सरदार ने घोड़ा बढ़ाकर कनपटी का हाथ चलाया। समुन्दखां का सिर कद्दू की भांति कटकर नीचे धरती पर जा गिरा। घायल बाजू पर पट्टी बांधकर सरदार उसी प्रकार जत्थे का नेतृत्व करने लगा। जत्था आगे आगे जा रहा था, तथा कोटलावाले पीछे-पीछे चले जाते थे। जत्थेवाले

[1] Excerpt from the Firman-Shahi or Memorandum by His Highness—The *Maharaja of Patiala. Dated,* **19th *January* 1872.**

......"All those subjects of the State who went to Bhaini to Ram Singh, the leader of the abovementioned sect, on the occasion of the Lohari Festival, previous to the recent outbreak, must be arrested, and confined till such time as they prove to tho satisfaction of the Court that they did not participate in the disturbances. Arrangements must also be made that the members of this sect may not be allowed to assemble in an unlawful manner anywhere; and in such villages in which the Kukas reside they be placed in the custody of the Lambardars till further orders, with distinct injunctions that the Lambardars will be held answerable, if they are allowed to leavo their villages; and the Police be strictly directed not to allow the Kukas to assemble in any place, and if they find them in company they should at once arrest them, and forward them to the court to be punished according to Law."...The Nazims be also ordered to confiscate property of every description of all subjects of the State who attacked Malodh and Kotla,......... The men, who belong to this sect should also be arrested for the present."

---

[2] The Englishman. Dated 23rd March Satudray, 1872

Taken from an Address of Sikh Sardars and Nobles presonted to the Lieutenant Governor of the Punjab in a Darbar held in Ranjit Singh's garden, the Ram Bagh, Amritsar.

We the undersigned Sikhs of all classes of Amritsar, beg unanimously to submit that we have no connection or sympathy whatever with the Kuka sect which has recently become notorious; on the contrary we greatly differ from them on most religious principles. We are happy that the Government has adopted most appropriate and excellent measures for controlling this wicked and misguided sect, especially as the measures in question are calculated to deter ill-disposed people from committing mischief in future. Moreover, the Kukas do not differ from us in religious principles only, but they may be said to be our mortal enemies, since, by their misconduct and evil designs, they injured our honour in the estimation of the Government, and well nigh levelled with the dust the services we had rendered to the Government, such as these for instances performed in 1857, through which we were regarded as wellwishers and loyal subjects by the Government." 15 signatories

---

[3] Excerpt from a Letter of H.H. The Maharaja of Patiala to the Secretary, Government Punjab. Feb. 15, 1872.

....)....That from many proofs, it is quite certain, that Ram Singh's real

Contd. on Page No. 3

इस एकता को मिटा दिया जाय, पर उनकी सब कोशिशें नष्ट हुई हैं। वह लोग हमारे देश की एकता को नहीं मिटा सके। अगर हमने उस एकता को बनाये रखा, उसके मार्ग में अपने निजी स्वार्थों को न आने दिया, तो हमारा देश फिर अपनी पहली शान को प्राप्त कर लेगा। भारतीयों की भारत को अपने मातृभूमि समझने वाली एकता को देखकर यह मालूम होता है कि हिन्दुस्तान हजारों सालों से एकता की लड़ी में बंधा रहा है। हमें चाहिये कि जहां हम अलग अलग सभ्यताओं की रक्षा करते हैं, वहाँ हम सामूहिक सभ्यता अथवा देश एकता की भी रक्षा करें। यह जानकर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई है कि असहयोग और शान्ति के जिन शस्त्रों से हिन्दुस्तान इस समय अपनी आजादी का युद्ध लड़ रहा है; उसका प्रयोग सबसे पहले आप लोगों से ही आरम्भ हुआ। इस जगह जो दृश्य मेरे देखने में आया है, मैं उसे कभी भी न भूलूंगा।

अन्त में मैं गुरू जी और नामधारी बहिनों और भाइयों का धन्यवाद करता हूँ, जिन्होंने मुझे इतना सम्मान दिया और ऐसे सुन्दर स्थान के दर्शन कराये हैं।

जब भी लौटकर इनपर पड़ते, तो भाड़े के टट्टू पहिले ही भाग निकलते। चलते-चलते इस प्रकार कई झड़पें हुईं। मलेरकोटला वालों के साथ एक पुरुष था, जो अच्छा निशानची था। उसके पास केवल एक ही गोली थी। उसने शिस्त बांधकर निशाना मारा।" गोली हीरासिंह के हाथ में लगकर घोड़े को चीरती हुई चली गई। घोड़ा तो उसी समय मर गया, परंतु हीरासिंह बच गया। आगे टीला था उस टीले पर जाकर हीरासिंह ने बर्छा गाड़ कर बचन किया। "बापू जी का हुक्म इतना ही है। हम तो आगे तिनका नहीं तोड़ेगें"... । सिंह रड़ गांव आये, तलवारों की ढेरी लगा दी। हीरासिंह ने कहा, हमें जितना हुक्म श्री गुरु तेगबहादुर जी का था, उतना निभा दिया है। अब चले जावो घरों को जिन्हें जाना है। जिसने शीश देना है, वह देगें। तुम चले जावो अब। अब तलवार नहीं उठानी है, जैसी होगी देखी जावेगी। सिंहों को हीरासिंह जी वचन किया। "जिनको प्राण प्रिय हो वह अब भी चले जावें।" (सतगुरु विलास पन्ना ४१६)।

रड़ पहुँचने पर गांव वाले साथी तो अपने घरों को चले गये तथा शेष सारे सिंहों ने पीपल वाले कुंए पर पड़ाव किया। तेल कढ़ाई में डालकर गर्म किया गया। सरदार हीरासिंह ने पहिले नारायणसिंह के टुन्ड को तला। फिर अपना घायल बाजू गरम तेल में ड़ालकर तल लिया। सरदार हीरासिंह के रिश्तेदारों तथा गांव वालों ने सेवा की। सतगुरू विलास पन्ना ४१६ पर लिखा है। "भाई हीरासिंह ने सावनसिंह को बचन किया, शहीदी देनेवाले कितने सदस्य हैं," सावनसिंह ने कहा ७०। हीरासिंहजी ने कहा ७२ चाहिये थे। उसी समय दो किसान हाथों में दरांतीयां लिये आकर जत्थे में बैठ गये। हीरासिंह ने कहा "तुम क्यों फंसते हो ?" उन्होंने उत्तर दिया "हम भी साथ ही शीश देगें।" दूध था, खीर बनाई, छककर निश्चिन्त होकर विराजे।"

जत्थे का गिरफ्तार होना

जत्थे के अपने आप को गिरपतार कराने का वर्णन, 'संत खालसा अर्थात् इतिहास नामधारी, कर्त्ता सरदार हरनामसिंह गाँव बगुली कलां, जिला लुधियाना सम्बत् १९९१ की छपी पुस्तक में इस प्रकार दिया है।

सुधारे हैं जालिम हमने।
आओ अब हम भी हों तैयार॥
गवर्नमेन्ट के चलकर पास।
अपने आप हम हों गिरफ्तार॥
स्वयं ही करें स्वीकार अपराध।
न हों कहीं को हम फरार॥
देकर धर्म हित शीश 'हरिनाम"।
अब भवजल से हों हम पार॥

कर्ता पृष्ठ ३७ पर लिखता है, कि "हमारे गांव बगुली के रामसहाय तथा समुन्दसिंह उस समय गांव रड़ आये हुए थे। वे आंखों देखा हाल यूं बताते थे। जत्थेवालों ने परामर्श किया कि शीघ्र ही सरकार के पास चलो और बलिदान प्राप्त करो......।" "इस शहीदी जत्थे" ने गांव रड़ आकर कूक-कूक कर कहा, हम मरना चाहते हैं। हमें कोई सज्जन सरकार के पास ले चलो। हम किसी को मारने में वीरता नहीं समझते, बल्कि स्वयं मरने में वीरता समझते हैं।"

गाँव रड़ में विश्राम लेकर तथा खाना खाकर जत्था साथ के थाना शेरपुर की ओर चल पड़ा। अपने आप गिरपतार होने की अनसुनी तथा असम्भव सी बात को सुनकर गांव रड़ के जयमलसिंह, उत्तमसिंह, और कई पुरुष तथा रामनगर का नम्बरदार पंजाबसिंह भी जत्थे के साथ ही चल पड़े। जत्थेवाले सतश्रीअकाल के जयकारे लगाते तथा कीर्तन करते हुए रात के समय शेरपुर पहुँच गये। थानेदार को

सारा बृतान्त सुनाकर तथा इकबाली बयान देकर सिंहों ने अपने आपको गिरफ्तारी के लिये पेश कर दिया।

अमरगढ़ का सहायकनाज़िम सैय्यद निआज़अली भी उस समय शेरपुर में ही था। उसने जत्थे को गढ़ी में बन्द कर दिया। महाराजा साहिबबहादुर को पटियाला में तथा कोटला के अफ़सरों को कोटला में समाचार भेज दिये गये। पटियाला के मुन्शीखाना विभाग ने यह समाचार अपने लुधियाना के एजेन्ट को अंग्रेंजी हाकिमों तक पहुंचाने के लिये हुक्म दिया।

१६ तारीख की सायं को महाराजासाहिब पटियाला के लुधियाना वाले एजेन्ट तथा वकील ने कमिश्नर साहिब फोरसाईथ को इस प्रकार की सूचना दी, "७० के लगभग कूकों की एक टोली जिनमें कइयों के पास बन्दूकें थीं, कइयों के पास तलवारें, शेष के पास गंडासे तथा लट्ठ थे, मलेरकोटला से शेरपुर पहुंची। शेरपुर मालेरकोटला से १३ मील पर है। उन्होंने अपने आपको अमरगढ़ के नाज़म के सुपुर्द कर दिया है। इनमें से तीस आदमी घायल हैं। यह समस्त स्वयं स्वीकार करते हैं, कि वे कोटला के हल्ला में सम्मिलित थे। जो कूके इस हल्ला में सम्मिलित थे उनकी संख्या १२५ से अधिक नहीं थी।" खोज करने पर जत्थे की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में पटियाला रियासत वाले एजेन्ट तथा वकील की पहिली रिपोर्ट ही शुद्ध प्रतीत होती है।

यथार्थ में यह प्रतीत होता है कि नियाज़अली, थानेदार अथवा कोई और पुलिस का आदमी कूकों के रड़ पहुंचने का समाचार सुनकर डरता हुआ वहां गया ही नहीं था।

शहीदी जत्थे के मलोद से प्रस्थान करने के पश्चात् सरदार बदनसिंह ने कूकों के साथ लड़ाई होने तथा दोनों ओर के कुछ आदमियों के मरने तथा घायल होने की सूचना इलाके के थानेदार को डेहलों थाना में भेजी। सरदार की सूचनानुसार यह समाचार पुलिस कप्तान को भेज दिया गया। जिसने मि० कावन डिप्टी कमिश्नर से सारी बातचीत की। मि० कावन को यह समाचार सुबह ही मिल गया।

इस पर मि० कावन तथा ज़िले का पुलिस कप्तान लेफ़्टिनेंट कलनल पर्किज सिपाहियों के साथ मलौद को चल पड़े। ज़िला के सिविल सर्जन मि० जे० इंज़ को सुबह आठ बजे १५ जनवरी सोमवार को पुलिस कप्तान द्वारा इस अभिप्राय की हिदायत मिली, कि वह भी मलोद की घटना में मरे हुए तथा घायलों का निरीक्षण करने के लिये मलोद पहुंच जाएं।

मि० कांवन ने मलौद को जाने से पहिले पंजाब सरकार के सचिव को जो उस समय गवर्नर के साथ देहली में हो रहे फौजी जल्से पर गया हुआ था, निम्नलिखित तार दिया :—

"२०० कूकों ने पिछली रात मलौद के किले पर आक्रमण किया। सरदार बदनसिंह को घायल कर दिया तथा दो पुरुष जान से मार दिये, एक कूका मारा गया है तथा दो बन्दी हैं। मैं अभी जा रहा हूं। शेष रिपोर्ट डाक द्वारा।"

१५ जनवरी को अम्बाला के कमिश्नर को भेजी गई अपनी रिपोर्ट में मि० कावन लिखता है:—

"महाराजा पटियाला को तार तथा पत्र द्वारा सूचना दी गई है, कि गांव सकरौदी रियासत पटियाला के हीरासिंह तथा लहनासिंह इस जत्थे के नेता बताये जाते हैं। उसे कहा गया है कि वह उनको गिरफ्तार करे तथा हमें सहायता दे। मैंने (गुरु) रामसिंह तथा उसके मुख्य सूबों को मलौद में पूछताछ करने के लिये बुला भेजा है। मैं आशा करता हूं कि जत्थेवाले सब आदमी पहचाने जायेगें।"

पंजाब सरकार के सचिव ने यह तार भारत सरकार के गृहसचिव को उसी दिन भेज दिया, उसने अपनी और से इसमें यह शब्द बढ़ाये।

"यह अपराध कूकों के बहुत बड़े साहस को प्रगट करता है।"

इसके उत्तर में वायसराय ने पंजाब के गवर्नर को १६ जनवरी को यह तार दिया।

"आप का कल वाला तार मिला, अब यह बात आवश्यक है, कि अधिकतम, अनुभवी अफसर ढूंढ़कर घटना वाले स्थान पर तफतीश के लिये भेजा जावे। सबसे आवश्यक बात यह है, कि इस मुआमले की सब घटनाओं का बिना ढील के विश्लेषण किया जावे तथा तथ्य ढूंढ़ा जावे ताकि सरकार को इस अति चिन्तादायक उपद्रव के फैलने के वास्तविक कारणों तथा इसमें भाग लेने वाले पुरुषों के सम्बन्ध में किसी असत्य सूचना के मिलने की कम से कम सम्भावना भी न रह जावे।"

डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस वाले अभी मलौद पहुंचे ही नहीं थे, कि रियासत कोटला के एक सवार ने डिप्टी कमिश्नर को सूचना दी, कि उसी दिन सुबह ही कूकों के जत्थे ने मालेरकोटला पर हल्ला कर दिया था। सवार ने यह भी बताया, कि जब वे कोटला से समाचार लेकर चला था, उस समय

कूकों ने शहर के गिरद घेरा डाला हुआ था तथा डटकर लड़ाई हो रही थी। इसपर मि० कावन ने उतावली से एक तार पंजाब सरकार को फौज भेजने के लिये लिखा। कोटला से आये हुये सवार को ही यह तार देकर लुधियाना दफ्तर में भेज दिया ताकि यह तार शीघ्र ही भेज दिया जाव।

पंजाब का गवर्नर तथा मुख्य सचिव मि. ग्रिफन इन दिनों देहली में एक बड़े फौजी सम्मेलन में शामिल होने के लिये आये हुये थे। महाराजा महेन्द्रसिंह साहब पटियाला भी देहली में ही थे।

१५ जनवरी को दोपहर के लगभग मि. कावन, मि. परकिन्ज़ तथा पुलिस के आदमी मलौद पहुंच गये। मि. इन्ज़ सिविल सर्जन भी घोड़े पर चढ़कर सायंकाल तक उन्हें जा मिला। वर्षा होने के कारण सिविल सर्जन को रास्ते में देर हो गई थी। सहायक सिविल सर्जन मिर्ज़ा अमीर-बेग भी औषधियां, डाक्टरी के यन्त्र तथा मरहम पट्टी लेकर सिविल सर्जन के साथ ही मलौद पहुंच गया था। सरदार के पकड़े हुये घायल कूकों को पुलिस ने अपनी हिरासत में ले लिया। मि० कावन लिखता है, कि मलौद पहुंचने पर ७ आदमी दोषियों के रूप में मेरे सामने पेश किये गये। इनमें से चार घायल घटनास्थल पर ही पकड़े गये थे। गवाहियों तथा उनके अपराध स्वीकृति के बयानों से उनके विरुद्ध पूरा-पूरा प्रमाण बन जाता है। भगवानसिंह, ज्ञानसिंह तथा थम्मनसिंह रियासत पटियाला के रहने वाले हैं। मेहरसिंह अलावलपुर ज़िला जालंधर का है। यह सब कूके हैं। बाकी तीन के विषय में अभी सन्देह है, कि वे आक्रमण में सम्मिलित थे अथवा नहीं। उन पर और अपराधों में मुकद्दमा चलाने के लिये उन्हें संरक्षण में रख लिया गया है।"

सिविल सर्जन ने अपनी रिपोर्ट मे लिखा, कि मलौद वालों के दो आदमी मारे गये तथा दो घायल हुये। तथा कूकों में से दो मरे और चार घायल हुये।

मि. कावन ने १६ जनवरी की सुबह को निम्नांकित तार कमिश्नर को दिया जो पंजाब सरकार ने उसी दिन हिंद सरकार को कलकत्ता भेज दिया। "तफ़तीश चल रही है। मैं आशा करता हूं, कि समस्त घटनाओं तथा इनमें भाग लेने वाले समस्त पुरुषों के नामों का पता चल जायेगा। मैं आज रात अथवा कल कोटला चला जाऊंगा। यह निश्चित रूप में पता नहीं चला, कि विद्रोही कूके कहां हैं ?"

१६ जनवरी मंगलवार वाले दिन दोपहर को ११ बजकर ५० मिनट पर पंजाब के गवर्नर ने दिल्ली से वायसराय को कलकत्ते में निम्नलिखित तार दिया।

"मलौद पर कूकों के आक्रमण की रिपोर्ट पहिले दी गई है। इसके साथ ही कूकों ने प्रातःकाल कोटला पर आक्रमण कर दिया। कोटला के सात आदमी मारे गये हैं। कूकों की संख्या ५०० के लगभग थी। डिप्टी कमिश्नर लुधियाना के फौज की मांग करने पर एक देसी पैदल रेजमेन्ट, गोरखों की कम्पनी, रसाला के दस्ते आज सुबह ही अम्बाला तथा लुधियाना के मध्य-स्थान गांव खन्ना में भेज दिये गये हैं। डिप्टी कमिश्नर ने तार दी है, कि बहुत से कूके मालेरकोटला में घेर लिये गये हैं तथा नाभा से रसाला भी उसके पास पहुंच गया है। परन्तु मैंने फिर भी इस फौज को जाने से नहीं रोका। पहिली घटनाओं के साथ ही इन उपद्रवों के होने से यह पता चलता है, कि इस सम्प्रदाय के नेताओं ने एक भयानक विनाशकारी षड्यंत्र की रचना की हुई है। जब तक यह नेता आजाद हैं, हमारे शासन को भय ही भय है। इसलिये मैंने अपनी ओर से मि. फोर्थसाइथ को गुरु रामसिंह तथा मुख्य सूबों को पकड़ने के अधिकार दे दिये हैं। रिपोर्ट डाक द्वारा।"

इसके उत्तर में वायसराय ने कलकत्ते से गवर्नर पंजाब को १६ जनवरी को यह तार भेजा, "तुम्हारी कार्यवाही को पूरी पूरी पुष्टि करता हूं। अधिक गतिविधि की प्रतीक्षा में हूं।"

मलौद पर आक्रमण का तार जब गवर्नरसाहब को देहली में मिला, तो उसने शीघ्र ही अम्बाला डिवीजन के कमिश्नर मिस्टर फोर्थसाइथ को लुधियाना पहुंचकर पूर्ण रिपोर्ट भेजने के लिये आवश्यक हिदायतें कर दीं। उसके गाड़ी चढ़ने से पहिले कोटले के आक्रमण की रिपोर्ट भी गवर्नर को मिल गई थी। इस पर उसने कमान्डर-इन-चीफ (प्रधान सेनापति) के साथ परामर्श किया, तथा यह प्रबंध किया गया, कि एक नम्बर गोरखा पलटन, बारह नम्बर रेजिमेन्ट की कम्पनियां, तथा एक खच्चरों की बातरी कोटला के निकट खन्ना में पहुँच जावे। १२ रसाला का एक ट्रूप भी इनके साथ ही जावे। लुधियाना की रक्षापंक्ति को दृढ़ करने के लिए ५४ नम्बर पलटन की तीन कम्पनियां तथा गोरखों के तोपखाने की आधी टुकड़ी को वहां भेज दिया जावे।"

१६ तारीख को गवर्नमेन्ट पंजाब के कार्यवाहक सचिव मि० एल० एच० ग्रिफन ने हिंद सरकार के सचिव मि० ए० सी० बेली को लिखे पत्र के अन्त में लिखा :—

"गवर्नर साहिब ने गुरु रामसिंह तथा उसके बड़े और सम्माननीय सूबों साहबसिंह, रूढ़सिंह, लक्खासिंह, काहनसिंह, ब्रह्मासिंह, जवाहरसिंह, मलूकसिंह तथा हुक्मसिंह को पकड़ने के आदेश दे दिये हैं । गुरु रामसिंह की गिरफ्तारी शीघ्रातिशीघ्र की जावेगी । गिरफ्तारी के विषय में सब बातचीत और विस्तृत परामर्श अम्बाला के फौजी डिवीज़न के जनरल मि० टायटलर, और अम्बाला के कमिश्नर के साथ कर लेंगे । यदि यह सारे व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये, तो सबको तत्काल इलाहाबाद भेज दिया जायगा, क्योंकि गवर्नर साहब के विचारानुसार इन्हें पंजाब में रखना ठीक नहीं । इन सबको इलाहाबाद से आगे कहां भेजा जाय, यह गवर्नर साहब पश्चात् विचार करके भेजेंगे । इस समय हम विनय करते हैं, कि वायसराय साहब बहादुर इन समस्त उक्त सज्जनों के विरुद्ध रेग्यूलेशन नं. ३ सन् १८१८ के अनुसार वारन्ट जारी कर दें।"

"अभी तक इतने कम समाचार मिले हैं, कि जिनके आधार पर इसी समय यह कहना कठिन है, कि कूके भविष्य में कौन सा पथ अपनायेंगे ? गवर्नर साहब को इस बात की आशा है, कि उक्त कार्यवाहियां करने से देश में तत्काल शान्ति तथा विश्वास पुनःस्थापित हो जावेगा । गवर्नर साहब इन कार्यवाहियों का होना नितान्त आवश्यक समझते हैं तथा इन्हें विश्वास है कि वायसराय साहब बहादुर इन कार्यवाहियों के लिये अपनी सम्मति देंगे।"

१६ तारीख को गुरु रामसिंह जी ५ सूबों के सहित घोड़ों पर चढ़कर भैणी से दोपहर के समय तक मलौद पहुंच गये । आप डिप्टी कमिश्नर के निमन्त्रण पर ही यहां आये थे । डिप्टी कमिश्नर कोटला जाने के लिये बहुत उत्सुक था । डिप्टी कमिश्नर ने आपसे थोड़ी सी बातचीत की तथा कहा कि यदि आपकी आवश्यकता हुई, तो आपको लुधियाना में बुला लिया जायेगा । आप ने मि० कावन के इस प्रकार के व्यवहार को बहुत बुरा माना ।

गुरु रामसिंह जी के मलौद जाने का प्रसंग 'सतगुरु विलास' पृष्ठ ४१७ पर इस प्रकार अंकित है—"थानेदार ने कहा कि मलौद में फिरंगी ने याद किया है । वे ५ सिंहों के साथ चले । बाबा जवाहरसिंह, बाबा कान्हसिंह, बाबा साहिबसिंह, खज़ानसिंह तथा जोगासिंह । गुरु जी लाल घोड़ी पर सवार हुये। साथ एक गाड़ी थी, जब आध कोस गये तो आप गाड़ी में बैठे और घोड़ी एक साथी को दे दी। रात गुड़थुड़ी गांव में जाकर रहे। रातको विराजे नहीं। साथियों से कहा कि इस समय तुम्हारा झाड़-झाड़ बैरी है । प्रातःकाल चलकर

मलौद गये......जब फिरंगी के पास गये तो फिरंगी ने कहा यह देखो तुम्हारे सिंहों ने लड़ाइयां की ह । एक दारोग़ा मारा, दूसरा काज़ी मारा है । तुम्हारे सिंह भी दो मरे हैं, मलौद के सरदार के पुत्र को कुल्हाड़ी मारी है ।"

गुरु रामसिंह जी मलौद से लौटते हुये गांव सियाड़ आकर ठहरे । गांव विक्खी वाले बनिये नामधारी सावनसिंह ने यहीं आकर मालेरकोटला के आक्रमण का वृत्तान्त सुनाया ।

१६ जनवरी की रात तथा १७ जनवरी के दिन भी सियाड़ में टिके रहे । सियाड़ वैठे ही १७ जनवरी की सायं को मालेरकोटला में चलनेवाली भरमार तोपों के धड़ाके तथा गूंजें अपने कानों सुनीं । इन तोपों से नामधारी उड़ाये जा रहे थे ।

मलौद से चलने से पहिले मि० कावन ने निम्नलिखित तार लिखकर लुधियाना से पंजाब सरकार के नाम भेजने के लिये हरकारे के हाथ भेजा :—

"मि० कावन की ओर से, स्थान मलौद । सचिव पंजाब गवर्नमेन्ट देहली के लिए; तारीख १६ जनवरी १८७२ ।

"मलौद के चार हत्यारों के विरुद्ध पक्का प्रमाण है । आज्ञा दें कि मैं उन्हें घटनास्थान पर ही फांसी देकर मार दूं । शीघ्रतम दंड देना अत्यन्त आवश्यक है । मैं कोटला जा रहा हूं ।" यह तार लुधियाना से १६ तथा १७ तारीख की अन्तर्गत रात को ६। बजे देहली भेज दिया गया ।

१६ तारीख की दोपहर को डिप्टी कमिश्नर, पुलिस कप्तान, सिविल-सर्जन मि. इन्ज तथा शेष कर्मचारी मलौद से मालेरकोटला की ओर चल पड़े । रास्ते में जींद तथा नाभा के रसाले कोटला की ओर जाते हुये उन्हें मिले । सैयद नियाजअली भी कोटला से होकर मि० कावन को मिलने के लिये सड़क पर आता हुआ मिला । सैयद नियाज़अली ने मि० कावन को बताया, कि उसने कूकों का पूर्ण जत्था गिरफ्तार करके शेरपुर की गढ़ी में बन्द कर दिया है । यह समाचार सुन कर मि० कावन ने मालेरकोटला पहुंच कर गवर्नर पंजाब को तार दिया—"शान्ति पुनः स्थापित हो गई है । १०० के लगभग कूकों में से कुछ मारे गये हैं, कुछ घायल हुये हैं, तथा कुछ बन्दी किये गये हैं । पटियाला, नाभा और जींद के नरेश पूर्ण सहायता दे रहे हैं ।"

मि. कावन तथा उसके साथियों ने कोटला नगर के लोगों को धैर्य दिलाया । सिविल सर्जन ने मरे हुये कूकों को देखा तथा घायलों की मर्हम पट्टी

की। मि. कावन ने सायं को साढ़े सात बजे निम्नलिखित पत्र मि. फोरसाइथ कमिशनर को लिखा :—

(१) "आपके कल वाले तार, जिसमें आपने मुझे बताया था कि आप आज सायंकाल तक लुधियाना पहुंच जावेंगे तथा जिसमें यह आदेश भी था कि आपके पहुंचते ही समस्त रिपोर्ट आपको मिल जावे," के उत्तर में निवेदन है कि यह तार मुझे अभी मिला है, इस पर मैं आपको रिपोर्ट देता हूं, कि शान्ति पूर्णरूप से स्थापित हो गई है तथा अब आपके कोटला पहुंचने की कोई आवश्यकता नहीं।"

(२) विद्रोही नामधारियों का टोला, यद्यपि कोई और (उचित) नाम उनके कार्य के विषय में नहीं दिया जा सकता, १२५ से कभी अधिक नहीं हुआ। इनमें से दो तो मलौद में ही मारे गये तथा ४ बन्दी बनाये गये थे। कोटला में आठ मारे गये तथा ३१ घायल हुये। इन घायलों में से पच्चीस अथवा छब्बीस घटनास्थल से बच निकले। परन्तु ६८ मनुष्य जिनमें से २७ घायल हैं, रियासत पटियाला के गांव रड़ में पकड़ लिये गये हैं। लगभग सम्पूर्ण गिरोह तितरबितर हो चुका है। मैं इन बन्दियों को कल प्रातः सूर्योदय के साथ ही तोपों से उड़ा दूंगा अथवा फांसी पर लटका दूंगा।"

(३) इनका अपराध साधारण नहीं है। वे केवल हत्या तथा डाका डालने के दोषी ही नहीं, वह खुल्लम खुल्ले रूप में विद्रोही हैं। उन्होंने न्याय पर आधारित शासन का धृष्टतापूर्ण तथा हठ भरा मुकाबला किया है। इस रोग को बढ़ने से पहिले ही यह अत्यन्त आवश्यक है, कि इनके विरुद्ध शीघ्रातिशीघ्र अति कड़ी निरोधात्मक दमनकारी कार्यवाहियां की जावें।

(४) मैं जिस बड़े दायित्व को उठाने लगा हूँ, उसके विषय में भली प्रकार सचेत हूँ, परन्तु इस बात से सन्तुष्ट हूँ, कि मैं यह काम सरकार के हित में कर रहा हूँ, क्योंकि इस विद्रोह की जड़ आरम्भ में ही उखाड़ देनी चाहियें।"

यह पत्र पढ़ते ही मि. फोर्यसाइथ ने लुधियाना से मि. कावन के नाम यह नोट लिख भेजा। "जब तक मेरी भेजी हुई गार्द अपराधियों को लुधियाना लाने के लिये तुम्हारे पास न पहुँचे, अपराधी शेरपुर ही में रखे जावें। लुधियाना लाकर इन पर यथाविधि न्यायालय में मुकद्दमा चलाया जायगा।" मि० कावन को यह नोट दूसरे दिन जत्थे के कोटला पहुँचने से पहले ही मिल चुका था, परन्तु उसने इसको पढ़कर जेब में रख

लिया तथा इस पर कुछ अमल न किया । वास्तव में मि. कावन स्वेच्छा से ही बिना किसी बड़े शासक तथा सरकार की आज्ञा के कूकों को मारने की दृढ़ प्रतिज्ञा किये बैठा था ।

मि. फोर्थसाइथ मि० कावन के तारों तथा पत्रों से इस परिणाम पर पहुँचा था, कि मि० कावन जोश तथा शेखी में आकर बन्दी कूकों को नियम विरुद्ध मार देने के लिये प्रस्तुत है । इसलिये उसने १७ जनवरी की सुबह ही निम्नलिखित पत्र लिखकर मालेरकोटला भिजवा दिया—"मैं आपके १६ जनवरी की ७॥ बजे कोटला से लिखे हुये पत्र की पहुंच देता हूँ । "कूकों का जो जत्था अब पटियाला रियासत की सीमा में पकड़ा हुआ है, उसने दो पृथक् पृथक् अपराध किये हें । एक अपराध अंग्रेज़ी राज्य की सीमा में किया है, दूसरा अपराध रियासत मालेरकोटला की सीमा में । जो जुरम मालेरकोटला की रियासत की सीमा में किये गये हें, उनके लिये रियासत के कर्मचारियों को अपराधियों पर मुकदमें चलाने तथा दंड देने के पूर्ण अधिकार हैं । परन्तु यदि अपराधियों को प्राण दंड दिये जावें तो दंड को क्रियात्मक रूप देने के लिये मुकद्दमों की फायल कमिश्नर के पास स्वीकृति के लिये भेजनी आवश्यक है ।"

"इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप उन आदमियों के विरुद्ध, जिन्हें आप प्राण दंड के योग्य समझते हैं, मुकद्दमे की मिसलें तैयार कर रक्खें, उन पर मैं शीघ्र ही आदेश दे दूंगा । आपकी तत्काल आदेश मांगने की दृढ़ इच्छा को अधिक आवश्यक नहीं समझता । इसलिये हमें न्याय की अति सरल रूप में रेखा पर ही चलना चाहिये । मैं शीघ्रातिशीघ्र मालेरकोटला पहुंचने का निश्चय किये बैठा हूँ ।"

मि० कावन ने इसके पश्चात् अपनी सफाई देते हुए अपने बयान में यह माना था, कि यह पत्र उसको उस समय मिला, जब वह ४२ आदमियों को तोपों से उड़वा चुका था तथा एक को तलवारों से काट दिया गया था। यह पत्र पढ़ कर उसने और कुछ करना उचित न समझा तथा पत्र पढ़ कर मि. परकिन्ज को दे दिया । इस पत्र में दिये गये आदेश को न मानने के लिये मि. कावन ने अपनी सफाई में बहुत भोंड़े यत्न किये तथा बहाने बनाये ।

मि. फोरसाईथ अत्यन्त घबड़ाया हुआ था। एक उत्तरदायी अधिकारी होने के नाते वह इस बात से भयभीत था, कि मि० कावन कहीं अपनी इच्छा-

श्री जवाहरलाल जी नेहरु स्वागती पत्र का जवाब दे रहे हैं (भैंणी साहब का यात्रा समय)

श्री जवाहरलाल नेहरु भारत के अंग्रेजों की दासता से स्वतंत्र होने के पश्चात् नामधारी केन्द्र भैंणी साहब की यात्रा समय श्री गुरु प्रतापसिंह जी का स्वागती पत्र सुन रहे हैं गले में सूत की माल ।

नुसार ही कॉम करके सरकार के गले व्यर्थ निन्दा न डाल दे। अतः उसने उसी दिन एक और पत्र मि. कावन को लिखा, जो इस प्रकार है।

"मेरे प्यारे कावन, आपने प्रशंसा योग्य कार्य किया है, परन्तु भगवान् के लिए कोई ऐसा काम न कर बैठना, जिससे सारे काम की सफलता में बाधा आ जावे।"

"कोटला के इलाके में जो दोषी पकड़े गये हैं, उनको चीफ कोर्ट की स्वीकृति लेने के बिना ही न्याय के रूप में तत्काल फांसी दी जा सकती है। साधारण नियम यही है, कि ऐसे मुकद्दमे कमिश्नर अथवा मेरे पास स्वीकृति के लिये भेजे जाते हैं। मैं इस समय यह संकट दूर करने के लिये शीघ्रतम कोटला आ रहा हूँ। मैं गुरु रामसिंह वाली बात का निर्णय करके यहां से चलूंगा। परन्तु यदि तुमने बन्दियों को स्वयं ही फांसी पर लटका दिया तो तुम पूर्ण सफलता के स्थान से नीचे गिर जाओगे। मैं केवल गुरु रामसिंह के कल प्रातः तक यहां पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। उसके पश्चात् मैं तत्काल चल पड़ूंगा।"

इस पत्र के पहुंचने का कुछ पता नहीं चलता। अनुमान है कि यह पत्र मि० कावन को अवश्य मिला होगा, परन्तु उसके सिर पर खून सवार था। यह पत्र भी उसने इधर उधर कर दिया था।

१६ तारीख को कमिश्नर फोरसाइथ ने पंजाब सरकार के सचिव को देहली में यह तार दिया जो उसने हिंद सरकार के गृह सचिव को कलकत्ता भेज दिया। "जालंधर की गोरा फौजो कंपनियां लुधियाना आ गई हैं। अब यहां पूर्ण शान्ति है। ७० कूके जो कोटला के युद्ध में अति घायल हुये थे, पटियाला की रियासत के गांव शेरपुर में पकड़े हुए हैं। सम्भव है कि इनकी संख्या इतनी ही हो। पहले बताई गई संख्या, दोषियों को दी गई सूचनाओं के अनुसार स्पष्टतया अकथनीय थी। गुरु रामसिंह जी आज मि० कावन के पास था, और उसको यहाँ आने के लिये बुलावा भेजा गया है।"

१७ तारीख बुधवार को महाराजा पटियाला ने पंजाब सरकार को देहली में निम्नलिखित तार भेजा :—

"कल १६ जनवरी ११ बजे सुबह मेरे अमरगढ़ के उपनाजम न्याज़अली ने केवल कुछ आदमी साथ लेकर उन ६८ कूकों को पकड़ लिया है, जिन्होंने कोटला तथा मलौद में उपद्रव किये हैं। उनमें से २९ घायल हैं। उनके नेता हीरासिंह तथा लैहनासिंह भी पकड़े गये हैं। विस्तृत विवरण डाक द्वारा।"

• १६ जनवरी को जब उपनाजिम न्याज़अली मि. कावन को मिला, तो मि० कावन ने शेरपुर की गढ़ी में बन्द समस्त नामधारियों को कोटला लाने का आदेश दिया। मि० कावन का विचार था, कि कूके बंदी सूर्योदय से पहले ही मालेरकोटला पहुंच जावेंगे तथा वह उनको सूर्योदय से पहले पहले जान से मारकर काम समाप्त कर देगा, परन्तु बन्दी सूर्योदय से पहले न पहुंचे। इस समय मि. कावन ने १७ जनवरी प्रातःकाल कमिश्नर अम्बाला को जो अभी लुधियाना में ही था, पूर्ण परिस्थिति का परिचायक एक पत्र लिखा।

इस पत्र की निम्नलिखित बातें ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

(३) जत्था भैणी से १३ जनवरी को दो बजे दोपहर के पश्चात् चला। १० बजे रात गाँव रब्बों पहुँचा। रब्बों मलौद से ३॥ मील है। जत्था गांव रब्बों से बाहर एक कुओं पर जो गांव से ४०० या ५०० कदम है, ठहरा। साहनेवाल के थानेदार ने १३ तारीख की रात को लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर को जत्थे की इच्छाओं के सम्बन्ध में सूचना दी। डिप्टी कमिश्नर ने रात के ११ बजे के लगभग कोटला तथा पटियाला के रियासती एजण्टों को अपनी अपनी हकूमतों को जत्थे के विषय में सूचनायें भेजने के लिये आदेश दे दिये।

(४) १३ तारीख की रात तथा १४ का दिन कूके गांव रब्बों में रहे। उनकी संख्या लगभग १५० थी। रब्बों से जत्था सायंकाल चला। रात्रि के समय मलौद पहुंचा। मलौद में पारस्परिक लड़ाई में दो आदमी मरे। सरदार घायल हुआ। मलौद से कूकों के हाथ तीन घोड़े, एक बन्दूक तथा एक तलवार लगी। कूकों के दो आदमी मारे गये तथा ४ घायल कैदी बनाये गये।

(६) मलौद से कूके कोटला की ओर चले, जो ९ मील की दूरी पर है। १५ तारीख की प्रातः को ही वे मलेरकोटला आ पहुँचे। रियासत के कर्मचारियों को कूकों के आक्रमण का समाचार १४ की रात को ही पहुँच गया था। अतः उन्होंने गार्दों का प्रबन्ध किया हुआ था। कूकों ने सात बजे आक्रमण किया, वह सीधे राजमहल और कोतवाली की ओर गये। कोतवाल अहमदखाँ तथा उसके आदमियों से किले के चौक के सामने लडाई हुई। अहमदखाँ दिलेरी से लड़ता हुआ मारा गया। सात और भी मरे तथा १५ घायल हुये। कूके यहाँ से दो घोड़े तथा कुछ तलवारें साथ ले गये। कोटला के बहुत से आदमी कूकों के जत्थे के पीछे पीछे चल पड़े। आपस में भाग दौड़ की लड़ाई होती रही, कोटला वाले दूर से ही बन्दूकें चलाते रहे तथा उन्होंने बहुत से कूके घायल कर दिये। आते जाते दोनों दल रियासत पटियाला के गाव रड़ पहुँच गये। कूके अपने घायलों को साथ ही उठा कर

ले गये। रड़ में एक घायल कूके ने कोटला के कर्मचारियों को बताया कि जत्था अभी लौटकर जाना चाहता है तथा दुबारा कोटला पर आक्रमण करेगा। कोटला के अफसरों ने यह सुन कर इसी बात में चतुराई समझी कि शेरपुर में रहने वाले रियासत पटियाला के अफसरों को कूकों के विषय में समाचार भेजकर वापिस कोटला पहुंचा जावे।

(७) कूकों के कोटला पर आक्रमण तथा रड़ गांव पहुंचने की सूचना मिलते ही नाज़म शेरपुर से रड़ आ गया। उनके साथ केवल तीन सवार थे। कूके एक टीले पर बैठे हुये थे। वह भूखे थे तथा थके हुये थे। थोड़े से वाद-विवाद के पश्चात् कूकों ने अपने शस्त्र दे दिये तथा सबने ही अपने आपको उपनाजिम के हवाले कर दिया। इनमें एक स्त्री भी थी। २६ घायल थे। जिनमें से ७ तो अत्यन्त ज़ख़मी थे। नाभा तथा जींद के राजाओं ने सूचना मिलने के एक घण्टे के अन्दर अन्दर तोप खाना, पैदल तथा रसाले कोटले भेज दिये हैं।

इस पत्र के अन्तिम अनुच्छेद में मि. कावन कूकों के विषय में अपने मन के क्रोध तथा घृणा के उद्‌गारों को दबा न सका और उसने लिखा कि "मैं प्रतिक्षण गांव रड़ वाले बन्दियों के पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहा हूं। मैं उन सबको जो मलौद तथा मलेरकोटला के आक्रमणों में सम्मिलित थे, एक दम मार डालना चाहता हूं। यद्यपि मुझे इतने अधिकार मिले हुये नहीं हैं, परन्तु यह एक असाधारण विषय है। मैं उस उत्तरदायित्व को जो मैं अपने अधिकारों से बाहर जाकर ले रहा हूं, अच्छी तरह समझता हूं। ये व्यक्ति साधारण अपराधियों की भांति नहीं हैं। यह शासन के विरोधी तथा विद्रोही हैं। इनका तत्कालीन उद्देश्य तथा इच्छा लूटमार फिसाद करके हुकूमत का तख्ता उलटने का है। यह निश्चित है कि यदि उनके पहिले यत्न सफल हो जाते अथवा वह अपने आपको समर्थ करने में सफल हो जाते तथा उनके अधिकार में घोड़े और कोष आ जाता तो सारे देश के छटे हुये दुर्जन व्यक्ति उनके साथ मिल जाते। तब इनको बड़ी कठिनाइयों से ही मलियामेट करना पड़ता। कोटला में उनके आक्रमण के विरुद्ध समय पर तैयारी करने से उनके पहिले यत्न असफल हो गये हैं। पटियाला के अफसरों के तत्कालीन सफल परिणामों से शासन के विरुद्ध किया गया दुर्भाग्यपूर्ण तुच्छ यत्न जड़ से ही उखाड़ दिया गया है। ऐसे स्वभावों तथा विचारों के अन्य पुरुषों को इस प्रकार के कुपथ पर चलने से रोकना आवश्यक है। चेतावनी अथवा सूचना बहुत ही कड़ा प्रभाव डालने वाली होनी चाहिये। मुझे पूर्ण विश्वास है कि पंजाब सरकार

इन बन्दियों जो घटना करते हुए ही पकड़े गये हैं, मेरी एकदम मार देने की कार्यवाही की प्रसन्नता पूर्वक पुष्टि करेगी ।'

१६ तारीख को प्रातः ७ बजे सिविल सर्जन मि. इन्ज़ा मलौद से कोटला की ओर चल पड़ा । डिप्टीकमिश्नर तथा शेष सरकारी अफसरों को कोटला पर आक्रमण का समाचार मलौद में ही १५ तारीख की सायं तक मिल चुका था, परन्तु डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान गुरु रामसिंह जी की मलौद में प्रतीक्षा करते रहे। १५ तारीख को वर्षा आरंभ हो गई तथा १६ को तो इन्द्रदेव ने मानों मेघकोष ही खोल दिया । ७ बजे प्रातः का चला हुआ सिविल सर्जन १० बजे मालेर-कोटला पहुँचा। उसके पहुँचने के पहिले ही कोटला वालों ने अपने आठ मरे हुए आदमियों का दाह कर्म कर दिया था और कर्मचारियों ने सिविल सर्जन को यही बताया कि मृतकों में से एक नगर का कोतवाल था तथा ७ सिपाही थे ।

सिविल सर्जन की रिपोर्ट के अनुसार, 'सात मरे हुये कूकों की देहों का थाने के साथ वाले एक कमरे के फर्श पर ही ढ़ेर लगा पड़ा था । उनके रूप बहुत ही बिगड़े हुये थे । उनके सिर तथा वक्षस्थलों पर बहुत घाव थे । एक का सिर तो शरीर से थोड़ा सा ही अड़ा हुआ दिखाई देता था । कोहनी से ऊपर कटी हुई एक दाईं भुजा भी इन देहों में पड़ी थी। दो घायल कूकों में से एक का नाम वज़ीरसिंह था। इसके पेट में तलवार का ५ इंच लम्बा घाव था । दूसरे के दायें कन्धे पर तलवार का घाव था । तलवार से कटकर गिरी हुई भुजा किसी मृतक की नहीं, बल्कि जत्थे के साथ के किसी जीवित व्यक्ति की थी ।'

कोटला के बहुत से घायल अपने अपने घरों में ही पड़े हुये थे । सिविल सर्जन ने इन सबको देखा, औषधि तथा चिकित्सा की प्राथमिक सहायता करके इनको कोटला के सरकारी हस्पताल के देशी डाक्टर के सुपुर्द कर दिया । कूके घायलों को भी इसी अफसर के हवाले किया गया। सिविल सर्जन डिप्टी कमिश्नर को अपनी रिपोर्ट देकर १६ तारीख के रात के आठ बजे लुधियाना पहुँच गया । दोनों घायल कूकों के साथ क्या हुआ, यह आज तक भी खोज का विषय है ।

नामधारी सिंहों का तोपों से उड़ाया जाना

नायबनाज़िम नियाज़अली १६ तारीख को ५ अथवा ६ बजे मि० कावन का आदेश सुनकर कोटला से चला और रात को शेरपुर पहुँचा। उस दिन वर्षा हो रही थी। गाड़ियों वा बेगारियों तथा फौज़ी गार्द का प्रबंध तत्काल रात्रि के समय नहीं हो सकता था। बन्दियों को शेरपुरा से कोटला लेजाने के लिये मि० कावन के हुक्म के अतिरिक्त महाराजा पटियाला का हुक्म भी आवश्यक था। साथ ही यह अफ़वाहें भी उड़ रहीं थीं कि बहुत से नामधारी एकत्रित होकर कोटला पर दुबारा आक्रमण करने वाले हैं। समस्त प्रबंध पूर्ण करके हुक्म आने पर १७ तारीख को सुबह सैय्यद न्याज़अली ने नामधारी बन्दियों को गाड़ियों पर बिठाया। जो अत्यन्त घायल थे, उन्हें बेगारियों ने खाटों पर डाल कर उठा लिया। जो चल सकते थे, उन्हें साथ चलाया गया। पटियाला की फौज की पैदल तथा रिसाला की गार्दों के पहरे में शहीदी जत्थों को शेरपुर से कोटला की ओर भेजा गया। सिक्ख इतिहास ने अपने को दुहराया। १५६ वर्ष पहिले बाबा बन्दा तथा उसके साथी भी मुगल साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह के अपराध में पकड़े हुये इसी प्रकार वध करने के लिये गुरुदासनंगल की गढ़ी से दिल्ली लाये गये थे। सन् १७१६ से १७४७ तक इसी प्रकार सिंहों के जत्थों के जत्थे विदेशी राज्य के विरुद्ध फसाद करने के अपराध में गांवों से पकड़कर लाहौर लाये जाते तथा शाही आज्ञानुसार शहीदगंज लाहौर के स्थान पर कतल कर दिये जाते। सन् १८४६- ५० में भी लाहौर का सिक्ख राज्य समाप्त होने के पश्चात् अंग्रेजी शासन के विरोधियों को पकड़कर दंड देने के लिये इसी प्रकार लाया जाता था।

सन् १८५७ के विद्रोह के पश्चात् भी अंग्रजों ने विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष में भाग लेने वालों को गांवों से पकड़-पकड़ कर फाँसी पर चढ़ाया तथा तोपों से उड़ाया। इस विद्रोह के १५ साल पश्चात् पहिली बार नामधारी सिक्खों का यह जत्था वधस्थान की ओर लेजाया जा रहा था, परन्तु इस जत्थे की विशेषता यह थी कि बन्दी होने के पश्चात् नामधारी सिंह मृत्यु के लिये बहुत उतावले थे। मि० कावन भी सरकारी कानून, उच्च अफसरों के हुक्म, मुकद्दमों से सम्बन्धित आवश्यक कार्यवाहियों, आदि को परे फेंक कर नामधारियों के लिये यमदूत का रूप धारण किये खड़ा था। अंग्रेजी सरकार की सुरक्षा, रौब तथा सम्मान वह इसी बात में समझता था, कि कोटला पहुँचते ही कूकों को तत्काल मौत के घाट उतार दिया जाय। उसके हृदय को यह अंधविचार खाये जा रहा था, कि यदि इतना कड़ा दंड न दिया गया तो थोड़े दिनों में ही देश में विद्रोह की ज्वाला पुनः भड़क जावेगी।

मि० कावन का विचार था कि बन्दी, सूर्योदय से पहिले कोटला पहुँच जावेंगे, तथा वह एक दो घन्टे में ही अपना काम समाप्त कर देगा, परन्तु १२ बजे दोपहर तक बन्दी न पहुँचे, इस पर मि० कावन अत्यन्त व्यग्र था।

शहीदी जत्थे के कोटला में लाये जाने के विषय में लुधियाना का पुलिस कप्तान अपने ६ फरवरी वाले पत्र में लिखता है :–

"क्योंकि कैदी बारह बजे तक नहीं पहुँचे थे, इसलिये डिप्टी कमिश्नर से परामर्श करके मैं घुड़सवारों को साथ लेकर बन्दियों को अपनी रक्षा में लाने के लिये, जो इस समय कोटला से ६ मील पर बताये जाते थे, चल पड़ा। सड़कें बहुत ही बुरी तरह टूटी हुई थीं। बैल गाड़ियों के बैल गिर-गिर पड़ते थे तथा गढ़ों में से बहुत कठिनाई से निकलते थे।' पुलिस कप्तान जत्थे के नेताओं हीरासिंह तथा लहनासिंह से मिला और वार्तालाप करता रहा। हीरासिंह ने कप्तान को यह भी बताया, कि उनके जत्थे के समस्त व्यक्ति बन्दी हो गये हैं। मि० परकिन्ज लिखता है कि 'हीरासिंह तथा लहनासिंह ने बहुत बढिया पोशाकें पहनी हुई हैं तथा वह धनवान् व्यक्ति हैं। उनके नखशिख तथा मुद्रा से पता चलता है कि वह साहसी तथा दृढ विश्वासी पुरुष हैं।' आगे चल कर

वह लिखता है, 'बन्दियों में से बहुत से गालियां देते थे और खुल्लम खुल्ला कहते थे कि हम यह सरकार नहीं रक्खेगें, हम अपना राज्य बनायेगें।'

पुलिस कप्तान कोटला में फिर तीन बजे आ गया और शेष बैल एकत्रित करके बन्दियों को गाड़ियों को जल्दी से जल्दी कोटले लाने का प्रबंध किया। तीन बजे जत्था कोटला से तीन मील दूर था। चार बजे के लगभग शहीदी जत्था कोटला में पहुँच गया।

जत्थे के व्यक्तिक्रीयों को संख्या ६८ थी। जिनमें से दो स्त्रियां भी थीं। शेष ६६ आदमियों में से मि० कावन के १७ जनवरी के पत्र अनुसार २२ घायल थे। उसके एक अन्य प्रथम पत्र के अनुसार ७ तो मरणासन्न थे तथा २२ अल्पघायल।

नामधारी बन्दी कोटला के निकट आ गये थे। मि० परकिन्ज पुलिस कप्तान शेष बैल, गाड़ियों को लाने के लिये भेज चुका था। दोनों अंग्रेज़ अफसर तथा सिक्ख रियासतों की फ़ौजें अपनी अपनी तोपों सहित कैदियों के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इस समय मि० कावन को मि० फोरसाइथ कमिश्नर का लुधियाना से लिखा वह नोट मिला, जिसमें उसने बहुत दृढ़ता से हुक्म दिया था कि जबतक मेरी भेजी हुई गार्द न पहुँचे बन्दियों को शेरपुर की गढ़ी में ही रक्खा जावे, तथा बन्दियों को व्यापक कार्यवाहियां पूर्ण करके ही दंड दिये जांय। हिंद सरकार के सचिव की ओर से पंजाब सरकार के कार्यवाहक सचिव के नाम लिखे गये पत्र नं ८५७ दिनाँक ३० अप्रैल १८७२ में यह बात कही गई थी कि कमिश्नर साहब का उक्त नोट मि० कावन को नामधारियों को बध करने से कई घंटे पूर्व मिल चुका था। मि० कावन ने इस नोट के विषय में कहा कि 'मैंने यह नोट लेकर जेब में डाल लिया और इस विषय में कुछ न सोचा, क्योंकि इसमें ऐसा मत दिया हुआ था, जिसपर उस समय कोई विचार नहीं हो सकतो थी। कारण यह भी था कि बन्दी कूके अब कोटला के निकट पहुँच चुके थे।'

पुलिस कप्तान लिखता है, "कि कैदियों को देखते ही डिप्टी कमिश्नर ने निर्णय कर लिया था, कि इनमें से ५० को उसी दिन कोटला में ही तोपों से उड़ा दिया जावे तथा शेष १६ को दूसरे दिन गाँव मलौद लें जाकर फांसी देकर मार दिया जावे।

चार तथा पांच बजे के मध्त जत्थे के पहुँचते ही उसे जमालपुर गाँव के पास परेड मैदान में लाया गया। पटियाला, नाभा तथा जींद की सिक्ख रियासतों की सेनाओं के ७५० सैनिक तथा अफसर ६ तोपों के साथ १६ तारीख को ही कोटला में पहुँच चुके थे।

मि० कावन ने जत्थे के नेताओं हीरासिंह तथा लहनासिंह से बातें कीं। अपनी १७ जनवरी की रिपोर्ट में वह लिखता है कि "इन बन्दियों का वर्ताव अत्यन्त निर्भयता पूर्ण था। वह अंग्रेजी सरकार तथा देशी रियासतों के राजाओं को गालियाँ दे रहे थे। वे समस्त मानते थे कि वह मलौद तथा कोटला पर हुये आक्रमणों में सम्मिलित थे। वह अत्यन्त गर्व से यह बात स्वीकार करते थे।"

सतगुरु विलास पृष्ठ ४१८ पर इस प्रसंग का उल्लेख इस प्रकार किया गया है।

'बिल्ले (अंग्रेज़ के प्रति घृणा का शब्द) ने हीरासिंह से पूछा--तुमने क्यों ग़दर मचाया है। हीरासिंह ने कहा हम फिरंगियों ओर उनके कुत्तों देशी राजों, नवाबों का राज्य नहीं चाहते। हम अपने भाइयों का भाइचारे का राज चाहते हैं। जबतक तुम्हारा और इनका राज समाप्त नहीं होता, गदर मचायेगें। सिर लेगें तथा देंगें, तुम्हें यहाँ से निकाल कर दम लेगें। पुनः पुनः जन्म लेगें तथा तुम्हें मारेगें। तुम गोबध करते हो। हम गोवध सहन नहीं कर सकते। बिल्ले ने कहा—"हम जानते हैं कि तुमने राज्य के लिये गदर मचाया। परन्तु राज्य हमें भगवान् का दिया हुआ है। यों ही नहीं छीना जा सकता।"......हीरासिंह ने कहा "समुन्दखां पठान का कोई लड़का है ?" कहा कि है। उत्तर दिया—कि बुलवाओ। दो लड़के थे, आये। दोनों के सर पर हाथ रख कर कहा 'कि समुन्द खाँ ही असल वीर पठान था, अन्य सब जुलाहे, धुनिये ही एकत्रित हुये हैं। अगर किसी का कुछ इनाम देना है, तो इन लड़कों को देना चाहिये।"*

९ तोपें जोड़ कर गारदें लगा दी गईं। नामधारियों को लाकर मैदान में गार्दों के पहरे में तोपों के निकट बैठा दिया गया। जत्थे के साथ

---

* नामधारी सिंहों के आचरण का कितना ऊँचा उदाहरण है। सरदार हीरासिंह गरेवाल शूरवीर था, इसीलिये उसने अपने बैरी समुन्द-खाँ की शूरवीरता का मरते समय भी अभिनन्दन किया तथा शासकों को कहा कि समुदखाँ के पुत्रों के पोषण का ध्यान रखना आवश्यक है, क्योंकि यह शूर वीर पठान के पुत्र हैं।

दो स्त्रियाँ थीं, जिनको पटियाला के सेनानायक इनायतअली के हवाले कर दिया गया। नामधारियों को भी हुक्म सुना दिया गया, कि उनमें से ५० को इस स्थान पर तोपों से उड़ा दिया जायगा।

प्रबंध यह किया गया कि सात तोपों से तो नामधारी उड़ाये जायें और दो तोपें फौज तथा गार्दों की रक्षा के लिये भरकर तैयार रक्खी जाँय। ढंग यह बनाया गया कि हर बार सात नामधारी सात तोपों के आगे लाकर खड़े किये जावें। तोपों को इकट्ठे ही फलीते (आग) दे दिये जांय। शेष दो तोपें भरकर परेड मैदान की रक्षा के लिये तैयार रक्खीं गईं, ताकि यदि आवश्वकता हो, तो इनका उपयोग किया जाय। अफसरों को यह भय खा रहा था, कि अन्तिम समय पर नामधारियों के जत्थे सहसा ही कहीं से न आ पड़ें, तथा कोई भयानक दुर्घटना न बन जाय।

मृत्यु सन्मुख देखकर नामधारियों के मुखों पर रक्त कन्तियां चढ़ गईं। वह सत श्री अकाल के जयकारे लगाने लगे। मैदान में कोटला तथा आसपास के कस्बों और गाँवों के सहस्त्रों स्त्री-पुरुष देशभक्त शहीदों की मृत्यु का दृश्य देखने के लिये एकत्रित हो गये थे। स्थान स्थान पर समाचार पहिले ही पहुँच गये थे कि कूके तोपों से उड़ाये जावेंगे।

सतगुरुविलास पृष्ठ ४१६ पर तोपों से उड़ाये जाने का वृतान्त इस प्रकार दिया है :—

'फिरंगियों ने राजाओं की तोपें मंगवा लीं। फिरंगी ने सिहों को उड़ाने का हुक्म दे दिया। पटियाला की तोप तथा नाभा की तोप, संगरूर की तोप तथा मालेर कोटला की तोप इस प्रकार ९ तोपें जोड़ दीं। भाई हीरा सिंह तथा लहनासिंह अपने पांच साथीओं समेत स्नान करके तोपों के सम्मुख खडे हुये। बिल्ले अंग्रेज ने भंगी को कहा— इन्हें रस्से डालकर तोपों के आगे करो—सिहों ने भंगी को कहा, परे हो जा, हम आप ही तोपों के आगे जा खड़े होगें। बढ़कर आगे जा खड़े हुये। बिल्ले ने कहा पीठ करो। सिहों ने कहा, पीठ नहीं करेगें, सन्मुख होकर मरेंगे। सन्मुख वक्षस्थल तानकर साहसी सिंह खड़े हुये। तीनबार बत्ती लगाई तोप पलीता चाट गई...जब चौथी बार बत्ती दी तो तोपें चलीं। जो शरीर के जोड़ थे, वे पृथक्-पृथक् होकर जा पड़े। जो हीरासिंह का सीस था वह दस्तार सहित आकाश को उड़ा। दस कदम पर शीश धरती पर गिरा। तीनबार धरती से गेंद की भाँति उछलकर

ठंडा हुआ।...स्नान करके सिह स्वयं ही तोपों के सन्मुख जा खड़े होते। तोप चलती, साथ ही सतश्रीअकाल बुलाते । तोपों के गोलों के लगने से सिंहों के शरीरों के अंग छिन्न भिन्न होकर दूर दूर जा पड़ते ।"

नामधारियों में से विशुनसिंह ने फौजी गार्द के घेरे से निकल कर मि० कावन को गले से जा पकड़ा । साहब की टोपी उतर गई, तथा मृत्यु उसके सिर पर नाचने लगी। इसी समय गार्द के सिपाहियों ने तलवारों से बिशुनसिंह को शहीद कर दिया ।

जब ४३ सिंह तोपों से उड़ाये जा चुके थे, तो मि० फोरसाइथ का दूसरा पत्र मि० कावन को मिला जिसमें यह हुक्म दिया गया था कि "बन्दी हुए कूकों को मारा न जाय, बल्कि उन पर नियमानुसार मुकदमा चलाने के लिये जीवित ही रक्खा जावे ।"

इस हुक्म को मानने के सम्बन्ध में मि० कावन अपने आठ अप्रैल के पत्र में लिखता है कि, "मुझे यह पत्र १७ जनवरी को सूर्यास्त से कुछ समय पहले मिला । मैं उस समय परेड मैदान में खड़ा था। मेरे तथा तोपों के मध्य देशी रियासतों के सिपाहियों की एक पालि खड़ी थी । इस पत्र के मेरे हाथ में दिये जाने से पहले विद्रोहियों में से ४२ अथवा ४३ व्यक्ति मारे जा चुके थे । शेष ७ तोपों के सामने थे । बिगुलची संकेत मिलते ही फायर का आदेश बजाने की प्रतीक्षा में खड़ा था। कलनल परकिन्ज तथा देशी रियासतों के चोटी के अफसर मेरे साथ थे । मि० फोरसाइथ के हुक्म का पत्र मैंने यह कहकर कलनल परकिन्ज़ को दे दिया कि जो आदमी तोपों के सामने हैं, उनको मारने से रोकना अब असंभव है । यदि ऐसी कार्यवाही की गई, तो समस्त लोगों पर जो हमारे आस पास खड़े हैं, बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ेगा" ।

मि० ई० परकिन्ज डिप्टी सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस ने परेड मैदान के वध-स्थान से आकर "अपराध की विशेष सूचना" में यह अंकित किया :—

"कोटला १७ जनवरी ७ बजे सायं वधस्थान से मैं अभी लौटा हूँ । प्रबंध बहुत बढ़िया था । सात तोपों से ४९ विद्रोही उड़ाये गये। एक को, जब उसने डिप्टी कमिश्नर पर कड़ा आक्रमण किया, तलवारों से टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया। जब हम दोषियों को जान से मारने का काम समाप्त करने वाले थे, तो कमिश्नर का पत्र मिला कि इन लुटेरों हत्यारों पर रियासतों के दोषियों को लेने देने के बने हुये नियमानुसार, मुकदमे चलाये जायँ।"

५० नामधारी सिंहों को मरवा देने के अनन्तर मि० कावन कार्यवाहक डिप्टी कमिश्नर ने अम्बाला के कमिश्नर को पूरी स्थिति की जानकारी का पत्र लिखा। वह दूसरे अनुच्छेद में लिखता है कि समस्त बन्दियों ने अपना दोष मान लिया है। तीसरे अनुच्छेद में लिखा कि मेरी इच्छा बन्दियों में से ५० को तो आज कोटला में ही उड़ा देने की थी, तथा शेष १६ को कल मलौद ले जाकर मरवा डालने की है। इनमें से एक आदमी फौजी गार्डों के लगे पहरे में से निकल कर आया तथा उसने बहुत क्रुद्ध होकर मुझपर आक्रमण किया और मुझे दाढ़ी से पकड़ लिया तथा मेरा गला घोंट कर मारने का यत्न किया। यह बहुत ही शक्तिशाली पुरुष था, अतः मुझे अपने आपको इससे छुड़ाने के लिये अत्यन्त परिश्रम करना पड़ा। उसने फिर मेरे पास खड़े देशी रियासतों के कुछ अफसरों पर बहुत भयानक आक्रमण किया, इन अफसरों ने अपनी तलवारें निकाल लीं और उसको टुकड़े-टुकड़े कर दिये। दोषियों को तोपों से मरवाने का काम मेरे लिये अति कष्टकर था। जब मुझे आप का पत्र मिला तो यह मेरे लिये और भी कष्टतर बन गया। पत्र मिलते समय अन्तिम टोली तोपों के सम्मुख थी। अपने दिये गये दंडादेश पर स्वयं ही अमल करवाने में मैंने ईमानदारी तथा सच्चाई से, इस दृढ़ विश्वास को सम्मुख रखकर यह कार्य किया, कि मैं सरकार के महान् हित के लिये यह काम कर रहा हूँ। इस विद्रोह का, जिसने विशाल रूप धारण कर लेना था, उठते ही सर फोड़ दिया गया है। मेरे विचार में तत्कालीन दिये गये भयानक दंड ऐसे विद्रोहों के दुबारा सिर उठाने से रोकने के लिये आवश्यक हैं। मैं अत्यन्त ईमानदारी से यह विश्वास करता हूं कि आप मेरी इस सविस्तार लिखित मत का अध्ययन करने के पश्चात् मेरे काम की प्रशंसा तथा पुष्टि करेंगे।"

"आप का पत्र पहुंचने पर शेष १६ अपराधियों के विषय में, जिनको अभी दंड नहीं दिये गये हैं, मैं बहुत ही कड़ी दुविधा में फंस गया हूं। जैसा कि मैं पहिले आप को बता चुका हूं, मेरी इच्छा इन १६ को मलौद ले जाकर मरवा देने की थी तथा मैं अब भी इसी मत पर स्थिर हूं। इसलिये मैं आप से सच्चे हृदय से प्रार्थना करता हूं, कि आप मुझे इस दंड का प्रयोग करने के लिये शीघ्रतम स्वीकृति एवं आज्ञा भेजें, ताकि मैं शेष १६ को भी जान से मरवा दूं। मैं विश्वास करता हूं, कि प्राणदंड का बहुत प्रभाव हुआ है तथा भविष्य में भी अत्यन्त प्रभाव रहेगा। जिधर भी मैं जाता हूं लोगों के व्यवहार, चर्चा, तथा वार्तालाप में इसका प्रभाव हुआ प्रतीत होता है।

"मैं कल तक रियासतों के फौजी दस्तों को वापिस भेजने की इच्छा रखता हूं। मैं कल दोपहर तक आप की ओर से विद्रोही कूकों को दंड देने की स्वीकृति की आज्ञा आने की आशा में यहाँ ही ठहरूंगा, यदि आप ने इन्हें शीघ्र ही मारने की स्वीकृति न भेजी, तो मैं छानबीन आरंभ करके तथा मुकद्दमे की फायल बना कर आप के पास आदेश के लिये भेज दूंगा।"

"विद्रोहियों के जत्थे के नेता हीरासिंह तथा लहनासिंह जिन्होंने इस विद्रोह के लिये अन्य विद्रोहियों को उकसाया था तोपों से उड़ा दिये गये हैं।"

"जब मैं इस पत्र को बन्द कर रहा था, तो घुड़सवारों का जत्था, जिसे मैंने मालूपुर में छुपे कूकों के पीछे भेजा था, काहनसिंह तथा तीन अन्य कूकों को लेकर लौट आया है। यह काहनसिंह सम्माननीय एवं प्रतिष्ठित सूबा है, तथा भैंणी में ही रहता है। मैं आज सारा दिन अत्यन्त भयभीत सा रहा हूं, इसलिये मैं इन आदमियों के मुकद्दमे की छानबीन कल करूंगा।"

कमिश्नर ने इस पत्र का कोई उत्तर न दिया। १७ तथा १८ तारीख की रात को प्रातःकाल ४ बजे की गाड़ी में गुरु रामसिंह जी तथा उनके चार सूबों को दिल्ली वाली गाड़ी में बिठाकर, १८ तारीख की सुबह ही कमिश्नर घोड़े पर चढ़कर कलनल गफ तथा रसाला के एक दस्ते के साथ मालेरकोटला पहुंच गया। जत्थे के १६ नामधारी कैदियों को, मि० कावन, कोटला के नाज़िम, तथा तहसीलदार तीनों के बैन्च की अदालत के सामने अपराधियों के रूप में उपस्थित किया गया। समस्त कार्यवाही न्यायानुसार की गई तथा पूर्ण फायल तैयार की गई। बैन्च की अदालत ने १६ दोषियों को भी प्राण दंड दिया जो कमिश्नर ने झटपट स्वीकार कर लिया। इन १६ नामधारियों को १८ जनवरी वाले दिन अंग्रेज अफसरों, मालेरकोटला तथा पड़ोस की सिक्ख रियासतों के वकीलों तथा फौजी अफसरों के सामने दोपहर से पहिले तोपों से उड़ा दिया गया।

नामधारियों को तोपों से उड़ाने के पश्चात् कमिश्नर फोरसाइथ ने सायंकाल एक दरबार किया। इसमें उसने मि० कावन की सिफारिश पर निम्नलिखित व्यक्तियों को मालेरकोटला के आक्रमणकारी कूकों को गिरफ्तार करवाने की उच्च सेवा करने के उपलक्ष्य में रियासत मालेरकोटला के कोष में से अपने हाथ से इनाम बाँटे।

१—न्याज़अली उपनाजिम रियासत पटियाले का अफसर	१०००)
२—पंजाबसिंह दरबारी, रामनगर, रियासत पटियाला	३००)
३—जयमलसिंह गांव रड़ रियासत पटियाला	२००)
४—मस्तान अली	१००)
५—उत्तमसिंह	५०)
६—रतनसिंह	५०)
७—गुलाबसिंह	५०)
८—प्रतापसिंह	५०)

कमिश्नर ने रियासत के नाजिम को अहमदअली कोतवाल के कुटुम्ब तथा अन्य मारे गये सरकारी कर्मचारियों के कुटुम्बों की सहायता करने के आदेशदिये ।

रियासत मालेरकोटला की ओर से कृतज्ञता के पत्र महाराजा पटियाला, राजा साहब जींद तथा राजा साहब नाभा को लिखे गये तथा दरबार में उपस्थित उक्त राजाओं के वकीलों को उनतक पहुंचाने के लिये दिए गए ।

इस पत्र में ही कमिश्नर ने लिखा कि, "अभी तक सात आदमी शष हैं, जो मलौद के आक्रमण में सम्मिलित होने के दोषी हैं । इनमें से चार को मलौद वाले सरदार के आदमियों ने पकड़ लिया था । क्योंकि यह अपराध अंग्रेज़ी इलाके में किया गया है, इसलिये इन दोषियों को सैशन जज के न्यायालय में १९ तारीख को उपस्थित किया जावेगा । अगर इनको प्राण दंड हुए तो नियमानुसार चीफ़कोर्ट से दंड की पुष्टि करवा कर इनको फांसियां दी जावेंगी ।

१९ तारीख को मि० फोरसाइथ मलौद पहुंच गया । मि० फोरसाइथ जब मलौद पहुंचा तो सरदार मित्तसिंह ने उसको मिलकर प्रार्थना की कि दोषी कूकों को जरुर ही प्राण दंड दिये जांय । फोरसाइथ ने सैशनजज के रूप में दोषियों का मुकदमा सुनना आरम्भ किया उसके साथ मीर हाशम खां बहादुर रसालदार, गुलामकादर सुपरिटेन्डेन्ट गांव अबोह तथा महताबसिंह नम्बरदार गांव दोद असैसरों के रूप में बैठे । सात में से केवल चार अपराधी भगवानसिंह, ग्यानसिंह, धम्मनसिंह तथा मेहरसिंह ही अदालत में उपस्थित किये गये ।

मि० कावन ने चारों दोषियों को भारतीय दण्ड विधान की धारा ३९६ के अनुसार सैशन के सुपुर्द करने की फायल मलौद

जाने से पहिले कोटला में ही मि० फोरसाइथ को दे दी थी। मि० कावन के हुकम अनुसार शेष तीन दोषियों को जिला के कप्तान पुलिस के पास भेज दिया गया।

मि० कावन ने १५ तारीख को मलोदवाले चार दोषियों की मिसल तैयार करके उनको कत्ल तथा डाकों के अपराधों में सैशन सुपुर्द कर रक्खा था। तथा उच्च अधिकारियों को तार दे दिये थे कि उसे इन चारों को फांसी का दंड देने की आज्ञा दी जाय।

इन दोशियों का मुकदमा मि० फोरसाइथ ने सेशन जज की हैसियत में सुनना आरंभ किया। उसके सामने सबसे पहिले सरकार की ओर से साहनेवाल जिला लुधियाना के थानेदार सरफ़राज़ अली खां की गवाही हुई। उसने अपनी गवाही में उन तेरह आदमियों के नाम पढ़कर सुनाये, जिन्होंने गुरु रामसिंह जी के कथनानुसार उनकी आज्ञा नहीं मानी थी। यह थे——लहनासिंह पुत्र महताबसिंह, हीरासिंह, अनूपसिंह, ऊधमसिंह, नन्दसिंह, जोगासिंह, बर्यामसिंह, भागसिंह, गांव रड़ के नारायणसिंह, साहबसिंह, सुजानसिंह, दलेहड़ा गांव के ज्ञानसिंह तथा काहनसिंह। सैशन जज के प्रश्नों के उत्तर में थानेदार ने बताया, कि मेरे कहने पर गुरु रामसिंह जी ने मस्तानों के जत्थे से गले में पल्ला डालकर अपने अपने घरों को लौट जाने की प्रार्थना की थी। इस पर जत्थे वालों ने कहा कि हमें भोजन कराओ, हम चले जायगें। गुरु रामसिंह जी ने उनको रोटी खिलाई और वे चले गये। गुरु रामसिंह जी ने उनके चले जाने की सूचना मुझे दे दी थी। "मैंने रात की गाड़ी लुधियाना में पहुंच कर दस बजे के लगभग यह सारी बात पुलिस कप्तान तथा डिप्टी कमिश्नर को बताई। आदेश मिलने पर यही सारी सूचना मैंने रियासतों के बकीलों को भी दे दी थी। मस्तानों का जत्था बार बार कोटला की ओर जाने की बातें करता था।" इसके पश्चात् और गवाहियां ली गई। सरदार बदनसिंह ने कहा कि मैं बहुत बीमार हूं, इसलिये अदालत में उपस्थित नहीं हो सकता। अतः उसका १६ तारीख वाला ब्यान जो उसमें मि० कावन के सामने दिया था सैशन जज वाली फायल पर गवाही के रूप में लगा लिया गया।

जब अपराधी कूकों को गवाहों से विवाद तथा प्रश्न करने के लिये कहा गया तो उन्होंने ऐसा करने से बिल्कुल ही इनकार कर दिया। नामधारियों ने इस घटना से १६ वर्ष पूर्व अंग्रज़ी न्यायालयों तथा न्याय का परित्याग किया हुआ था तथा वह अपनी इस प्रतिज्ञा पर स्थिर थे।

सैशन जज ने अपराधियों को धारा ३९६ के अनुसार कत्ल तथा डाके के अपराधी ठहराया। तीनों असैसरों ने सैशन जज की हाँ में हाँ मिलाई। अतः नामधारी बंदियों ने अपने स्वीकृत बयानों में अपराध अपने सिर ले लिये थे। सैशन जज ने चारों दोषियों को प्राण दंड का आदेश सुनाया।

मिस्टर टी० डी० फोरसाइथ ने पंजाब सरकार के सचिव को भेजे गये। २० जनवरी के अपने पत्र में इस मुकद्दमे का वर्णन करते हुये लिखा है कि "चार आदमी इस मुकद्दमें में पेश किये गये। उनके स्त्रीकृत बयानों पर उनको प्राणदंड के आदेश दिये गये, परन्तु मेरी इच्छा इस दंड को प्रयोग में लाने की नहीं है, क्योंकि पहिले ही कड़े दंडों से पर्याप्त चेतावनी हो चुकी है। साथ ही यह चारों आदमी अति घायल हैं, इनमें से दो की हड्डियाँ टूटी हुई हैं। मेरी इच्छा है कि कुछ दिन पश्चात् इनके प्राणदण्ड को काले पानी तथा आजीवन कारावास के दण्ड में परिवर्तित कर दूँ।" दोषियों को मलोद से लुधियाना जेल में लाया गया।

गुरु रामसिंह जी से क्या बीती ?

नामधारी केन्द्र भैणी साहब से शहीदी जत्थे के प्रस्थान के समय जत्थे के नेता सरदार हीरासिंह के यह कहने पर कि हमें गुरु तेगबहादुर जी महाराज का आदेश शीश देने का ही है, गुरु रामसिंह जी ने कहा था:–"गुरु तेगबहादुर जी महाराज के आदेश की अवहेलना हम भी नहीं कर सकते। हम फिरंगी का दण्ड सहन कर लेंगे, परन्तु अकाल पुरुष की अवज्ञा सहन नहीं हो सकती।"

मस्तानों के जत्थे के अरिदास (प्रार्थना) के पश्चात् बहुत से सिंहों ने शहीदी जत्थे के साथ मिलने की प्रार्थना की, परन्तु आपने कहा, "यहां इनही के शीश लगने हैं, अन्य जहाज भी काफ़ी छूटने हैं।" कई सूबों तथा अन्य व्यक्तियों ने भी जाने की आगया के लिए विनय की, परन्तु आपने सबको यही कहा कि अभी समय नहीं है। एक और सिंह की विनय पर आपने कहा कि, "देखो तुम साथ जाने के लिये कहते हो ! अवसर आया तो कच्छे उतार कर कोनों में फेंकोगे तथा लंगोट पहन लोगे। तुम अपने अपने घरों को चले जाओ, जो रहेगा वह दुखी होगा।"

डिप्टी कमिश्नर मि० कावन का मलौद में आने का निमन्त्रण पाने पर गुरु रामसिंह जी पांच सात सिक्ख साथियों के साथ १६ जनवरी को सूर्यास्त के समय मलौद पहुंचे तथा एक पहर के लगभग डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान से वार्तालाप करते रहे।

उसी रात को आप ओर आप के साथी गांव सियाहड़ में लौट आये तथा भाई बलासिंह नामधारी के घर ठहरे। दूसरे दिन १७ तारीख बुधवार को लगभग ५ बजे तक आप गांव सियाहड़ में ही थे। जब कोटला में मि० कावन के हुक्म से नामधारी सिंह तोपों से उड़ाये जाने आरम्भ हुये, तो आपको पहली बाड़ की आवाज तथा गूंजें सुनाई दीं। सतगुरु विलास में इसका वर्णन इस प्रकार है :––

"श्री सतगुरु सियाहड़ उतरे हुये थे । उन्होंने काहनसिंह को कहा, कि देखो तो तोपों के चलने की आवाजें हैं । जब उसने आवाज़ सुनी तो कहने लगा, हां तोपें भरमार हैं । सतगुरु जी ने कहा, "चढ़ गये हैं (बलिदान दे दिया है), नहीं तो अविश्वासी हो जाते, अब अच्छा हुआ।" आपजी ने बचन किया– "दो शस्त्र हैं, प्रथम झुक जाना, द्वितीय यह है, कि जो कुछ हाथ में आवे चाहे जूता ही हो, लेकर आगे की ओर जाय, वापिस न लौटे, चाहे सिर जाय । आगे को जाना शूरवीर का धर्म है, परन्तु बड़ा शस्त्र झुकना है ।"

तोपें चलने की आवाज सुनकर आपने उच्च स्वर में श्री गुरु गोविन्दसिंह जी महाराज का यह सवैया बार बार पढ़ना आरम्भ किया।

देहु शिवा बर मोहि इहो ।
शुभ कर्मन ते कबहुं न टरों ॥

कमिश्नर फोरसाइथ को दिल्ली से प्रस्थान समय गवर्नर पंजाब ने यही आदेश दिया था कि गुरु रामसिंह जी तथा प्रसिद्ध नामधारी सूबों को बन्दी करके तत्काल दिल्ली भेज दिया जाय । कमिश्नर को लुधियाना में पहुंच कर यह ज्ञात हुआ कि डिप्टी कमिश्नर मलौद को जाने से पहिले गुरु रामसिंह जी को मलौद पहुंचने का बुलावा दे गया है, परन्तु कमिश्नर को यह ज्ञान नहीं था कि डिप्टी कमिश्नर ने आपके साथ वार्तालाप तथा जांच पड़ताल करने के पश्चात् आपको भैंणी साहिब जाने के लिये कह दिया था । कमिश्नर ने साहनेवाल के थाना में हुक्म पहुंचा दिया था, कि गुरु रामसिंह जी को सूबों सहित १७ जनवरी की दोपहर तक बन्दी करके लुधियाना में लाया जाय ।

जब दोपहर तक भी इनमें से कोई न आया तो कमिश्नर को अति घबराहट हुई। उसने लेफ्टीनेंट कलनल बेली डिप्टी इन्सपैक्टर जनरल पुलिस को जो इस समय लुधियाना में ही था, एक पत्र द्वारा यह हुक्म दिया कि "फौज तथा पुलिस की सहायता से गुरु रामसिंह जी तथा नामधारी सूबों को शीघ्रातिशीघ्र भैंणी से बन्दी करके लुधियाना में पहुँचा दिया जाय । इनसे लठ्ठ, सोंटे, गंडासे तथा हर प्रकार के शस्त्र ले लिये जांय। शस्त्रों तथा अन्य लिखित पत्रों के लिये इनकी पूरी तलाशी ली जावे । यदि कूकों की ओर से मुकाबला अथवा बाधा की आशंका हो, तो साहनेवाल से गोरखों की एक कम्पनी मंगवा ली जाय तथा गिरफ्तारियां कर ली जायें। गिरफ्तारियों तथा तलाशियों की सूचना भेजी जाय।

दूसरा आदेश मिलने तक पुलिस तथा फौजी दस्ता भैंणी में रहने दिया जाय।" (कमिश्नर फोरसाइथ का मि० बेली के नाम पत्र १७ जनवरी १८७२)

इस पर मि० बेली लेफ्टीनेन्ट ग्रीन की कमांड में १२ नम्बर रिसाला के २५ सवार तथा पुलिस के कुछ आदमी लेकर १७ जनवरी को सायंकाल ४ बजे के लगभग मलौद की ओर चल पड़ा।

जब मि० बेली गांव डेहलों पहुँचा तो उसको पता चला, कि गुरु रामसिंह जी साथियों सहित मलौद से लौट कर भैंणी की ओर चले गये हैं। इस पर कर्नल बेली फौजी गार्द तथा पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर साहनेवाल के थाने में पहुंचा गया। थाने से यह पता चला कि गुरु रामसिंह जी मलौद से वापिस भैंणी पहुंच गये हैं एवं साहनेवाल से डिप्टी इन्सपैक्टर शाहवलीखाँ तथा डिप्टी इन्सपैक्टर गुलाबसिंह गार्द लेकर भैंणी पहुंचे हुये हैं।

इस पर मि० बेली साहनेवाल में ही ठहर गया तथा भैंणी से दूसरे समाचार पाने की प्रतीक्षा करने लगा। एक घंटे के पश्चात् रात को शाहवली खाँ ने आकर रिपोर्ट दी, कि गुरु रामसिंह जी चार अन्य नामधारियों के सहित डिप्टी इन्सपेक्टर गुलाबसिंह की गार्द के पहरे में भैंणी से लुधियाना की ओर चले गये हैं। उधर गुरु रामसिंह जी के मलौद से लौट कर भैंणी पहुंचने का समाचार कमिश्नर फोरसाइथ को कर्नल बेली के प्रस्थान पश्चात् आधी रात से कुछ समय पहिले ही मिल चुका था।

मि० फोरसाइथ लिखता है, कि १७ जनवरी की सायं को तोपों की गूंज सुनते ही गुरु रामसिंह जी सियाहड़ से अपने संगियों सहित घोड़ों पर चढ़ कर भैंणी की ओर चल पड़े। रायकोट-रोड़ वाली कच्ची सड़क का रास्ता साहनेवाल के थाने के पास होकर जाता था। थाने में आपके लौटने का समाचार सुन कर थानेदार शाहवअली खाँ भी आपके पीछे पीछे ही भैंणी में पहुंच गया था।

अभी आप तथा आपके संगी घोड़ों से उतरे ही थे कि थानेदार ने आपको कमिश्नर का यह हुक्म सुना दिया, कि आप शीघ्रतम सूबों के साथ लुधियाना पहुंच कर कमिश्नर के सामने पेश हो जायें। इस समय गुरु जी के छोटे भाई महाराज बुद्धसिंह जी ने डिप्टी कमिश्नर के सम्मुख पेश होकर समस्त अपराध अपने ऊपर लेने तथा इकबाली बयान देन की इच्छा प्रगट की, परन्तु आपने आज्ञा न दी।

सतगुरु विलास पृष्ठ ४२५-२६ पर इस घटना का प्रसंग इस प्रकार दिया है। "भैंणी पहुंचते ही यह हुक्म दिया, कि सब सिंह अपने अपने घरों को चले

जाओ । बचन किया चले जाओ घरों को, जो यहां रहेगा दुखी होगा । न जाने यहां क्या होगा । "गोपालसिंह हम तो सबका उद्धार ही करते हैं, गृहस्थी लोग हैं, यदि घरों को चले जायें तो अच्छी बात है ।"........' फिरंगियों को भी भय था। मिलजुलकर परामर्श करके एक थानेदार चार सवार लेकर रामदासपुरा में आया । सवार सड़क पर खड़े किये । सतगुरु जी को कहने लगा—आपको लुधियाना में याद किया है । दीन दयाल जी ने बचन किया, हमें तो भंगो भी बुलाने आता तो चलना था । साथ ही बचन किया, घोड़े थक गये हैं, गड्डा तैयार करो । हुक्म हुआ, गुरुदत्तसिंह गड्डा तैयार करो। बचन किया—हमने यहां बैठे नहीं रहना है । हम तो खेल करने आये हैं, हमने तो जाना ही था, कब तक बैठते, अंत को हमारे चले बिना कार्य नहीं चलेगा। हम चलेंगे तो कार्य चलेगा। है भी सत्य, जो जिस कार्य के लिये आता है, अवश्य करना पड़ता है । हम इसी काम को आये हैं ।"

"पुखली लगा कर गड्डा तैयार किया, कनात की भांति हो गया । सस्सों (ऊन की पगड़ी) शीस पर बांधी, एक काली कमली ऊपर ओढ़ी । बचन किया अरिदास (प्रार्थना) मैं करता हूँ । आप अरिदास (प्रार्थना) की । कमली ओढ़ कर गड्डे में आ बैठे। नानूसिंह साथ प्रस्तुत हुआ । बाबा जवाहरसिंह, बाबा साहबसिंह, गुरदत्तसिंह चारों के साथ गड्डे पर बैठे। बाकी सब बैलों से आटा पीसनेवाली चक्की के पास खड़े कर दिये। कहा आगे कोई नहीं आये...बचन किया, ११।) रुपये का कड़ाह प्रसाद करना, बांट कर अपने अपने घरों को चले जाना। रात को सोना नहीं, पाठ करो। यदि जपसाहब की बाणी कण्ठस्थ न हो तो माला फेरो। रात को कोई न सोये। जब गड्डा सड़क पर गया, तो दो सवार आगे तथा दो पीछे साथ साथ चले । लुधियाना ले जाकर डाक बंगले के भीतर ले गये, तीनों सिंह बाहर बिठा दिये। गड्डा लौटा दिया ।"

पंजाब सरकार के सचिव के नाम १८ तथा १९ जनवरी के पत्रों में मि० फोरसाइथ लिखता है, कि "गुरु रामसिंह जी दो सूबों साहबसिंह तथा जवाहरसिंह और दो सेवकों गुरुदत्तसिंह तथा नानूसिंह के साथ मेरी आज्ञानुसार लुधियाना में १७ तथा १८ की मध्य रात के एक बजे पहुंच गये हैं। मैं गुरु रामसिंह जी से बहुत से प्रश्न करता रहा, जिसके उत्तर वह मुझे देते रहे ।" मि० फोरसाइथ ने १८ तारीख वाले पत्र में अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के मारे जाने तथा मलोद और कोटला के आक्रमणों के विषय में आपसे हुई वार्तालाप का वर्णन करते हुये सरकार को अपनी अनुमति इस प्रकार लिख भेजी । "यदि सामूहिक रूप में सारे पंजाब

की शान्ति के लिये नहीं, तो कम से कम ज़िला लुधियाना में शान्ति स्थापना के लिये मैं अति आवश्यक समझता हूं, की कूका सम्प्रदाय के नेता गुरु रामसिंह जी को शीघ्रतम पंजाब से देश निर्वासित कर दिया जाय। उसको इलाहाबाद भेज दिया जाय। हिंद सरकार द्वारा उसके विषय में अन्तिम दृढ निर्णय के आदेश तक उसको इलाहाबाद ही निगरानी में रक्खा जाय। कमिश्नर ने अति सबल शब्दों में लिखा, कि ऐसे आदमी को मुक्त रहने की आज्ञा देना व्यापक रूप में हानिकारक है।

पत्र के अंत में यह भी अंकित था, "मुझे भरोसा है, कि जो कार्यवाही मैं करने लगा हूं, सरकार उसकी स्वीकृति दे देगी तथा गुरु रामसिंहजी और उनके सूबों के विरुद्ध कानून नं० ३ सन् १८१८ के अनुसार नज़रबन्द तथा बन्दीगृह में रखने के वारंट जारी कर दिये जायेंगे। मैं इन सबको एक दो दिनों के अन्दर बन्दी करके इलाहाबाद के मैजिस्ट्रेट के पास भेज दूंगा।"

गुरु रामसिंह जी के लुधियाना पहुंचने से लेकर प्रातः चार बजे तक मि० फोरसाइथ आप से वार्तालाप करता रहा।

प्रातः चार बजे की डाक गाड़ी के एक विशेष डिब्बे में मि० जेक्सन की गोरखा गार्द के पहरे में गुरु रामसिंह जी, बाबा जवाहरसिंह, बाबा साहबसिंह, बाबा लक्खासिंह तथा नानूसिंह पांचों को सीधा इलाहाबाद भेज दिया गया। बाबा लक्खासिंह को लुधियाना में ही बन्दी कर लिया गया था।

गाड़ी में चढ़ाकर तथा १८ तारीख वाला पत्र डाक में भेजकर मि० फोरसाइथ कोटला की ओर चला गया तथा गोरखों की एक कम्पनी को साहनेवाल पहुंचने का आदेश दे गया। कम्पनी इसी गाड़ी में प्रातः साढ़े चार बजे साहनेवाल पहुंच गई।

सूबों की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में कैप्टन मेन्जी के १८ जनवरी के पत्र का अनुवाद यह है जो उसने लुधियाना से लिखा:......

"मेरे प्रिय कलनल, मैं मि० परकिन्ज की विशेष रिपोर्ट जो मुझे अभी मिली है। बन्द करके भेज रहा हूं। इससे यह प्रकट होता है, कि मि० कावन ने सब कुछ अपने उत्तरदायित्व के आधार पर किया है। जो मनुष्य पटियाला रियासत की सीमा में पकड़े गये थे, उनमें से अधिकतर को जान से मार दिया गया है। मि० फोरसाइथ यहां से कोटले को चला गया है। मैं विचार करता हूं कि वह शेष व्यक्तियों पर मुकद्दमा चलायेगा तथा कानूनी ढंग से दंड देकर उन्हें जान से मार देगा। प्रतीत यह होता है कि ये व्यक्ति बिलकुल ही काबू से बाहर हो गये थे। मै पिछली सारी रात गुरु रामसिंह जी, लक्खासिंह तथा जवाहर सिंह को यहां से भेजने के प्रबंध में व्यस्त रहा हूं। इन्हें मि० जेक्सन की

"नेता जी" सुभाषचन्द्र बोस

निगरानी में गोरखा सिपाहियों की गार्द के साथ इलाहाबाद भेज दिया गया है। गुरु रामसिंह जी केवल चार साथियों के साथ यहाँ आये। वह दो बजे के लगभग आधी रात पश्चात् यहां पहुंचे और चार बजे यहाँ से भेज दिये गये। इस बीच के समय म मि० फोरसाइथ उनसे प्रश्न करके हालात पूछता रहा।

"मि० बेली २५ सवारों तथा पुलिस को साथ लेकर पिछली रात ही मलौद की ओर गुरु रामसिंह जी को लुधियाने लाने के लिये चला गया था। परन्तु गुरु रामसिंह जी वापिस भैंणी चले गये थे। इसलिये मि० बेली रात को साहेनवाल ही ठहर गया। दूसरे दिन सुबह लुधियाना से ४० गोरखे तथा १२ पुलिस के आदमी रेल द्वारा साहनेवाके भेज दिये गये थे। इनको साथ लेकर मि० बेली भैंणी की ओर शेष सूबों को गिरफ्तार करने तथा गुरुद्वारा में शस्त्रों और अन्य कागज़ों की तलाशी लेने को तैयार हुआ। जब वह साहेनवाल से चलने ही लगा था, तो ५ अन्य सूबे लहनासिंह, पहाड़ासिंह, हुक्मसिंह, काहनसिंह निहंग तथा गोपालसिंह थाना के मुन्शी सारजंट के साथ साहेनवाल के थाने में पहुँच गये। मि० बेली ने इनको प्रातःकाल गाड़ी में लुधियाना भेज दिया। यह सूबे अब मेरे पास लुधियाना में गोरखों के गार्द के पहरे में हैं। मैं किसी यूरोपियन अफ़सर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जिसकी गार्द के पहरे में इन्हें यहाँ से आगे भेज दूँगा। हर एक बात शान्त हुई प्रतीत होती है। मैंने समस्त ज़िलों के अफ़सरों को अपने-अपने ज़िलों के बन्दीखानों तथा धनकोषों पर सहसा आक्रमणों के बचाव के लिये गार्दों को पक्का करने के लिये हुक्म भेज दिये थे। मलूकसिंह को छोड़कर शेष सब बड़े बड़े नामधारी पकड़ लिये गये हैं। मलूकसिंह भैंणी में ही बताया जाता है। आज प्रातः ही मि० बेली उसको साथ लेकर यहाँ पहुँच जावेगा। मैं गुरु रामसिंह जी को देश निर्वासन का दंड देने के विरुद्ध था, परन्तु मि० फोरसाइथ ने कहा, कि वह गुरु रामसिंह जी को मालेरकोटला जाने से पहिले लुधियाना से अवश्य ही बाहर भेज देगा।

नोट—मि० परकिन्ज की १७ जनवरी की सायं को कोटला से लिखी हुई विशेष रिपोर्ट के अनुसार रियासत नाभा के रसाला की गार्द, काहनसिंह को गाँव मूलोपुर से, जो कोटला से ५ कोस पर है, डिप्टी कमिश्नर मि० कावन के हुक्म से गिरफ्तार करके कोटला में ले आई थी। काहनसिंह को भी साहनेवाल लाया गया तथा इन पाँचों के साथ ही साहनेवाल से लुधियाने को भेज दिया गया था।

गुरुद्वारा की तलाशी, तालाबन्दी तथा पुलिस चौकी का बैठना

साहनेवाल के थाने से सूबों को रेल द्वारा लुधियाना भेजने के पश्चात् लेफ्टीनेन्टकर्नल बेली, गोरखों की कम्पनी, १२ नम्बर रिसाला के २५ सवार तथा पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर १८ जनवरी गुरुवार को सूर्योदय के साथ ही गुरुद्वारा भैंणीसाहब में पहुँच गया। आस-पास के गाँवों के नम्बरदार भी बुला लिये गये थे।

मि० बेली ने पहुँचते ही गुरुद्वारा को घेरा डाल दिया, तथा आदेश दिया, कि गुरुद्वारा में उपस्थित प्रत्येक पुरुष, स्त्री, बालक, और वृद्ध को निकाल कर गाँव से बाहर रस्ते पर खड़ा कर दिया जाय। सूबा मलूकसिंह को नहर के स्थान से बुलाकर भैंणी में लाया गया। आदेश मिलते ही गोरखों और घुड़सवारों तथा पुलिस के सिपाहियों ने पलभर मे गुरुद्वारा खाली करवा दिया। जिस प्रकार भी कोई खड़ा था उसी प्रकार उसे शरीर के कपड़ों में भूखे पेट ही रास्ते पर लाकर गिरोह में मिला दिया गया। केवल गुरु रामसिंह जी के पिता, भाई, सुपुत्री, दुकान का प्रबंधक भाई बरियामसिंह, तथा निजीसेवक भाई मक्खनसिंह को घर में रहने दिया गया। आपके ८२ पशुओं गायों, भैंसों, घोड़ों तथा ऊंटों की देखभाल के लिये ११ आदमी और रहने दिये गये। शेष समस्त जत्थे को गार्दों के पहरे में भैंणी से लुधियाना पैदल लाया गया। बच्चों, स्त्रियों, वृद्धों को भी साथही पैदल चलाया गया। ५-६ घन्टे की भूख, प्यास, चिन्ता, पैदल चलने के कष्ट सहन करता हुआ नामधारीसिंहों का यह जत्था दोपहर उपरान्त लुधियाना में पहुँचा। गुरुवार का यह दिन भयानक दिन था। गुरु रामसिंह जी तीन सूबों के सहित निर्वासित हुये गार्दों के पहरों में इलाहाबाद की ओर रेलगाड़ी में ले जाये जा रहे थे। ५ सूबे लुधियाना में गार्दों के पहरे में बैठे थे। १६ नामधारी कोटला में तोपों से उड़ाये जा

रहे थ । १७२ नामधारियों का यह जत्था भैंणी से लुधियाना तक फौजी गार्दों के पहरे में बारह कोस तक पैदल चलाकर लाया गया था ।

१६ जनवरी शुक्रवार को लुधियाना से पंजाब सरकार को निम्नलिखित तार भेज दिया गया, जो पंजाब सरकार के सचिव ने हिंद सरकार के गृह सचिव को उसी दिन भेज दिया ।

'कमिश्नर ने कल अन्य १६ बन्दियों को कोटला में तोपों से उड़वा कर मरवा दिया है। चार पटियाला वालों के हवाले कर दिये गये हैं। जो ७ मलौद में पकड़े गये थे, उन पर आज नियम पूर्वक मुकद्दमा चलेगा। मि० बेली अभी भैंणी में ही है । उसने भैंणी से सबको निकालकर गुरद्वारा खाली करवा दिया है। जो १७२ दोपहर पश्चात् मेरे पास पहुचे थे, मैंने उनमें से १२२ को टोलियों में उनको अपने अपने ज़िलों में भेज दिया है। अभी ५० शेष हैं जिनका भैंणी के अतिरिक्त कोई निवासस्थान नहीं। इनको मैंने कमिश्नर के हुक्म अनुसार पहरे में रक्खा हुआ है । लाहौर से आया मि० समिथ काहनसिंह तथा अन्य सूबों को आज दोपहर उपरान्त इलाहाबाद को ले जायगा ।"

१६ जनवरी को एक बजे वायसराय ने निम्नलिखित अति आवश्यक तार पंजाब के लेफ्टीनेंट गवर्नर के नाम भेजा ।

"स्पष्ट पक्के हुक्मों के बिना कूकों को झटपट मार डालने को बन्द करो।"

लेफ्टीनेन्ट गवर्नर ने इसका निम्नलिखित उत्तर भेजा :—

"आपका तार मिला। मि० कावन के ५० कूकों को मार डालने के पश्चात्, कल कमिश्नर ने मालेरकोटला पहुँचकर विचार पूर्वक तथा चौकसी से १६ अन्य को अपने ही हुक्म से मरवा दिया। अंग्रेज़ी इलाके में पकड़े गये कूकों पर बाकायदा मुकद्दमे चलाये जायेंगे । इसके बाद किसी को भी झटपट मौत के घाट नहीं उतारा जायगा ।"

गुरुवार तथा शुक्रवार दोनों दिन गुरुद्वारा की तलाशी होती रही । कलनल बेली ने एक एक वस्तु को स्वयं अपनी आंखों से देखा तथा प्रत्येक बात की पूरी-पूरी तफतीश की। मि० बेली ने अपने ३० जनवरी की रिपोर्ट में तलाशी में निकली निम्नलिखित वस्तुओं की सूची दी है। (१) नैपाल से सौगात के रूप में आई हुई दो खुखरियाँ (२) सोने चाँदी के आभूषण, मूल्य नहीं लिखा (३) नकदी १५०० के लगभग (४) टकुए अथवा

कुल्हाड़ियाँ ३६ (५) गंडासे ६ (६) लठ् तथा चक्कर संख्या नहीं दी, (७) कागज़ पत्र—विशेष नहीं मिले ।

कलनल बेली ने नकद रुपये, सोना चाँदी के आभूषण, बहुमूल्य दुशाले, जरी की कशीदाकारी के बहुमूल्य चोगे, आदि समस्त वस्तुयें एक सन्दूक में बन्द करवाकर लुधियाना के सरकारी कोष में भेज दीं । गुरु राम सिंह जी की बहुमूल्य पोशाकें तथा पहनने के वस्त्रों के सन्दूक लुधियाना सदर के दफ्तर में भेज दिये ।

गरुद्वारा को ताले लगा दिये गये । थानेदार उमरावअली के आधीन २० सिपाहियों की चौकी बिठा दी गई । चौकी के सिपाहियों ने गुरुद्वारा की डयोढ़ी में डेरे लगाकर हुक्के गुड़गुड़ाने आरम्भ किये । गुरु रामसिंह जी के परिवार को नजरबन्दों के रूप में मकान की दो कोठड़ियों में रहने की आज्ञा दी गई । कुटुम्ब के बंदों की बाहर जाते तथा घर लौटते समय तलाशियाँ ली जाती । किसी नामधारी को भैंणी में आने की आज्ञा नहीं थी । जो भी आता, उसे तुरन्त ही पकड़ लिया जाता । ५० साल अथवा सन् १६२२ तक पुलिस की चौकी दरवाज़े में बैठती रही ।

२० जनवरी शनिवार को मि० फोरसाइथ ने भारत के आजादी के इतिहास के नामधारी आन्दोलन के इस खूनी सप्ताह के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण देते हुए पंजाब सरकार के सचिव को एक पत्र लिखा जिसका सार यह है :—

(१) "मैं कल १६ जनवरी को मलौद पहुँच गया था, चार अपराधियों को फाँसी के दण्ड दिये गये । चारों के चारों बुरी तरह घायल थे. दो की हड्डियाँ टूटी हुई थीं ।

(२) मुझे कप्तान मेन्जीस डिप्टी इन्स्पैक्टर जनरल की ओर से रिपोर्ट मिली है कि कलनल बेली १७२ कूकों को भैणी से लुधियाना ले आया है । इनमें से चार सूबे इलाहाबाद भेज दिये गये हैं । फतहसिंह, हीरासिंह, गुरुमुखसिंह, खजानसिंह, हरनामसिंह, हर्षासिंह, समुन्द्रसिंह, अतरसिंह तथा धर्मसिंह सूबे और प्रसिद्ध नामधारी हुक्म आने तक लुधियाना में ही गार्द के पहरों में रक्खे हुए है । १२२ आदमियों को अपने अपने घरों को भेज दिया गया है । शेष ५० आदमियों के न घर हैं न घाट तथा नाही उनकी जीविका के कोई साधन । वास्तव में यह लोग इस सम्प्रदाय के खतरनाक आदमियों में से हैं, जिन्होंने सम्पत्तियाँ तथा घर घाट बेच दिये हैं ।

अब अपने नेता का हर हुक्म मानने के लिए प्रस्तुत बैठे हैं। मैं इनसे जमानतें मांगूंगा। यदि इन्होंने जमानतें न दीं, तो न्याय अनुसार इनको २-२ साल की कैद का हुक्म दे दूंगा।

मैंने हुक्म दे दिया है कि इस समय भैंणी में पुलिस की चौकी बिठा दी जाय।

(३) अभी तक यह भय है, कि नामधारी फिर कोटला पर आक्रमण करेंगे। पिछले सप्ताह चारों ओर से कूकों की टोलियों के कोटला की ओर प्रस्थान के समाचार मिलते रहे हैं तथा कोटला से एक अथवा दो मील पर आकर आगे इन टोलियों के विषय में कुछ पता नहीं चलता था। इस पर मैंने कोटला के नाज़िम को हुक्म दिया है, कि १०० नये आदमी नौकर रखकर बढ़िया शस्त्रों से सन्नद्ध करके शहर की रक्षा करे।

(५) कूकों का प्रचार तथा दीवान बन्द किये जांय। कूकों को दस अथवा १२ आदमियों से अधिक किसी प्रकार का कोई सम्मेलन करने की आज्ञा न दी जाय।

(६) उस समय तक लुधियाना में फौजी दस्ते रखे जांय, जबतक कूका सम्प्रदाय के आदमी अपनी खतरनाक कार्यवाहियां बन्द नहीं करते।

(७) मैं डिप्टी कमिश्नर मि० कावन के श्रम से किये गये यत्न भी आपके सामने लाना चाहता हूँ। उसकी तुरन्त की गई कार्यवाही के कारण आने वाला एक भयानक विद्रोह समाप्त कर दिया गया है। मुझे अत्यन्त शोक है, कि मुकद्दमा चलाने के बिना तत्काल दोषियों को मारने की कार्यवाही ने उसकी अच्छी सेवा को कुछ नीचे गिरा दिया है। परन्तु मैं विश्वास करता हूँ, कि जिन परिस्थितियों में उसने यह कार्यवाही की है, उस पर भी विचार किया जायगा। मेरा हुक्म मिलते ही उसने यह कार्यवाही बन्द कर दी थी, तथा शेष कैदियों के विरुद्ध नियमानुसार कानूनी कार्यवाही की गई। इस पूरे समय में कलनल परकिन्ज भी मि० कावन के साथ ही रहा तथा उसने बहुत होशियारी दिखाई।

(८) दोनों डिप्टी इन्स्पैक्टर जनरलों, कलनल बेली तथा कैप्टन मेन्ज़ीस ने भी बहुत ही अच्छी सहायता दी है। पहिले भी महाराजा साहब पटियाला, राजा साहब जींद तथा राजा साहब नाभा की ओर से तत्कालीन दी गई सहायता का वर्णन कर चुका हूँ। मैं विश्वास करता हूँ कि लेफ्टीनेंट कलल साहब बहादुर इनकी सेवा स्वीकार करके इनका धन्यवाद करेंगे।

(९) अब गोरी फौज की लुधियाना में कोई आवश्यकता नहीं रही। मैं सिफारिश करता हूं, कि ५४ नम्बर का ट्रूप तथा तोपखाना जालन्धर को वापिस भेज दिये जांय। कलनल गफ के १२ नम्बर रिसाला के सौ सवार तथा गोरखों की पलटन को अभी लुधियाना में ही रक्खा जाय।

(१०) मैं अब वापिस अम्बाला जा रहा हूं।

नोट :—पश्चात् लिखा—जब मैं यह रिपोर्ट लिख चुका था, तब आपका तार मिला, कि बिना लाट साहब के स्पष्ट हुक्म के किसी के प्राण न लिए जाँय। आपको मेरी रिपोर्ट से पता लग जायगा, कि मैंने पहिले ही ऐसा किया है। यहां मैं यह बताना चाहता हूँ, कि मेरे कोटला पहुँचने पर तीस आदमी मेरे सामने पेश किये गये थे, जो कोटला के हमले में शामिल थे। इनमें से १६ को मैंने कमिश्नर के अधिकारों का उपयोग करके प्राणदण्ड दिए। चार को देश निर्वासन के दण्ड दिए गए। शेष दस को अभी दण्ड नहीं दिया।

१९ जनवरी को हिन्द के वायसराय के दफ्तर फोर्ट विलियम से फाइल नम्बर ७ सन १८७२ के द्वारा एक रिपोर्ट हिन्द विभाग के सचिव को लन्दन में भेज दी गई। इसके साथ ही १४ तारों की नकलें भी भेजी गईं। इस रिपोर्ट का सार यह है :—

"कूकों के कुछ गिरोहों ने लुधियाना जिले में राजप्रबन्ध में रुकावट पैदा कीं।"

(२) इनकी ओर से दो आक्रमण किये गये। पहिला १४ जनवरी की रात को लगभग २०० आदमियों ने किला मलौद पर किया, तथा अनुमान यह है कि इसी हमले के लगभग ५०० आदमियों ने १५ जनवरी को प्रातः ही मालेरकोटला पर दूसरा आक्रमण किया। आक्रमणकारियों को दोनों स्थानों से भगा दिया गया।

(३) डिप्टी कमिश्नर लुधियाना के प्रार्थना करने पर उसकी सहायता के लिये फौजी दस्ते दिल्ली तथा जालन्धर से लुधियाना भेज दिये गये थे। साथ ही राजा जींद, महाराजा पटियाला तथा राजा नाभा ने यथा समय पर तुरन्त सहायता की है। लगभग सौ कूकों में से जो कोटला के हल्ला से सम्बन्ध रखते थे, कुछ मार दिये गये हैं, कुछ घायल हैं और कुछ बन्दी हैं। इनके नेता हीरासिंह, तथा लहनासिंह मार दिये गये हैं। १७ तारीख को डिप्टी कमिश्नर ने तार भेजा है, कि शान्ति स्थापित हो गई है।

(४) कूका सम्प्रदाय के नेता गुरु रामसिंह जी को गवर्नर पंजाब ने तत्काल दिल्ली लाने का आदेश दिया था। उसको तीन सूबों के सहित फौजी गार्द के पहरों में इलाहाबाद भेज दिया गया है।

(५) अब तक हमें यही समाचार मिले हैं। लेफ्टीनेंट गवर्नर की पूरी रिपोर्ट आने पर शीघ्र ही शेष समाचार आपकी सेवा में भेज दिये जायेंगे।

(प्रथम भाग समाप्त)

शहीद हुये नामधारी सिंह

१७ जनवरी १८७२ बुधवार को मि० कावन के हुक्म से तोपों से उड़ाये गये, रविवार तथा सोमवार की रात को मलौद, तथा सोमवार को मालेर कोटला की घटना में शहीद हुए नामधारी सिंहों के नाम तथा पते ।

नोट:—यह संख्या इस प्रकार है । तोपों से उड़ाये गये ४९, तलवारों से कटा १ मलौद में मरे २ मालेर कोटला में मरे ७, मालेरकोटला में पकड़ा हुआ घायल मरा १, कुल ६० ।

सरकारी फायलों में तोपों से उड़ाये जाने वालों में से केवल सरदार हीरासिंह तथा सरदार लहनासिंह के नाम दिये हैं शेष के नहीं । मालेरकोटला की घटना में अत्यन्त घायल हुये भाई वजीरसिंह का नाम भी आता है । मलौद की घटना में नन्दसिंह हंडियायेवाला का नाम भी लिखतों में अंकित हैं । शेष ५५ सज्जनों के नाम नामधारी लेखकों की रचनाओं से ही लिये गये हैं । मासिक पत्र सतयुग २२ माघ सम्वत् १९८६ पन्ना ७४, ७५) (ख) युगपलटाऊ सतगुरु, कर्ता सन्त निधानसिंह जी आलम पन्ना २०१–२०३ (ग) सतगुरु विलास (पन्ना ४२० से ४२२)

रियासत पटियाला—संख्या २४

गांव सकरौदी के सरदार हीरासिंह गरेवाल, सरदार लहनासिंह गरेवाल तथा भाई मित्तुसिंह रविदासीया, गांव रड़ के अतरसिंह सद्दासिंह, हीरासिंह, हरनामसिंह, गुरदत्तसिंह, नारायणसिंह तथा बिशनसिंह, गांव बरनाला के नत्थासिंह, वरयामसिंह, तथा रतनसिंह, गांव वालियां के अतरसिंह तथा फतेहसिंह, गांव मूम के वरयामसिंह तथा हीरासिंह गांव फुलेड़ा का सुजानसिंह, गांव दयालपुर कोटला का कालासिंह । गांव रंझियां का नारायणसिंह गांव कौझला का जयमलसिंह गांव बीवा का शेरसिंह । गांव हंडियाये का नन्दसिंह ।

रियासत नाभा—संख्या ८

गांव धनौला का कटारसिंह, गांव गुरुसर का परसासिंह, गांव भदलथूहा के ध्यानसिंह तथा रतनसिंह, गांव दयालगढ़ के अतरसिंह तथा भूपसिंह, गांव हरीपुर का गूजरसिंह, गांव गिल्ल का हरनामसिंह ।

रियासत जींद—संख्या ३

गांव गगड़पुर के खड़गसिंह तथा प्रेमसिंह, गांव मन्डी का हरनामसिंह ।

रियासत मालेर कोटला—संख्या ६

गांव फरबाही के नम्बरदार गुरमुखसिंह, भूपसिंह, खड़गसिंह तथा बेलासिंह । गांव चूंध का नारायणसिंह तथा गांव चक्क (कूके) का ध्यानसिंह ।

जिला फ़ीरोज़पुर—संख्या ६

गांव मराज के माघासिंह, अतरसिंह तथा जोधसिंह, गांव सादक का निधानसिंह तथा हरनामसिंह, गांव गंजी का जगतसिंह ।

जिला लुधियाना

गांव लोहगड़ थाना डेलहों का देवासिंह गरेवाल, गांव रूड़का थाना डेलहों के उत्तमसिंह तथा चढ़तसिंह, गांव लहिरा थाना डेलहों का सुहेलसिंह, गांव चाओ थाना शहना के महांसिह तथा वीरसिंह, गांव पीरदाकोट थाना शहना का प्रेमसिंह गांव संगोवाल का काहनसिंह, गांव बल्ली थाना शहना का जीवनसिंह, गांव रब्बों थाना डेहलों के नत्था सिंह तथा वज़ीरसिंह गांव लताला थाना डेहलों के मिहांसिंह तथा गुरमुख सिंह ।

---

१८ जनवरी १८७२ गुरुवार को मि० टी० डी० फोरसाइथ कमिश्नर अम्बाला डिवीजन के हुक्म से तोपों के साथ उड़ाये गये नाम-धारी सिंहों के नाम और पते । (यह नाम फायल से लिये गये हैं ।)

रियासत पटियाला—संख्या ६

गांव सकरौदी का सरदार अनूपसिंह गरेवाल, गांव बालियां का अलवेलसिंह तथा जवाहरसिंह, गांव कांझला का भगतसिंह, गांव मलूमाजरा का रुढ़सिंह, गांव जोगा का श्यामसिंह ।

भारत में बृटिश साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने के अपराध में ६६ नाम- धारियों को तोपों से उड़ाये जाने वाले ऐतिहासिक स्थान (मालेर कोटला के बजर) पर ८३ वर्ष पश्चात् १७-१८ जनवरी सन् १९५५ को शहीदों की यादगार में मनाया गया प्रथम स्मृति समारोह । जिसमें श्री गुरु महाराज प्रतापसिंह जी और उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री बाबा जगदीशसिंह जी विराजमान हैं ।
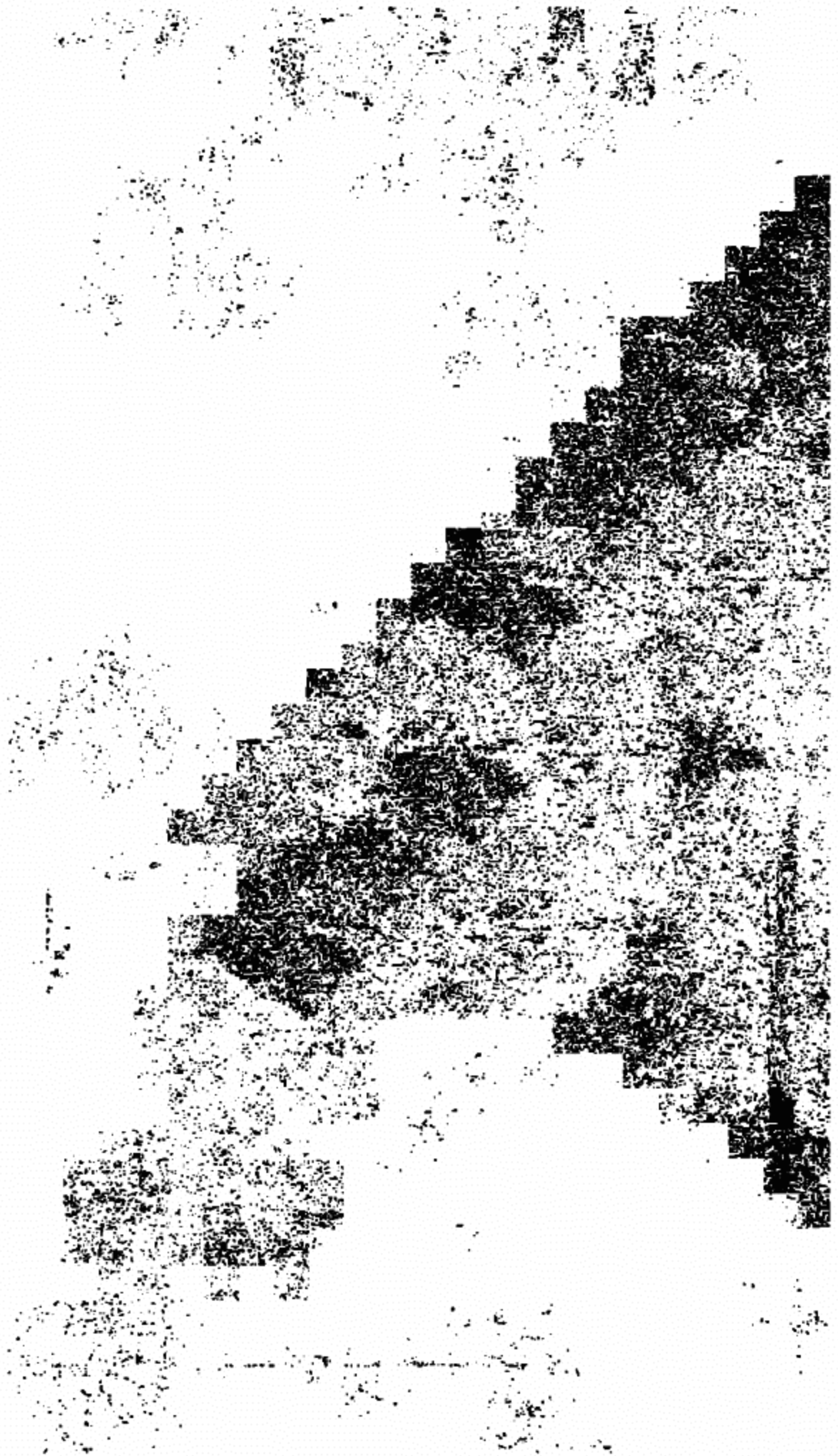
रियासत नाभा—संख्या ३

गाँव पित्थो का हीरासिंह, गाँव गिल्ल का केसरसिंह, गांव भदलथूहा का शोभासिंह ।

जिला अमृतसर—संख्या १

गाँव झबाल का हाकिमसिंह ।

जिला फ़ीरोज़पुर—संख्या १

गाँव महाराज का वरयामसिंह

जिला लुधियाना—संख्या ५

गाँव रब्बों के सेवासिंह, सुजानसिंह, बेलासिंह तथा शोभासिंह, गाँव छन्ना बहादुरसिंहवाला का बरयामसिंह ।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
१	नि:पक्ष	निष्पक्ष
३	अनमुद्रित	अमुद्रित
४	ड्योड़ी	ड्योढ़ी
१३	हृदयी	हृदय
१४	गुरू	गुरु
१५	चिन्ह	चिह्न
१७	आचरणशोल	सदाचारी
१८	गुर	गुरु
२०	सदाबरत	सदाव्रत
२२	मृत्यु पर	मृत्यु की
२७	न	ने
३१	सुलाखों	सलाखों
३२	तरुणा	तरुण
४७	असाढ	आषाढ़
४८	डंड संहिता	दंड संहिता
४८	अध्यात्मिक	आध्यात्मिक
५२	कूकिर्या दा बिधिया	कूकियां दी विथया
५४	शिवद्वाले	शिवद्वारे
"	वद्धावस्था	वृद्धावस्था
६४	होश्यारपुर	होशियारपुर
६६	मुठडडा	मुठड्डा
६८	नई ीति	नई रीति
६९	हुय	हुये
७१	दूती	दूत
७२	गेंडासिंह	गेंदासिंह

पृष्ठ—अशुद्ध		शुद्ध
७२	म	में
७९	रहित	रहत
९०	ककों	कूकों
९१	अधार	आधार
९२	व्यय	न्याय
९५	बटासिंह	बूटासिंह
९८	पुन्यदान	दानपुण्य
१००	मढीआं	मढ़ियां
१०२	असाड़ी	आषाढ़ो
१०३	सिपाहिओं	सिपाहियों
१०८	बरा	बुरा
१२२	सम्बंघ	सम्बन्ध
१२९	फटकन	फटकने
१३०	ार्थना	प्रार्थना
१३१	हकम	हुक्म
१३२	बचड़ो	बूचड़ों
"	रारकोट	रायकोट
"	चाथड़ा	चोथड़ा
१३४	कननल	कलनल
१३६	ओर	और
"	सरकारा	सरकारी
१४२	भज दी	भेज दी
१४३	नियाये	न्याय
१४६	सपुरद	सुपुर्द
१४८	म	में
१४९	अपराथ	अपराध
१५०	ढ़ता	दृढ़ता
१५२	रैगलेशन	रैगूलेशन
१५४	महाण	महाराजा
१६२	ेरा	डेरा
१७३	ह	है
१८३	मष्त्र	मध्य

पृष्ठ—अशुद्ध		शुद्ध
१८४	साथीओं	साथियों
१८५	पालि	पंक्ति
"	विशष	विशेष
१८६	क्रुद्धत	क्रुद्ध
१८९	दोशियों	दोषियों
१९२	कलनल	कर्नल
१९८	थ	थे
१९९	गरुद्वारां	गुरुद्वारा

---

motive and ambition was bent upon religious pretext, to reign and acquire dominion, and he deceitfully implanted this capricious notion in the minds of his ignorant and superstitious followers, that their creed was to predominate,

......Had not this appalling punishment been inflicted so promptly and so well, as was the case, and had not Ram Singh and his Soobahs been deported from the province, there was no hope of the disturbances being quelled soon, and, without doubt whould have been an endless waste of money and life before tranquility and confidence would have been restored."

(*Journal of the Asiatic Society of Bengal Part* 1 *Nos. i to iv*...1869)

[4] A disciple and namesake of Ram Singh gave me the following list of virtues especially inculcated by his Guru. "Fear of God, faithfulness, purity, and cleanliness, truthfulness, benevolence, consciousness of Deity's presence, compassion, abstinence from covetness, abstinence from perjury, particular stress is laid on truthfulness, and it will, I think, be admitted that as a class, the Kukas are remarkable in this respect.

(*History of the Punjab by Mohammad Latif Pages* 594-595 *Published in* 1891.)

[5] The Kukas are an orthodox sect of the sikhs. The principles of their teachings are monotheistic and moral. The tenets of their religion prohibit idol worship, and observance of the distinction of caste. They permit the marriage of widows, prohibit the receiving of money in lieu of a daughter or a sister, and enjoin morality and abstinence from the use of spirits and other intoxicating liquors...Mohammdans were permitted to become the members of the new sec t...Suspicious having been aroused, that the object of Ram Singh and his disciples were not merely religious, but that under the guise of a religious reformer and a teacher of moral precepts, he harboured deep political designs, the Guru was, for some years, detained under strict surveillance in his village.

[6] (*Census of India* 1891. *Volume XIX. The Punjab and its feudatories. The report on the census. By E.D. Maclagan. pages* 168-171).

There have since annexation been times, when the political feelings of the sikhs have been more or less disturbed, as they were, for instance in 1886; but there has not with one exception, been any serious organisation on the part of the sikhs against the constituted authorities on religious or political grounds. The one exception alluded to is that caused by the now famous Kuka sect. Kukas; Hindus. 690, Sikhs 10541 Muslims 5.

The Kukas will often try to conceal the fact of their belonging to this sect...... I have allowed the five muslman Kukas to stand, having met a person who knows personally one of them, but I am unable to suggest what the form of faith by such as one may be.

(*Ludhiana District Gazetteer*
1904.)

[7] The Truth is that it is not possible for a Kuka to be a loyal subject of the British Government.

भारतीय स्वतन्त्रता के निर्भीक योद्धा "श्री के. एम. मुन्शी"

का एक लेख

(अनुवादक---नाहर सिंह)

स्वर्ण युग का भैणी साहिब

एक वैदिक आश्रम, लम्बे बहुत दूर दूर तक विस्तृत हरे भरे खेत और उसके मध्य में पुराने सुन्दर वृक्षों का समूह तथा उन वृक्षों के नीचे स्वस्थ जुगाली करती हुई गौएं, मिट्टी की झोपड़ियों में लम्बी दाढ़ी वाले ऊँचे कद्दावर, हृष्ट-पुष्ट पुरुष, रूपवती स्त्रियाँ, खादी के कपड़े पहने हुए सीधी-साधी जाति, प्रसन्न मुख-मुद्रा, शिष्ट एवं अतिथि-सत्कार के लिए तत्पर । वृक्ष-समूह के मध्य में प्रार्थना करने के लिए एक कच्ची दालान जिसकी छत फूस की वनी हुई है और जहां प्रभात काल से भगवान् की स्तुति में मन्त्रोच्चारण का मन्द मन्द मधुर स्वर गूंजा करता है । हवन कुण्ड के चारों ओर लम्बी श्वेत दाढ़िओं वाले पुजारी बैठे हुए अग्नि में घी की आहुति दिया करते हैं । हवन-कुण्ड से उठती हुई ऊंची ऊंची लपटें ऐसी प्रतीत होती हैं, मानों मानव-आत्मा ईश्वर की खोज करने ऊपर जा रही है ।

यह वही दृश्य है जिसकी कल्पना मैंने अपने 'लोपामुद्रा' नामक उपन्यास में अगस्त्य मुनि के वैदिक आश्रम के बारे में की थी, परन्तु यह कल्पना मैंने यहाँ आकर अपनी चर्म-चक्षुओं से प्रत्यक्ष देखी । उस दिन नवम्बर १९४१ ई० की पहली तारीख थी और वह आश्रम लुधियाना से केवल १६ मील की दूरी पर स्थित है। उस स्थान का नाम 'भैणी-साहब' है। यहां पर नामधारी सिक्खों के सद्गुरु महाराज प्रतापसिंह जी निवास करते हैं।

जब मैं वहां पहुंचा तो चांदनी रात थी । कल्पना सत्य में परिणत हो गई थी । मैं सहसा विश्वास न कर सका कि इस बीसवीं शताब्दी में वैदिक-काल की सुरम्य रात्रि के सदृश एक ऐसा शान्त विश्राम-स्थल पंजाब में हो सकता है।

[8] Ranjit Singh by Sir Lepel Griffin, K.C.S.I. Published at the Clarendon Press; 1892.

His Successor, a carpenter of the Ludhiana district, named Ram Singh, rose to considerable importance and attached to himself a large number of fanatical disciples known as Kukas, who were distinguished by a peculiar dress, secret watchwords, and political organization. The original movement was religious, an attempt to reform the Sikh practice and restore it to the charácter it possessed in the time of Govind Singh. As the sect grew in numbers; its ambition increased, till, at last, it preached a revival of the Khalsa and the downfall of the British Government, At this time I happened to be the Chief Secretary to the Punjab Govt. and the proceedings of the Kukas caused a great amount of anxiety and trouble. They were not, however, inspite of their seditious teachings interfered with until they broke into open revolt and attacked the Mohammadan Town of Maler Kotla near Ludhiana. The insurrection was put down with great severity and some fifty of the rebels were blown from guns after summary trial. At the same time all the Kuka leaders in different districts of the Punjab were arrested in one night and deported some to Rangoon, others to Aden, and the less important were confined in Punjab Jails. (not fifty but sixty six—49 blown away with guns on 17th Jan. 1872 without trial and one cut down by sword, and sixteen others blown away with guns after summary trial on 18th Jan. 1872 (Nahar Singh).

गुरु जी का अद्भुत व्यक्तित्व है, शरीर पर श्वेत निर्मल खादी के वस्त्र थे, गले में उज्ज्वल ऊन की माला थी, उन्हें देखकर ऐसा लगता था मानों ऋग्वेद संहिता का कोई ऋषि प्रकट हो गया है । उनकी मुख-मुद्रा गम्भीर एवं होंठों पर मुस्कराहट की ऐसी छवि शोभायमान थी जो दूसरे को अनायास ही आनन्द देती थी । समाज सेवा की भावना उनकी मुख-मुद्रा से स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी । वे सात लाख नामधारियों पर निरंकुश राज्य करते हैं । उनके वचन उस जाति के लोगों के लिए ब्रह्म-वाक्य के सदृश होते हैं । उस जाति के लोग न्यायालयों में नहीं जाते, अपितु गुरु जी के निर्णय ही उन्हें शिरोधार्य होते हैं ।

गुरु जी शिष्टता एवं सौम्यता की साक्षात-मूर्ति हैं । उनकी भद्रता में आधुनिक काल की कृत्रिमता नहीं दिखाई देती, अपितु कुछ आन्तरिक शुद्धता एवं स्वाभाविकता की झलक आती है; जो केवल हमारे सभ्य पूर्वजों में ही दृष्टिगोचर होती है । उनकी शिष्टता के सम्मुख आधुनिक सभ्यता अधूरी एवं नग्न दिखाई देती है । शिष्टता तो उनके स्वभाव में ही जान पड़ती है । वे संगीत एवं काव्य में भी दक्ष हैं । यही नहीं घोड़ों और गायों के भी विशेषज्ञ हैं तथा वे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के विषय में भी बहुत कुछ ज्ञान रखते हैं ।

उन्होंने हमारा स्वागत ईंटों की बनी हुई एक झोपड़ी में किया, जिसमें शीशे के दरवाजे थे और जो कदाचित् हम जैसे आधुनिक व्यक्तियों की सुविधा के लिए गुरु जी ने बनवाई थी । उन्होंने मेरा परिचय अपने दो नवयुवा पुत्रों से कराया । वे स्वस्थ तथा सुन्दर थे और जिनसे भविष्य में नामधारियों पर शासन करने की आशा की जा सकती थी । मैं उनके एक प्रमुख शिष्य से मिला, जिसका कद ऊंचा, कन्धे चौड़े और दाढ़ी लम्बी तथा काली थी तथा जिसके सम्मुख अन्य व्यक्ति बौने दिखाई देते थे । उन्होंने मुझसे धारावाहिक अंग्रेजी में ईश्वर और गुरु तथा गुरुमन्त्र की अद्भुत शक्ति के विषय में बातें कीं । वे रावलपिण्डी के एक ठेकेदार थे, लखपति थे, परन्तु उन्होंने स्वयं को गुरु के चरणों में पूर्णतः समर्पित कर दिया था । उनकी पत्नी और वे स्वयं दोनों अनन्य गुरु-भक्त थे और उन लोगों ने अपने जीवन का लक्ष्य शेष समय में इष्ट-मित्रों के घर जाकर भजन-कीर्तन करना बना लिया था ।

भोजन करने के लिए हमें गुरु जी स्वयं ले गए और उन्होंने हमसे इस बात की क्षमा मांगी कि अस्वस्थ होने के कारण उनकी माता भोजन परोसने के लिए उपस्थित न हो सकीं। भोजन परोसने वालों में उनके दोनों पुत्र भी थे। गुरु जी एक स्थायी सदाव्रत, जिसे लंगर कहते हैं, चलाते हैं। कोई भी क्यों न हो, जो वहाँ आता है, उसे भोजन कराया जाता है। गुरु जी ने हमें बताया कि यह उनके गुरु जो की आज्ञा थी। यह स्थायी सदाव्रत गुरु रामसिंह जी ने सन् १८५७ तथा सम्वत् १९१४ में आरंभ किया था, जो उस समय लगातार आज तक चलता आ रहा है। (सम्पादक)

मैंने छः सात लाख शक्तिशाली नामधारियों के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त की। उनका विश्वास है कि गुरुओं की परम्परा दसवें गुरु गोविन्दसिंह जी के साथ समाप्त नहीं हो गई, जैसा कि अधिकतर सिक्खों का विश्वास है, अपितु अब भी विद्यमान है। उनके मतानुसार सद्गुरु प्रतापसिंह चौदहवें गुरु हैं। नामधारी मांस-शराब नहीं खाते पीते और न कृपाण धारण करते हैं। वे अपने वस्त्र स्वयं कातते और बुनते हैं तथा न्यायालय में कभी नहीं जाते। भूतकाल में वर्षों तक उनकी अपनी निजी असहयोग की योजना थी। आपस में पत्र व्यवहार करने के लिए नामधारियों का अपना ही बनाया हुआ डाक प्रबन्ध था। उनके रहने सहने का ढंग अपना निराला था।

मैंने बारहवें गुरु की कहानी सुनी और उन लोगों ने मुझे वे स्थल दिखाए जहाँ उस हुतात्मा (शहीद) की स्मृति अब भी नित्य नवीन है। लगभग १८७२ ई० में अंग्रेजों ने बारहवें गुरु रामसिंह जी महाराज पर यह सन्देह किया था कि वे अंग्रेजी राज्य को ध्वंस कर देने का उपाय कर रहे हैं। वे एक शक्तिशाली जाति के धार्मिक नेता थे, उन्होंने विदेशी शासकों के सम्मुख घुटने टेकने से इन्कार कर दिया था, अतः उन पर सन्देह करना स्वाभाविक था। पुलिस ने भैणी साहब पर छापा मारकर गुरु रामसिंह जी को पकड़ लिया। बंदी बनाकर उन्हें पहले रंगून ले गए, उसके पश्चात् वर्मा के मर्ग्यू नामक स्थान पर ले जाकर रक्खा।

मैंने पूर्ववर्ती गुरु की गद्दी के नीचे का वह भाग भी देखा जिसे अधिकारियों ने कई बार देखने के लिए खुदवाया था कि वहां अस्त्र-शस्त्र छिपाकर तो नहीं रखे गए हैं। मैंने वह अंधेरा रसोई घर भी देखा जिसकी गुम्बज के नीचे गुरु ग्रन्थसाहिब पढ़ने के लिए

नामधारी सिक्खों ने अपने आप को छिपाया था, जबकि गुरु जी पकड़े गए थे और घर की तलाशी हुई थी।

नामधारियों का विश्वास है कि बारहवें गुरु अब भी जीवित हैं। कुछ भी हो नामधारियों के हृदय में वे अब भी वास करते हैं। यह कहा जाता है कि जब गुरु रामसिंह जी को पकड़ा गया था तब उनके शिष्य तलवारों से पुलिस का सामना करने के लिए तैयार थे, परन्तु गुरु जी ने बीच-बचाव किया और कहा—"जो तलवार का प्रयोग करेंगे, वे स्वयं नष्ट हो जाएंगे।"

मुझे नामधारियों की एक वीरत्व-पूर्ण भावना की कहानी सुनाई गई। वह थी गोरक्षा की, जो सिक्खों के सिद्धान्तों का केन्द्र-बिन्दु है। एक बार कुछ नामधारियों ने एक ऐसे मनुष्य का पीछा किया जिसने सरकारी अधिकारी के रूप में एक बैल को जान बूझ कर एक नामधारी के सामने कटवा डाला था। आपस की लड़ाई में ७ नामधारी और ८ सरकारी सिपाही मरे।

"अंग्रेज अधिकारियों की आँखों में नामधारी पहले से ही विदेशी साम्राज्य के शत्रु माने जाते थे। उन्होंने इस घटना की ओट लेकर देश स्वतन्त्रता प्राप्ति हित चलाये गए नामधारी आन्दोलन का गला घोंटना चाहा। १७ और १८ जनवरी सन १८७२ को मालेरकोटला के स्थान पर डिप्टी कमिश्नर मिस्टर कावन और कमिश्नर टी० डी० फोरसाईथ के आदेश अनुसार ६६ नामधारियों को बिना किसी प्रकार के मुकद्दमा चलाये जनता के सामने खुले मैदान में पटियाला, नाभा और जींद के सिक्ख राजाओं की सम्मति और उनकी फौजों की सहायता से तोपों से उड़ा दिया गया। (सम्पादक)

नामधारी शहीदों में एक छोटे कद का मनुष्य भी था, जिसे अधिकारी वर्ग छोड़ देना चाहते थे, परन्तु उसने इस बात पर बहुत ज़ोर दिया कि उसे भी अपने साथियों वाली सज़ा देनी ही चाहिए। अधिकारी ने कहा अभी तुम बहुत छोटे हो और तोप के मुंह तक भी नहीं पहुंच पाते, परन्तु उसका निश्चय अटल रहा। वह थोड़े से ढले चुन लाया और एक के ऊपर दूसरा इस प्रकार रक्खा कि वह उस पर खड़े होकर तोप के मुंह तक पहुंच सके। अन्त में उसी की बात रखनी पड़ी और उसे तोप से उड़ा दिया गया।

मैंने पूज्या वृद्धा माता जीवनकौर को भी श्रद्धांजलि अर्पित की। १८७२ ई० में उनपर विपत्ति आई, उसके पश्चात् उनको तीन मास

तक लगातार सशस्त्र पुलिस के घेरे में नंगे पैरों पैदल चलाया गया था। उन्होंने अपने घर के वैभव को लुटते हुए स्वयं अपनी आंखों से देखा था। उन्होंने अपने शिशु (पुत्र) का पालन-पोषण किया था और उसे उसी उच्च पदवी के योग्य शिक्षा दी थी, जिसके वह अधिकारी थे। उन्हें भूखा भी रहना पड़ा, दीनता का मुख भी देखना पड़ा। लगातार पचास वर्षों तक उनके द्वार पर पुलिस उन्हें तंग करती रहती थी। उस निस्सहाय अवस्था में उनकी वीरतापूर्ण आत्मा में, उस व्यवहार के लिए जो उनके घर और व्यक्तियों के साथ किया गया था, विद्रोह की भावना जागृत हो गई थी।

तदुपरान्त, वर्ष पर वर्ष बीतते गए। सरकार ढीली पड़ गई और दण्ड देने वाली पुलिस भी वहां नहीं रही। अब वे प्रतिदिन गुरु ग्रन्थ-साहब जी का पाठ भय रहित होता हुआ देखती हैं। जो लोग नामधारी दरबार में पूजा के लिए प्रतिदिन आते हैं, उनकी वे सेवा करती हैं। परम्परा के अनुसार वे अपने पुत्र को भी अपने पद पर उन्नत होते हुए देखती हैं जो अपनी साधुता एवं शिष्टता से लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हुए अपने पद की प्रतिष्ठा को बनाए हुए हैं। वे एक सुखी माता हैं।

जब उन्होंने अपनी आंखों से जो बड़ी अवस्था के कारण धुंधली हो गई थीं, मुझे देखा तो उन्होंने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि पिछली रात को वे स्वयं भोजन परोसने न जा सकीं, क्योंकि वे अस्वस्थ थीं। मैंने अपने सम्मुख खड़ी हुई उस छोटी सी मूर्ति में एक महान् नारी के दर्शन किए जिसने जीवन में बड़ा संघर्ष किया था और उसमें विजय प्राप्त कर ली थी। गुरु प्रतापसिंह जी ने स्वाभाविक भाषा में मुझसे कहा—"मैं आज जो कुछ भी हूं, उसका श्रेय इन्हीं को है।"

उस रात मैं उसी ईंटों की बनी हुई, शीशों के दरवाजों वाली झोंपड़ी में ही रहा। शरद्-पूर्णिमा की ज्योत्स्ना खेतों पर बिखरी हुई थी। वृक्षों की फुनगियों को छूती हुई मन्द मन्द समीर बह रही थी। रात्रि की उस निर्जनता में मैं निकल पड़ा—दूर तक विस्तृत सौन्दर्य का प्रभाव मुझ पर पड़ा और मैंने अनुभव किया कि यह

नोट—इस समय वह ज्वर ग्रस्त भी रहीं।

मातृभूमि के १२वें स्वतन्त्रता दिवस पर

बाबा जगजीतसिंह और बाबा वीरसिंह

की ओर से सद्भावनाओं सहित

सादर भेंट

भैनी साहिब
जि० लुधियाना (पंजाब)
१५ अगस्त, १९५९

स्थान मशीन के सदृश चलते हुए सांसारिक संघर्षों से दूर है। अछूता है और यहां वह शान्ति है, जिसके लिए ऋषिगण लालायित रहते थे और उसे प्राप्त भी कर लेते थे।

जब तक भारत-भूमि पर ऐसे स्थल रहेंगे, यह सौंदर्य की वस्तु रहेगी। क्या ही अच्छा होता कि मैं कुछ दिन वहां ठहर सकता, परन्तु वह सम्भव नहीं था।

दूसरे दिन गुरु जी ने प्रातः चार बजे से ही अपनी प्रार्थना प्रारम्भ कर दी जो पुरातन काल में ऋषि मुनियों के लिए पवित्र समय था। मैं तनिक विलम्ब से उठा और प्रार्थना में सम्मिलित हो गया। साधारण ईंटों के बने हुए उस विशाल प्रार्थना-भवन में भक्ति के भजन गाये जा रहे थे। गुरु ग्रन्थसाहबजी के पद्यों का पाठ किया जा रहा था। इस झुटपुटे में खादी धारण किए हुए नर तथा नारियां उस प्रार्थना–भवन में बैठे हुए थे। उनकी आत्माएं भक्ति संगीत से प्रभावित हो पवित्र हो रही थीं और उससे भी अधिक भगवान् की उस भक्ति भावना से पवित्र हो रहे थे जिससे वे ओत-प्रोत थे।

प्रार्थना समाप्त हुई। गुरु जी के दोनों पुत्रों ने हमें और भी अधिक भक्ति संगीत का रसास्वादन कराया। समय शीघ्रता से व्यतीत होता जा रहा था। मैंने गुरु जी को अन्तिम नमस्कार किया और भारी हृदय लिए हुए लौट आया।

मानव ऐसे सुन्दर स्थलों को—जहां प्रकृति और परमेश्वर का सामीप्य होता है—छोड़कर क्यों इस चरित्र से दीवालिया संसार में आकर संघर्ष को आमन्त्रित करता है?

(ता० ४ दिसम्बर १९४१ की समाज-सुधार पत्रिका से उद्धृत)

श्री के. एम. मुन्शी नामधारी केन्द्र भैणी साहिब में सतगुरु प्रतापसिंह जी महाराज के साथ उनकी प्रसिद्ध गोशाला में।

दो शब्द

जगत प्रसिद्ध पुस्तक "एनसाइकलोपीडिया ब्रीटेनीका" में लेखक ने कूकों अथवा नामधारियों के विषय में यह दो-चार बातें विशेष रूप से लिखी हैं—

"कूके श्री गुरु गोविंदसिंह जी के कट्टर अनुयायी हैं। कूके अंग्रेजी शासन के शत्रु हैं। १९वीं शताब्दी में जब सिक्ख जनता तथा सिक्ख सम्प्रदाय अपने धार्मिक नियमों से दूर जा रहे थे तो कूके अपने उच्च सिद्धान्तों पर पूर्ण रूप से दृढ़ रहे, यद्यपि उनकी संख्या कम हो गई।"

आगे चलकर लेखक मालेरकोटला को खूनी दुर्घटना का वर्णन करता हुआ लिखता है कि "यदि कूकों के साथ इतनी कड़ाई का बर्ताव न किया गया होता तो सम्भव था कि अन्त में रक्तपात होता।"

(शिकागो विश्वविद्यालय संस्करण सन् १९४६ पुस्तक २० पृष्ठ ६४८)

यह भाव एक निःपक्ष, दूर बैठे, साम्प्रदायिक ईर्षा रहित लेखक ने कूकों के विषय में संसार को शिक्षित व समझदार जनता के सामने प्रस्तुत किये हैं। सम्पूर्ण निबंध में यद्यपि कई प्रकार की भूलें तथा त्रुटियां हैं, परन्तु लेखक ने प्राप्त इतिहास-सामग्री का सम्यक् प्रयोग किया है।

भारतीय जनता की ओर से विदेशी साम्राज्य के विरुद्ध सन् १८५७ के स्वतंत्रताहित संग्राम के पश्चात्, नामधारी सिक्ख विदेशी आंगल शासन के कट्टरतम शत्रुओं की पंक्ति में सबसे आगे थे। खुले रूप में खोटे ग्राम के मेले सन् १८६३ से लेकर १४ अगस्त १९४७ तक भारतीय स्वतंत्रता के दीवाने नामधारी सिक्खों ने ८३ साल अपने इस स्थान को कठिनाइयां झेलकर व बलिदान देकर कायम रक्खा। अंग्रेजी शासन के भारतीय और विदेशी कर्मचारियों ने, अंग्रेज शासकों के जूठे टुकड़ों पर पलने वाले हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान, ईसाई, टोडियों तथा पदलोलुप सिक्ख रियासतों के राजाओं ने, अंग्रेजी शासकों की आर्थिक सहायता पर निर्भर सिंह सभाओं तथा सिक्ख ऐतिहासिक गुरुद्वारों

में सरकारी तौर पर बने हुए महन्तों और पुजारियों ने कूकों का सर्वनाश करने के लिए हर प्रकार के हथकन्डे, ओछे आरोप, झूठी बदनामी आदि निकृष्ट प्रचारों का प्रयोग किया। परन्तु कूकों ने ८४ साल के लम्बे समय में पराधीनता में सोई हुई बेहोश भारतीय जनता को 'होशियार व सावधान' रखकर आध्यात्मिक पहरेदारों के कड़े कर्तव्य को निभाया।

आज भारत को स्वतंत्र हुए नौ वर्ष हो चुके हैं। मातृभूमि की स्वतंत्रता के दीवाने कूके, विदेशी शासन की ओर से लगाये गये मारक, घावों, तथा घावों से बिगड़कर बने नासूरों को स्वयं ठीक करने में लगे हुए हैं। उनके लिये विदेशी शासन को अधीनता महा पाप था। इस महापाप से मुक्त होने के लिये कड़े से कड़े राजदंड को सहना वह ईश्वर भक्ति का आवश्यक अंग समझते थे। कूकों का उद्देश्य अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र कराना था। शासन में अपना भाग प्राप्त करना उनका लक्ष्य नहीं था। साम्प्रदायिकता की संकुचित भावनाओं से वे सदैव ऊपर रहे और आज भी हैं।

यह एक ऐतिहासिक सचाई है कि ९० वर्ष के समय में किसी नामधारी ने धन और पद के लोभ में आकर अंग्रेजों को किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया। भारत के किसी अन्य राजनैतिक या धार्मिक तथा समाज-सुधारक दल को ऐसा ऊँचा पद प्राप्त नहीं। इतिहास इस बात का साक्षी है, कि जब कभी भी अंग्रेज शासकों ने भिक्षा देने के लिये हाथ आगे बढ़ाया, तभी ऐसे दलों के नेता जनता को दलित छोड़कर अंग्रेजों की दी हुई कुर्सी पर जा बिराजे। शासन की मृदुसुरा में मस्त होकर अंग्रेजों से भी बढ़कर शासन के शुभचिन्तक हो गये तथा स्वतंत्रता आन्दोलनों के गले काटते रहे। नामधारी प्रसन्न हैं कि भारत विदेशी शासन की पराधीनता से मुक्त हो गया है। उनकी प्रसन्नता उस सेनानी की सच्ची प्रसन्नता है, जो अपने प्रिय देश और प्रिय राष्ट्र के बाहरी तथा आंतरिक शत्रुओं से सैंकड़ों घाव खाकर, उनके सम्मुख लड़ता हुआ रणक्षेत्र में यह सुन ले, कि उसके देश को विजय प्राप्त हुई है।

नामधारियों ने आज से ९० वर्ष पूर्व अंग्रेजों को देश से निकालने के लिये, उनके शासन से हर प्रकार का असहयोग करने, खादी पहनने, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने के प्रण किये तथा अन्त तक इन प्रतिज्ञाओं को धर्म जानकर निभाया। आज भी ठीक अर्थों में केवल नामधारी समाज में ही शुद्ध खादी तथा स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग धर्म का अंग समझ कर किया जाता है।

भारतीय जनता के स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध किये गये संघर्ष का इतिहास लिखा जा रहा है। प्रत्येक प्रदेश में ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित करने के लिये कमेटियां बनाई गई हैं जो इस सम्बन्ध में अच्छा काम कर रही हैं। इस इतिहास में नामधारी संप्रदाय तथा उसके आँदोलन का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। इस आन्दोलन की ऐतिहासिक सामग्री मुद्रित तथा अनमुद्रित पुस्तकें, वृद्धों की गोष्ठियां, कूकों के विरुद्ध मुकदमों की फायलें, अंग्रेज़ शासकों के आदेश, सिक्ख राजाओं के फरमान, इस आन्दोलन से सम्बन्धित स्थान, कोटले का वध-गृह, शेरपुर की गढ़ी, मलौद का किला, रब्बों का कुँआँ, रामबाग अमृतसर का बड़, रायकोट में फांसी वाला स्थान, इलाहाबाद का किला, रंगून में नजरबन्दी वाली कोठरी तथा मरगोई का बन्दीखाना आदि हैं। प्रत्येक इतिहासप्रेमी तथा देशभक्त सेवक का कर्तव्य है कि वह इस सामग्री को एकत्र करने में सहायता दे।

१७ तथा १८ जनवरी १८७२ अथवा आज से ८४ वर्ष पूर्व मालेर कोटला के स्थान पर ६६ नामधारी भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने के अपराध में खुले मैदान में जनता के सामने तोपों से उड़ाये गये। अंग्रेजों का राज्य था, सिक्ख राजे-महाराजे उनके आज्ञाकारी सेवक तथा अनन्य दास बने हुए थे। किसी की क्या मजाल थी कि इन राष्ट्रीय पतंगों की बिखरी हड्डियों वाले स्थान पर जाकर दो मूक अश्रु भी गिरा सकता।

नील नभ की छत के नीचे पड़ी यह शहीदों की हड्डियां देश-सेवा के पथिकों को आवाजें दिया करती थीं।

इस घटनास्थल के आस-पास के गाँवों में यह किंवदन्ती चली आती है कि शान्त रातों में शहीद कूकों के जयनाद और खड़तालों के साथ शब्द पढ़ने की आवाजें अब तक सुनाई पड़ती हैं। यद्यपि लेखक तथा इतिहासकारों के लिये यह केवल मनोकल्पित भ्रम ही है, परन्तु इससे आम जनता के हृदयों पर पड़े हुए प्रभावों का अनुमान हो सकता है।

भारत को स्वतंत्रता मिलने के पश्चात्, आठवें वर्ष में १७ तथा १८ जनवरी १९५५ को नामधारियों ने गुरु प्रतापसिंह जी महाराज के नेतृत्व में एकत्रित होकर देशभक्त शहीदों के रक्त से सिंचित पवित्र हुई भूमि पर पहली बार शब्दबानी का अखंड कीर्तन करते हुए बलिदान दिवस मनाया।

कुछ और

अंग्रेज शासकों ने नामधारी आन्दोलन को दबाने के लिये इस प्रकार के कष्ट दिये, जिनके उदाहरण भारत के किसी अन्य राजनैतिक दल के इतिहास में नहीं मिलते । गुरू रामसिंह जी और उनके प्रसिद्ध सूबों तथा धर्माधिकारियों को देशनिकाला दिया गया। सन् १८७२ ई० से १९२३ तक ५० साल पुलिस की चौकी नामधारी केन्द्र भैनी साहिब में गुरू हरीसिंह जी तथा उनके पश्चात् गुरू प्रतापसिंह जी के निवास-स्थान को डयोढ़ी के सामने पहरा देती रही। भीतर से बाहर तथा बाहिर से भीतर जाने आने वाले प्रत्येक स्त्री-पुरुष की तलाशी ली जाती थी । गुरू के परिवार के प्रत्येक प्राणी तथा गुरुद्वारे में रहने वाले सिक्ख सेवक स्त्री पुरुष को भैनी साहिब से बाहर जाते समय सरकार से आज्ञा-पत्र की मांग करनी पड़ती थी और दोनों जगह के थानों में आने-जाने की सूचना देनी पड़ती थी । नामधारियों के दीवानों, उत्सवों, श्री गुरू ग्रंथसाहिब जी के पाठ की समाप्ति के समागमों, विवाह-कार्यों के समय, सम्मेलनों आदि पर ५० साल कड़े प्रतिबन्ध लगे रहे। संयोग-वश यदि कहीं पांच नामधारी एकत्रित हो जाते तो पकड़ लिए जाते । उन्हें सरकार की ओर से दंड दिये जाते और उन पर जुर्माने होते ।

इस पचास साल के समय में सहस्रों नामधारियों को तुच्छ अपराधों के बदले जेल के दंड दिये गए तथा उनकी सम्पूर्ण धन-सम्पत्ति और जमीनें कुर्क और नीलाम कर दी गईं ।

पंजाब में और सिक्ख रियासतों में रहने वाले नामधारी जरायम पेशा जातियों की भांति अपने अपने गांवों में सीमाबद्ध थे। नम्बरदारों और चौकी-दारों को कड़ी आज्ञायें (हिदायतें) थीं कि वे सरकार को नामधारियों के विषय में हर प्रकार की सूचनायें तत्काल दें । हठी नामधारियों ने धैर्य, और ईश्वरीय कृपा के आधार पर रहकर भजन बन्दगी के प्रताप से विदेशी शासन के विरुद्ध सन् १८५७ में प्रज्वलित की गई स्वतन्त्रता की ज्योति को प्रकाशमान् बनाये रखा है।

भारतीय नेशनल कांग्रेस ने सन् १९२१ में गांधी जी के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन चलाया। इसका कार्यक्रम हाथ से काते-बुने खादी के कपड़े पहनना, खान, पान, पहनावे में सादा रहना और स्कूलों, कालिजों, अदालतों आदि का बहिष्कार करना था। उसको नामधारियों ने हृदय से अपना लिया। जलियाँवाले बाग के हत्याकाण्ड के पश्चात् और पंजाब में अंग्रेज शासकों की ओर से मार्शललां लगाये जाने पर नामधारियों ने पंजाब कांग्रेस का प्रसिद्ध सम्मेलन ऐतिहासिक गांव मुठड्डा जिला जालन्धर में करवाया। इस सम्मेलन में डाक्टर किचलू, डाक्टर सत्यपाल, मौलाना अब्दुल कादिर कसूरवाले, मौलवी हबीबउलरहमान लुधियाने वाले आदि निडर कांग्रेसी नेताओं ने भाग लिया। सम्मेलन सफल रहा और वर्तमान नामधारी गुरू प्रतापसिंह जी के दोनों छोटे भाइयों श्री गुरदयालसिंह जी और निहालसिंह जी के कांग्रेस में प्रविष्ट हो जाने से पंजाब की कांग्रेस पुनः जीवित हो उठी। दूसरे, कांग्रेस सम्मेलन का प्रबन्ध भी नामधारियों द्वारा ही जिला होशियारपुर में होना निश्चित हुआ। इससे सरकारी कर्मचारी भयभीत हो उठे और कुछ दिनों बाद ही पंजाब की सरकार ने नामधारियों के केन्द्र भैनो साहिब से पुलिस की चौकी उठा ली।

सन् १९२९ ई० के लाहौर कांग्रेस सम्मेलन के समय जिस आवश्यक और कठिन कार्य को नामधारियों ने उत्तरदायित्व लेकर निभाया उसे नामधारियों के बिना पंजाब में शायद ही कोई और दल निभा सकता। इस समय अंग्रेज शासक और उनके देशी कर्मचारी इस बात पर पूरा जोर लगा रहे थे कि कोई भी सिक्ख प्राणी इस सम्मेलन में भाग न ले सके। बाबा खड्गसिंह, मास्टर तारासिंह तथा उस समय के अकाली नेता इस सम्मेलन में भाग लेनेवाले सिक्खों को पतित, काफिर तथा अधर्मी होने के हुक्मनामे अथवा फतवे दे चुके थे, परन्तु स्वतन्त्रता के परवाने नामधारियों ने इस सम्मेलन में निर्भय होकर पूरा-पूरा भाग लिया। उन्होंने ऐसा प्रबन्ध किया कि जिसको देखकर राज्य कर्मचारी और जनता अचम्भे में पड़ गए। जब सम्मेलन के प्रधान श्री जवाहरलाल जी का जलूस निकलने लगा तो क्षण भर में १०० शुद्ध खादी के वस्त्रों वाले घुड़सवार नामधारी जलूस का नेतृत्व करने के लिए उपस्थित हो गए। नामधारियों का यह कारनामा उनकी देशभक्ति का अद्वितीय उदाहरण था। सहस्रों नामधारियों ने सम्मेलन में भाग लिया। उन्होंने अपनी ओर से पंडाल में भोजन दर्शकों में मुफ्त बांटा। पूर्ण स्वराज्य के प्रस्ताव का खुले दिल से समर्थन किया। भारत माता को विदेशी शासकों

के पंजे से निकालने के लिए कांग्रेसी नेताओं को तन, मन, धन से बलिदान होने के वचन दिये। अंग्रेजी साम्राज्य के समय यथार्थ नामधारी इतिहास लिखना विदेशी हाकिमों द्वारा किये गए अन्याय और अत्याचारों का नग्न चित्र जनता के सामने उपस्थित करना था। इसको अंग्रेजी शासक कभी सहन न कर सकते थे। सरकारी दफ्तरों में ऐतिहासिक सामग्री पड़ी हुई थी, परन्तु किसी इतिहासकार ने इसको देखने, खोजने तथा सच्ची बात लिखने का साहस न किया। नामधारी लेखकों ने परिचित सज्जनों से सुनकर वृतान्त संकलित किये। इस अप्रकाशित पुस्तक का नाम 'सतगुरुविलास' है। इसके संकलनकर्ता संत संतोखसिंह जी ने वही शब्द प्रयोग किये हैं जो सुनाने वालों ने उन्हें सुनाये। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह पुस्तक बहुत अमूल्य है।

नामधारी इतिहास तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक सरकारी दफ्तरों में पड़ी सामग्री तथा नामधारी लेखकों के लेखों को शुद्ध ऐतिहासिक दृष्टिकोण से पढ़ा तथा खोजा न जाये। सरकारी मिस्लों में पर्याप्त जानकारी मिलती है, परन्तु इन्हीं मिस्लों के आधार पर ठीक इतिहास नहीं लिखा जा सकता। इन मिसलों को तैयार करने वाले अंग्रेज शासक नामधारियों को सम्पूर्ण संस्था को हकूमत के विरूद्ध विद्रोही सम्प्रदाय समझते थे। लेखक को नामधारियों के विषय में सरकारी दफ्तरों में सुरक्षित रखे हुए कागजों, मिसलों आदि को पढ़ने और देखने का अवसर मिला है। इसके अतिरिक्त लेखक को नामधारी लेखकों की पुस्तकें भी मिल गई थीं। लेखक ने अभी तक नामधारियों के विषय में सिक्ख रियासतों में पड़े हुए पुराने कागज तथा मिसलों को नहीं देखा है।

ऐतिहासिक खोज की किसी पुस्तक को भी पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं कहा जा सकता। ज्यों-ज्यों नई सामग्री मिलती जाती है, इतिहास में वृद्धि होती रहती है। लेखक को निःसंदेह ही पहले एक-दो लेखकों से अधिक मात्रा में सामग्री मिली है। इन लेखकों ने नामधारी इतिहास को सन् १८७२ ई० तक लिख कर समाप्त कर दिया है। इनमें से एक विद्वान लेखक ने अधूरी सरकारी रिपोर्टों को लापरवाही से पढ़ कर विचार-विमर्श किये बिना घटनाओं की तिथियों में एक एक-साल का अन्तर डाल दिया हैं। इसी प्रकार घटनाओं का उल्लेख करने में भी पर्याप्त त्रुटियाँ की हैं और कई स्थानों पर निजी ईर्षा भी प्रकट की है। द्वितीय संस्करणों में भी भूलों तथा अशुद्धियों को सुधारने का प्रयत्न नहीं किया।

इस पुस्तक के लिखने तथा प्रकाशित करने में लेखक को बहुत से सज्जनों ने सहायता दी है। सर्वप्रथम लेखक सरदार सुरजीतसिंह जी

साहिब मजीठिया उपरक्षा मन्त्री भारत सरकार का हार्दिक धन्यवाद करता है, जिन्होंने लेखक को अपना व्यक्तिगत सेवक होते हुए भी इतिहास लिखने के लिए बड़ी सुविधायें दी हैं। श्रीमान् लाला फिरोजचन्द्र जी ने लेखक को इस पुस्तक को लिखने को प्रेरणा दी। यह पुस्तक कभी भी इस रूप में न लिखी जाती यदि वर्तमान समय के नामधारी नेता सदगुरू प्रतापसिंह जी महाराज अपने पुस्तकालय की सम्पूर्ण प्रकाशित तथा अप्रकाशित पुस्तकें बिना किसी शर्त के लेखक को प्रदान न कर देते। अप्रकाशित पुस्तकों में विशेष रूप से 'सतगुरुविलास' के लिए लेखक उनका अत्यन्त आभारी है। इसके अतिरिक्त आपके दोनों सुपुत्र बाबा जगजीत सिंह जी और बाबा वीरसिंह जी भी सामग्री एकत्रित करने में सहायता देते रहे हैं।

मेरे परम मित्र सरदार तेजासिंह जी नामधारी मेम्बर लेजिस्लेटिव कौंसिल, पंजाब ने कई वर्षों के परिश्रम से एकत्रित की हुई सम्पूर्ण ऐतिहासिक सामग्री लेखक के सुपुर्द कर दी। लेखक आपका अति कृतज्ञ है। भाई गुरुदेवसिंह जी नामों तथा ऐतिहासिक स्थानों की खोज करने में बड़ी सहायता करते रहे हैं। सरदार सुच्चासिंह जी सोखी लेखक को इस पुस्तक के आरम्भ से लेकर पाठकों के हाथों तक पहुंचाने में सहायता देते रहे हैं। लेखक उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

नामधारी इतिहास के द्वितीय भाग में सन् १८७२ से १९२३ तक की घटनाओं का वर्णन किया जायेगा। तीसरे भाग में पिछले ३२ साल का नामधारी इतिहास होगा। जिन उच्च तथा सुन्दर सिद्धान्तों का प्रमाण नामधारियों ने १९४७ में संसार के सामने उपस्थित किया उसका उदाहरण पंजाब के समकालीन इतिहास में कहीं नहीं मिलता। पश्चिमी पाकिस्तान में अगर मुस्लिम लीगियों ने धर्म के नाम पर हिन्दुओं और सिक्खों को जान से मारने, उनका धन-धान्य लूटने तथा बहू-बेटियों को हरने, नग्न स्त्रियों के जलूस निकालने, बच्चों तथा वृद्धों को मारने-काटने में तैमूर तथा चंगेजखां को मात कर दिया था तो दूसरी ओर पंजाब की सिक्ख रियासतों, भरतपुर तथा अलवर की रियासतों में राष्ट्रीय स्वयंसंघियों, हिन्दु महासभाइयों, अकाली जत्थों के सदस्यों, इन्डियन नेशनल आरमी के कुछ अवकाशप्राप्त अफसरों, कांग्रेस कमेटियों के बहुत से पदाधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं ने मुसलमानों को मार डालने तथा उनका धन-धान्य छीनने, निहत्थे बच्चों, वृद्धों को मारने, निर्बल निःस्सहाय स्त्रियों को नग्न कर जुलूस निकालने और जबरदस्ती अपने घरों में रखकर अत्याचार करने में अपनी शूरता दिखाई। पंजाब के विनाश की इस दुर्घटना को याद करके धर्म और मनुष्यता दोनों भविष्य में सहस्रों वर्ष तक

खून के अश्रु बहाकर प्रलाप करते रहेंगे। दोनों देशों (भारत तथा पाकिस्तान) में कहीं कहीं ऐसे उदाहरण भी पर्याप्त हैं जहां धर्म तथा मनुष्यता को बचाते हुए परमात्मा के अनेक अच्छे मनुष्य अपनों के ही हाथों मारे गए अथवा उनको भीषण कष्ट सहन करने पड़े।

इस अत्याचार के काले समय के वर्ग-संघर्ष में एक भी निर्धन से निर्धन नामधारी ने किसी मुसलमान की फूटी कौड़ी को हाथ न लगाया। किसी नामधारी ने अपने हाथ मुसलमानों के रक्त से नहीं रंगे। किसी नामधारी ने मुसलमानों की बहू-बेटियों की ओर आंख उठा कर नहीं देखा। वर्तमान नामधारी नेता गुरू प्रतापसिंह जी महाराज ने जगह-जगह स्वयं जाकर तथा आज्ञापत्र भेज कर नामधारियों को धर्म तथा मनुष्यता को कलंकित करने वाले कुकर्मों से बचने के दृढ़ आदेश दे दिये थे। इन आज्ञाओं का पालन हुआ।

इस पुस्तक में लिखित खोजों, विचारों तथा उन पर आधारित निर्णयों का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर है। इस पुस्तक के पढ़ने वाले सज्जनों से निवेदन है कि वे इसका अध्ययन करके लेखक को अपना मत लिखकर भेजने की कृपा करें। घटनाओं के विषय में अधिकतर बताने वाले सज्जनों का लेखक अति कृतज्ञ होगा। द्वितीय संस्करण में उनकी सहायता का वर्णन अवश्य किया जायेगा।

लेखक
नाहरसिंह एम० ए०
ग्राम—नंगल
डाकघर—पखोवाल
जिला लुधियाना
(पंजाब)

सदस्य
भारतीय स्वतंत्रता
इतिहास खोज बोर्ड
पंजाब प्रदेश
२६ अक्तूबर, सन् १९५९

नानक पन्थ और सिक्ख धर्म का प्रचार

इस संसार के मनुष्यों के सहस्रों वर्षों के क्रमिक इतिहास में अनेक उच्च व्यक्तियों ने धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र में अपने विचारों के प्रचार द्वारा इतिहास के प्रवाह बदले हैं। मनुष्य समाज में बार-बार उन्नति अथवा अवनति का क्रमशः परिवर्तन होना निश्चित है। इन अटल नियमों के प्रवाह में मनुष्यता का सदैव बहता हुआ वेग कई बार जनता को नेकी और सच्चाई आदि सद्‌गुणों की ओर ले जाता है और कई बार अत्याचार अन्याय और दुर्गुणों की ओर। उच्च गुणवान् मनुष्यों ने बहुत बार विनाशक बुराइयों की ओर बहती जा रही जनता को अपने उपदेशों और सुकृतों तथा अपने बलिदानों की आड़ लगा कर भलाई की ओर चलाया है। प्राकृतिक स्वभावानुसार मनुष्य जातियां पुनः-पुनः उन्हीं बुराइयों तथा निकृष्ट कर्मों की ओर रुख धारण कर लेती हैं, जिन कार्यों से उनको पूर्व महापुरुषों ने रोका था। हर युग में, हर शताब्दी में, हर जाति, देश और समाज में ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता रहती है, जो सैनिक शक्ति वाले दमन कर्त्ताओं व धनी अत्याचारियों तथा शासन-रत राजनीतिज्ञों को शक्तिहीन, गरीबों, अनाथों तथा दुखी मनुष्यों को न्याय देने तथा दया और प्रेम करने के लिए निर्भीकता से कह सकें। संसार का इतिहास उक्त महान् गुणज्ञ पुरुषों के नामों से भरा पड़ा है। साथ ही पृथ्वी माता भी ऐसे भद्र पुरुषों के रक्त बिन्दुओं से रंगी पड़ी है। तत्कालीन अत्याचारियों के दमन कार्यों का मुकाबला करते हुए ऐसे शुभ गुणों वाले पुरुष शूली पर चढ़ाये गए, विष देकर मारे गए, अग्नि में जलाए गए, पर्वतों से गिराये गए, नदियों में बहाये गए, तोपों से उड़ाये गए और जेल में कष्ट दे-दे कर मारे गए। ऐसे महापुरुषों की श्रेणी में ही श्री गुरू नानकदेव जी महाराज हुए हैं। इनका जन्म

एक क्षत्रिय वंश में लाहौर से उत्तर-दक्षिण दिशा में रावी नदी से पार के प्रदेश में एक गांव रायेभोयेकीतलवण्डी में बैसाख शुदी ३ सम्वत् १५२६ अथवा १५ अप्रैल सन् १४६६ ई० में हुआ ।

१५ वीं शताब्दी संसार के इतिहास की प्रसिद्ध शताब्दी है । इस शताब्दी में धार्मिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक-मण्डलों में परिवर्तन आरम्भ हुए। इन परिवर्तनों का प्रभाव संसार के हर भाग के निवासियों पर पड़ा । गुरू नानकदेव जी महाराज के समय में भारतवर्ष की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक दशा इस प्रकार की नहीं थी जैसी कि एक प्रगतिशील तथा नये परिवर्तनों के ग्रहणकर्त्ता अग्रगामी संगठित समाज की होनी चाहिये। पांच सौ वर्ष के समय से उत्तरी भारत पर मुसलमान बादशाहों के आक्रमण शुरू हो चुके थे । काबुल, पेशावर सवात, बनेर के हिन्दू राजाओं को पराजित करके और लाहौर को अपने अधिकार में लेकर मुसलमान बादशाह आगे बढ़े । देशद्रोही जयचन्द ने देहली के अन्तिम हिन्दू महाराज पृथ्वीराज को विदेशियों के हाथों पराजित करा कर दिल्ली की गद्दी भी मुसलमान बादशाहों के अधिकार में दे दी ।

मुसलमानों के हाथों हिन्दू राजाओं और रजवाड़ों की हार का कारण उनके आपसी बैर और द्वेष-भाव थे। हिन्दू समाज भी उस समय जाति-पाति, छुआ-छूत और वर्णभेद के दृढ़ बन्धनों में जकड़ा हुआ था । मुसलमान शासकों ने तलवार के बल से इस्लाम की वृद्धि आरम्भ की। साथ ही साथ मुसलमान पीरों, फकीरों दरवेशों और विद्वानों ने मुस्लिम देशों से आकर भारत के हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का आन्दोलन आरम्भ किया। प्रदेशों के जागीरदार, फौज-दार, नाज़म, कारदार, विदेशी मुसलमान थे । शासक अपने कोष भरने तथा विलासी जीवन व्यतीत करने के लिए निर्धन प्रजा को कष्ट देकर नाना प्रकार की भेंटें आदि लेते थे । एक मनुष्य की भावनाओं को पूरा करने के लिए सहस्रों को अधभूखे ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था। धर्म के नाम पर अन्याय की तलवार निरपराध मनुष्यों के सिर पर पड़ती थी । गुरू नानकदेव जी ने जनता, समाज तथा देश की हीन दशा को देखा । उन्होंने पंडितों, मौलवियों, योगियों, फकीरों तथा सूफी दरवेशों की संगति करके उनके विचारों, सिद्धान्तों तथा जीवनियों का अध्ययन किया। उनमें से कोई भी खुदा की खुदाई, परमेश्वर की सामूहिक मनुष्यता को सम्पूर्ण भलाई के साधनों का गुर अथवा सिद्धान्त उन्हें न बता सका।

२७ वर्ष की आयु में सुलतानपुर में वईं नदी के किनारे बैठ कर गुरु नानकजी को यह अनुभव हुआ, कि न कोई हिन्दू है और न कोई मुसलमान। केवल शुभ कर्म

ही वास्तव में मानवता है। इस आदि कालीन मत का प्रचार करने के लिए गुरू नानकदेव जी ने हिन्दू तथा मुसलमान आबादी के देशों में चार बड़ी-बड़ी यात्राएं कीं। हिन्दू तीर्थ स्थानों पर जाकर हिन्दू मत-मतान्तरों के नेताओं को अपना सिद्धान्त बताया और इसका क्रियात्मक रूप से प्रचार किया। इस्लाम के पूज्य स्थानों मक्का तथा बगदाद शरीफ पहुंच कर उस समय के मुस्लिम दरवेशों तथा विद्वानों से मिल कर अपने नवीन सिद्धान्त की व्याख्या की तथा उनसे, "हजरत रब्बुलमजीद" की उपाधि प्राप्त की। गुरू नानक देव जी के सिक्ख धर्म के बड़े-बड़े बुनियादी (मौलिक) सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :—

आदि पुरुष गुरू एक है। सारे मनुष्य भाई-भाई हैं। न कोई मुसलमान है और न कोई हिन्दू है। मनुष्य के कर्म तथा कर्त्तव्य ही उसे देववृत्ति वाला अथवा राक्षस स्वभाव वाला बनाते हैं। परमात्मा की रची हुई सृष्टि की सेवा ही आदि पुरुष की भक्ति का प्रधान रूप है। संसार में रहकर गृहस्थ आश्रम धारण करना और हाथों से श्रम करके जीवन व्यतीत करना वास्तविक धर्म है। धर्म के नाम पर पाखण्ड, धर्म की आड़ में जनता से धोखा और ठगी करना महा पाप है। मनुष्य जाति में विभाजन पैदा करके बैर-विरोध बढ़ाना और लड़ाई-झगड़ा पैदा करना परमात्मा की सत्ता से इन्कार करना है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का त्याग, मनुष्यता के शुभ गुणों सेवा, बलिदान, आत्मगौरव, स्वच्छ आचार एवं सत्य व्यवहार आदि का धारण करना सच्चे सिक्ख का परम कर्त्तव्य है। जपुजी साहिब, आसा की वार, सिद्ध गोष्ठ, ओंकार आदि वाणियां तथा अनेक शब्दों में गुरु नानकजी ने अपने धर्म का उपदेश दिया। सांसारिक जीवन का उदाहरण आपने कृषिकर्म को धारण करके दिया। रावी नदी के आर-पार करतारपुर तथा डेराबाबानानक में आप के खेत थे। यहां पर ही आपने मनुष्य देह सन् १५३९ में सत्तर वर्ष, पांच मास, सात दिन की आयु व्यतीत करके छोड़ दी।

श्री गुरू नानकदेव जी के पश्चात् गुरू अंगददेव जी ने खंडूर में रहकर तेरह वर्ष तक सिक्ख धर्म का प्रचार किया। गुरू नानकदेव जी की वाणियां तथा शब्दों को एकत्रित करके गुरुमुखी लिपि में लिखा। इन्होंने ४८ साल की आयु में सन् १५५२ को परलोक गमन किया। तीसरे गुरू अमरदास जी ने २२ वर्ष सिक्ख धर्म का प्रचार गोइन्दवाल में अपना केन्द्र बनाकर किया। गुरू नानकदेव जी के समय से स्थापित की हुई संस्था सदाव्रत को बहुत उन्नत किया। आपने वाणी की भी रचना की। १ सितम्बर १५७४ को आप स्वर्ग सिधारे। चौथे गुरू रामदास जी ने सन् १५७७ में गांव तुंग के जमींदारों से ७०० अकबरी रुपये देकर ५०० बीघा भूमि खरीदी।

इस भूमि पर आपने अमृत सरोवर की नींव रखी और इसके आस-पास नगर अमृतसर को बसाना शुरू किया। बावन पेशों के लोगों को प्रेरणा देकर तथा हर प्रकार की सहायता करके इसे बसाया। आस-पास के रहने वाले क्षत्रिय कुटुम्ब यहां आकर बस गये तथा व्यापार, शिल्पकला एवं अन्य औद्योगिक वस्तुओं की मंडी, पशुओं की विक्री आदि के काम आरम्भ किये। व्यापार के कारण इन व्यापारियों के सम्बन्ध लाहौर, मुलतान, पेशावर, काबुल, बलख, बुखारा, ताशकंद, दिल्ली, आगरा, इलाहाबाद, पटना, सहसराम की मंडियों के व्यापारियों के साथ हो गये। इससे गुरू नानकदेव जी महाराज के सिक्ख मत की वृद्धि में बहुत सहायता मिली। गुरु रामदास जी ने पूरे सात साल सिक्ख मत के प्रचार के उपराँत १ सितम्बर सन् १५८१ को गोइन्दवाल में शरीर छोड़ दिया। १८ वर्ष की अवस्था में पांचवें गुरू अर्जुनदेव जी महाराज ने सन् १५८१ में गुरू-गद्दी संभाल कर सिक्ख मत का प्रचार किया और सरोवर हरिमन्दिर साहिब के निर्माण तथा अमृतसर नगर के भवनों को पूरा कराया।

हरिमन्दिर साहिब की आधारशिला परमात्मा के प्यारे सूफी मुसलमान फकीर मीयांमीर से सन् १५८९ में रखवाई। इसकी चारों दिशाओं में खुले चार द्वार इस सिद्धांत के द्योतक हैं कि परमात्मा का द्वार सम्पूर्ण संसार के लोगों के लिए खुला है। हरिमन्दिरसाहिब एक ऐसा मन्दिर है, जिसमें हर देश का, हर जाति का तथा हर धर्मावलम्बी व हर सिद्धान्त का अनुयायी, आस्तिक हो या नास्तिक, मूर्ति-पूजक हो या मूर्ति-भंजक, गो-भक्षक हो चाहे गौ-रक्षक, सूकर-भोजी हो या उससे घृणा करने वाला इसमें आकर दर्शन कर सकता है और गुरू की वाणी सुन सकता है। इन्होंने लाहौर डब्बी बाजार में एक बावली भी बनवाई तथा सन् १५९५ में व्यास नदी के किनारे गोविन्दपुर की आधारशिला रखी।

इसी वर्ष ही गुरू अर्जुनदेवजी ने प्रथम चार गुरूजनों की वाणियों को एकत्रित करना आरम्भ किया। हिन्दु-भक्तों तथा मुसलमान दरवेश फकीरों की रचनाएं एकत्रित की गईं। गुरूजी स्वयं भी सुखमनी साहिब तथा और वाणियों के रचनात्मक कार्य में लग गए। भाई गुरूदासजी को लेखक बना कर लगभग दस साल के समय में गुरू ग्रन्थसाहिब जी की प्रति (जिल्द) तैयार की। सन् १६०४ में इसको प्रामाणिक इष्ट वाणी की पदवी देकर हरिमन्दिर साहिब में स्थापित किया तथा बाबा बुड्ढा जी को इसका पहला ग्रन्थी बनाया: इस ग्रन्थसाहिब जी में ५७७६ श्लोक हैं। इनमें गुरू नानक-देव जी के ९७६, गुरू अंगददेव जी के ६१, गुरू अमरदास जी के ९०७, गुरू रामदास जी के ६७९, गुरू अर्जुनदेव जी के २२१६, हिन्दू भक्तों तथा

मुसलमान दरवेशों के ९३७ पद हैं। गुरू ग्रन्थसाहिब जी की सम्पूर्ण वाणी काव्यात्मक तथा गेय है। प्रसिद्ध भारतीय संगीत कला के ४८ में से ३१ राग-रागनियों में यह वाणी विभक्त है। जैसा कि सम्राट् अकबर को हर धर्म के सिद्धान्त जानने का तथा फकीरों, दरवेशों, साधुओं से मिलने का और उनके साथ धर्मचर्चा करने का बहुत चाव था; सम्भव है कि बादशाह ने गुरू अर्जुनदेवजी से गुरू ग्रन्थसाहिब की वाणी सुनी हो।

सम्राट अकबर सन् १६०५ में मर गया और उसका पुत्र जहांगीर दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। जहांगीर अपने पिता जैसा विशाल हृदयी और उदार विचारों वाला शासक नहीं था। उसने साम्प्रदायिक भेद-भाव से राजमद में चूर हो गुरू अर्जुनदेव जी को २३ मई सन् १६०६ ई० में निर्ममतापूर्वक मरवा डाला। यद्यपि सिक्ख धर्म के प्रचार को आरम्भ हुए सौ वर्ष हो चुके थे तथापि अभी तक सिक्ख कहलाने वालों की संख्या १ लाख भी नहीं हुई थी।

गुरू नानकदेव जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार केन्द्र (मंजियाँ) स्थापित किये। इन केन्द्रों के प्रचारक मंजियों पर बैठ कर धर्म का प्रचार करते थे। पहली मंजी के प्रचारक सैदपुर के भाई लालो बढ़ई थे। तलम्बा के सज्जन को अपना सिक्ख बना कर धर्मशाला बनवाई तथा प्रचार के काम में लगाया। पटना नगर में सालसराय जौहरी को मंजी दी तथा उसको प्रचार कार्य दिया। इसी प्रकार गुरू नानकदेवजी की चारों यात्राओं के समय में जहां-जहां भी लोग सिक्ख बने वहां-वहां संगतें तथा मंजियां स्थापित की गईं और धर्मशालायें बनाई गईं।

मानव देह छोड़ने से पहले गुरू नानकदेव जी ने गुरूगद्दी पर गुरू अंगददेव जी को बिठाया था। गुरू नानकदेव जी के सुपुत्र श्री लक्ष्मीचन्द तथा श्री श्रीचन्द जी के द्वेष तथा ईर्षा के कारण अंगद जी को करतारपुर को छोड़ कर खंडूर में अपना प्रचार केन्द्र स्थापित करना पड़ा। पुरानी संगतों, मंजियों और धर्मशालाओं के बहुत से श्रद्धालु सज्जन करतारपुर में ही लक्ष्मीचन्दजी तथा श्रीचन्द जी के पास जाकर श्रद्धा भेंट करते रहे। आज तक भी लक्ष्मीचन्दजी की सन्तान के और डेराबाबानानक के बेदी बहुत से प्रदेशों की संगतों के गुरू होते चले आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त बाबा श्रीचन्द जी ने एक नया सम्प्रदाय "उदासी" नाम से संचालित किया था। तीसरे गुरू अमरदास जी को गुरू अंगददेव जी के सुपुत्रों दासू तथा दात्तू ने बहुत दुःख दिये। गुरू अमरदासजी को खंडूर छोड़कर गोइन्दवाल को सिक्ख प्रचार का केन्द्र बनाना पड़ा। गोइन्दवाल के मुसलमानों ने भी गुरूमहाराज तथा सिक्खों को बहुत से कष्ट दिये। गुरू अमरदास जी ने लंगर की पुरातन मर्यादा को समृद्ध किया। सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए २२ मंजियां स्थापित

कीं । प्रत्येक मंजी अपने किसी एक श्रद्धालु सिक्ख को जिसे साधारण भाषा में मसंद कहते थे सुपुर्द की । मसंद उस प्रदेश में सिक्ख धर्म का प्रचार करता था और संगति का सम्बन्ध केन्द्रीय गुरू गद्दी से स्थापित रखता था। गुरू रामदासजी ने गुरू अमरदास जी के सम्बधियों व सन्तान के साथ किसी प्रकार के झगड़े तथा द्वेष उत्पन्न न करने के विचार से गुरू गद्दी का केन्द्र अमृतसर को बनाया । गुरू रामदासजी के पश्चात् उनके तीसरे सुपुत्र गुरु अर्जुनदेव जी गुरु गद्दी पर बैठे । गुरु रामदास जी का ज्येष्ठ पुत्र पृथीया बहुत ही लोभी तथा ईर्षालु था। उसने गुरू अर्जुन-देव जी को कलंकित करने के षड्यंत्र किये। गुरू रामदास जी पृथिया से बहुत घृणा करते थे तथा उसको चोरी और डाके मारने वाली जरायम पेशा जाति 'मीने' के नाम से पुकारते थे। गुरू अर्जुनदेव जी ने अपने पिता जी की सारी सम्पत्ति अपने भाइयों को दे दी । लंगर तथा प्रचार का काम संगतों के चढ़ावे तथा भेंटों से आरम्भ किया। पृथिया अपने चेले सिक्खों द्वारा संगतों की भेंटें गुरूजी के पास पहुंचने से पहले ही अपने पास रखवा लेता और गुरू गद्दी की शोभा, सम्मान तथा कीर्ति घटाता । सुधासरोवर को सम्पूर्ण करने के लिए तथा नगर की वृद्धि के लिए सिक्ख संगतें दूर-दूर से धन भेजतीं। पृथिया यह धन रास्ते में ही रोक कर अपने घर ले आता और गुरु के लंगर या गोलक के लिए कुछ न जाने देता ।

इन्हीं दिनों भाई गुरुदास जी जो आगरे में सिक्ख धर्म के प्रचार में लगे हुए थे गुरु अर्जुनदेव जी के दर्शनों के लिए रामदासपुर आये। उन्हें पृथिया के इन बुरे कामों को देख कर बहुत कष्ट हुआ। उन्होंने गुरु गद्दी से सम्बन्धित सारा काम अपने हाथ में ले लिया । मसंदों का सुधार किया गया। सिक्ख संगतों से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए यह आज्ञापत्र भेजा गया कि सिक्ख संगतें अपनी कमाई का दशवां भाग देने के लिए हर बैसाखी को अमृतसर में पहुंच कर गुरूजी के दर्शन प्राप्त करें तथा अपनी भेंट अर्पण करें । इधर पृथिया गुरू अर्जुनदेव जी का प्राणघाती बन रहा था। उसने गुरू अर्जुनदेव जी तथा उनके सुपुत्र गुरू हरगोविन्द जी के प्राण लेने के लिए कई षड्यन्त्र रचे परन्तु वह अपने बुरे विचारों में सफल न हो सका। वह सुलहीखान पठान को गुरू महाराज जी को अपमानित करने तथा डराने धमकाने के लिए भी लाया, परन्तु सुलहीखान रास्ते में ही ईंटों के आवे में गिर कर जल मरा ।

पथिया इस दुर्घटना को देख कर बहुत भयभीत हुआ ।

गुरू अर्जुनदेव जी को सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए बहुत कष्ट सहन करने पड़े तथा जोवन का बलिदान देना पड़ा। गुरू गद्दी संभाल लेने के समय गुरू हरिगोविन्द जो की आयु केवल ११ वर्ष की थी। इनका पालन-पोषण करने और शिक्षा, शस्त्रविद्या सिखाने आदि का काम बाबा वुड्ढा जो के हाथ में था। बाबा जी ने उन्हें सर्वगुण सम्पन्न बनाने के प्रयत्न किये। गुरू गद्दी का तिलक लेते समय गुरू हरिगोविन्द जो ने पुरानी रीति के अनुसार सेहली टोपी पहनने से इन्कार कर दिया तथा इनकी जगह दायें-बायें दो तलवारें पहन कर यह मर्यादा पूरी की। एक तलवार धर्म का चिन्ह तथा द्वितीय संसारिक कर्मों का निशान था। सब मसंदों के नाम आज्ञापत्र भेजे गए कि चढ़ावे और भेंट के तौर पर शस्त्र तथा घोड़े दिये जायें। अमृतसर शहर की रक्षा के लिए लोहगढ़ नाम की गढ़ी बनवाई। हरिमन्दिर साहिब से पृथक अकाल-तख्त का निर्माण किया। जहां धर्म के विषय में चर्चा और कथा के अतिरिक्त सांसारिक विषयों पर विचार किया जाता था। ५० शक्तिशाली चुस्त तथा आरोग्य सिक्खों को अपने अंग-रक्षकों के रूप में भर्ती किया। माझे, मालवे, तथा द्वाबे के पांच सौ युवकों ने आकर अपने आप को बिना किसी वेतन के गुरू के सम्मुख धर्म पर जीवन बलिदान करने के लिए अर्पित किया। गुरूजी ने हर एक को एक घोड़ा और शस्त्र दिये। गुरू ग्रन्थसाहिब जो के गीतों (काव्य रचना) को शूरवीरों की वारों की ध्वनि पर सारंगे और ढड्ड (डमरू जैसा साज) के साथ गाने की प्रथा जारी की, ताकि लोगों के हृदयों में नया उत्साह और नये उद्गार पैदा हों। गुरू-द्रोहियों तथा हाकिमों ने उनके विरुद्ध बादशाह जहांगीर के कान भरे। बादशाह जहांगीर ने आपको ग्वालियर के किले में शाही कैदी के रूप में रखने की आज्ञा दी। यह घटना अकाल-तख्त की रचना से एक वर्ष के अन्दर उस समय हुई जब कि आपकी आयु १६ वर्ष की थी।

ऐतिहासिक घटनाओं की जांच-पड़ताल करने से यह परिणाम निकला है, कि गुरू हरगोविन्द जी साहिब दो साल से कम समय में ग्वालियर के किले से छोड़ दिये गए। इसके पश्चात् जहांगीर बादशाह में और गुरू हरगोविन्द जी में मित्रता हो गई और उसने रावी नदी के तट पर कई बार गुरू हरगोविन्द जो के साथ शिकार खेला। किंवदन्ती है कि जहांगीर बादशाह अमृतसर भी आया और उसने सरकारी कोष से अकाल-तख्त के शेष निर्माण को सम्पूर्ण करने के लिए कहा; परन्तु गुरूजी ने सरकारी धन स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। जहांगोर की मृत्यु सन् १६२७ तक गुरू हरगोविन्द जी को

सिक्ख धर्म का प्रचार करने के लिए चौदह या पन्द्रह वर्ष का समय मिल गया।

इस समय का उन्होंने भली-भांति उपयोग किया। गुरू नानकदेव जी के पश्चात् चार गुरुओं में से किसी ने भी केन्द्रीय स्थानों से बाहर जाकर सिक्ख धर्म का प्रचार नहीं किया था। साथ ही साथ घरेलू द्वेष और ईर्षा के कारण प्रत्येक गुरू को पूर्व-प्रचार केन्द्र छोड़ कर नया प्रचार केन्द्र बनाना पड़ा था और कई परिस्थितियों में सुपुर्ददार तथा मसन्द नियुक्त करने पड़ते थे। संगतों के नेता मंजियों के सुपुर्ददार तथा मसन्द संगतों को उपदेश देते रहते थे। संगतें स्वयं भी गुरू के दर्शन, सरोवर की सेवा आदि के काम में सहायता देने के लिए उपस्थित हो जातीं और गुरूओं के मुखों से उपदेश तथा वाणियां सुनतीं।

गुरू हरगोविन्द जी ने गुरू नानकदेव जी की भाँति स्थान स्थान पर भ्रमण करके प्रचार किया। संगतों से मिले। काश्मीर से लेकर उत्तरी भारत में पहाड़ के साथ-साथ के प्रदेशों में प्रचार करते हुए पोलोभोत पहुंचे। इन प्रदेशों में हिन्दू तथा मुसलमानों को सिक्ख बनाया। काश्मीर में गुरू नानकदेवजी के समय से ब्रह्मदास तथा उसके वंशज सिक्ख मत का प्रचार कर रहे थे। गुरू अर्जुनदेव जी ने माधो-सोढ़ी को प्रचार के लिए नियुक्त किया था। काश्मीर में गुरूजी ने श्रीनगर, बारहमूला, मटन, वेरीनाग, अनन्त नाग, इस्लामाबाद तथा नालूछी आदि स्थानों पर पहुंच कर प्रचार किया तथा सहस्रों हिन्दुओं से बने मुसलमानों को सिक्ख बनाया। वापिस आते हुए गुजरात में फकीर शाहदौला से मिले और उसके साथ विचार करते हुए उच्चारण किया "मैं एक गृहस्थी फकीर हूं, न हिन्दू हूं न मुसलमान।" प्रथम गुरू साहिब जी के समय से बनी संगतों तथा धर्मशालाओं के दर्शन किये एवं संगतों के पारस्परिक मेलजोल और भजन-कीर्तन का प्रबन्ध किया।

१६२७ ई० में बादशाह जहांगीर की मृत्यु के पश्चात् शाहजहां दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। उसने मुसलमानों को सिक्ख बनाये जाने के आन्दोलन को शाही हुक्म से बन्द कर दिया। लाहौर की बावली साहब को मिट्टी से भरवा दिया। १६२८ में खालसा कालेज अमृतसर वाले स्थान पर बादशाह के अफसर मुखलसखां और गुरूजी में छोटी-सी झड़प हो गई, जिसमें मुखलस खां मारा गया। १६२८ से १६३३ ई० तक गुरू हरगोविन्द साहिब को अमृतसर छोड़ कर करतारपुर और हरगोविन्दपुर में रहना पड़ा। गुरु हरगोविन्द जी ने अपने मुसलमान सेवकों के लिए अपने पल्ले से मसजिदें बनवाईं। इन पांच या छः वर्षों में विरोधियों से झड़पें तथा छोटी

मोर्टा लड़ाइयां भी होती रहीं जिनमें गुरुजी के बैरी, भगवानदास घिरड़ तथा उसका पुत्र रत्नचन्द अब्दुल्लाखान, लल्लाबेग, कमरबेग, पैंदेखान तथा कुमरखान आदि मारे गए। नित्यप्रति के राजनीतिक झगड़ों के कारण सिक्खों की हानि होती देख कर गुरुजी ने कीर्तिपुर बसाया और वहां रहने लगे। १६३६ ई० में सिक्खी प्रचार के काम को तीव्र करने के लिए गुरु हरगोविन्द जी ने अपने सुपुत्र गुरुदित्ता जी को नियुक्त किया। पूर्व गुरुओं के बनाए हुए कई मसन्द तथा संगतों के नेता नेतृत्व का काम अच्छा नहीं कर रहे थे। गुरुजी के लिए संगतों की ओर से भेंट की हुई सामग्री को अपने व्यक्तिगत कामों के लिए व्यय कर लेते थे और कई प्रकार की बुरी आदतों में पड़ गए थे। बाबा गुरुदित्ता जी ने अपने पिता गुरु हरिगोविन्द जी की सम्मति से सिक्ख प्रचार के लिए चार केन्द्र स्थापित किये, जिनकी सुपुर्ददारी उदासी सम्प्रदाय के चार साधुओं बाबा अलमस्त, बाबा फूल, बाबा गोंदा तथा बाबा बालू हसना को की। इन उदासी साधुओं तथा उनके चेलों ने दूर-दूर के स्थानों पर पहुंच कर सिक्खी और वाणी का प्रचार किया। सुथरे शाह को भी अपने हास्य रंग के ढंग से सिक्खी प्रचार की आज्ञा दी। गुरू हरगोविन्द जी ने ३ मार्च १६४४ ई० को कीर्तिपुर में शरीर छोड़ा।

इसके अनंतर गुरू हररायजी १४ वर्ष की आयु में गुरु गद्दी पर बैठे। यह बाबा गुरदित्ता जी के द्वितीय पुत्र थे। इनका बड़ा भाई धीरमल था, जो गुरु गद्दी पर अपना अधिकार समझता था। गुरु ग्रन्थ साहिबजी की पहली वास्तविक प्रति गुरु अर्जुनदेव जी वाली बीड़ धीरमल ने अपने अधिकार में ही रख ली और गुरू हरराय जी को न दी। वह पुरातन गुरुओं के समय के लोभी मसन्दों को अपने साथ मिलाकर भेंटें स्वयं ले लेता था और गुरु बन बैठा था। उसने सारी आयु इनका विरोध किया और कष्ट देने से न हटा।

गुरु हरराय जी ने आचरणशील और भजन करने वाले सिक्खों को "बख़शीशें" करके उनके जिम्मे सिक्खी प्रचार का काम लगाया। भगत भगवान सन्यासी को सिक्ख बनाकर पंजाब से बाहर प्रचार के लिए भेजा। भाई बहलो को सिद्धू ब्राड़ों के इलाके में तथा गराम वागड़ियां के भाई रूपा बढ़ई को पुआद और जंगल के प्रदेशों में सिक्खी प्रचार करने का आदेश दिया। भाई फेरू को खारेमांझे तथा रावी, ब्यास नदियों के मध्य वाले प्रदेश में सिद्धू जाटों तथा कम्बोज-जाति के नए बसाए हुए प्रदेश में प्रचार के हेतु नियुक्त किया। वे सिक्खी प्रचार के लिए स्वयं भी दौरे करते रहे।

Presented to my
friend
S. Kripal Singh
Head of the Sikh History Research
Department.
Khalsa College
with regards.
for Review

29-August 1959. Nahar Singh.

गुरु घर के बैरी धीरमल, पृथिये के वंशज और निकाले हुए मसन्द, बादशाह औरंगजेब के पास गुरुजी की शिकायतें करते रहते थे। सन् १६५८ में औरंगजेब गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बैठने के दो वर्ष के अन्दर ही उसने गुरु हरराय जी को दिल्ली आने का आदेश भेजा। इस पर गुरुजी ने अपने पुत्र रामराय को दिल्ली भेज दिया। बादशाह औरंगजेब के प्रश्न के उत्तर में रामराय ने गुरु-वानी की तुक "मिट्टी मुसलमान की" को बदलकर "मिट्टी बेईमान की" पढ़ कर सुनाई। गुरुजी यह प्रसंग सुन कर बहुत रुष्ट हुए तथा आदेश दिया कि रामराय पुनः हमारे पास न आवे। रामराय जी को बादशाह औरंगजेब ने देहरादून में जागीर दे दी, जहां उसने अपना डेरा बना कर अपनी ही सिक्खी सेवकी की वृद्धि, की जो रामराइयों के नाम से प्रसिद्ध हैं।

६ अक्तूबर १६६१ को गुरु हरराय जी के ज्योति में समाने के पश्चात् गुरु हरिकृष्ण जी, जिनकी आयु इस समय केवल ५ वर्ष की थी, गुरु गद्दी पर बैठे। रामराय ने ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण गद्दी पर अपना अधिकार जताकर कई मसन्दों को अपने साथ मिला लिया। यह मसन्द संगतों से रामराय के गुरु होने की बातें करते रहते। सिक्खों की श्रेणियों में यद्यपि पहले भी कई दरारें आईं थीं, परन्तु अब तो गहरे घाव खुलने आरम्भ हो गए। श्रद्धालु सिक्खों ने जिन्हें गुरु हरराय जी के निर्णय तथा आदेश का पता था, रामराय को गुरु मानने से इनकार कर दिया। रामराय भी चुपचाप बैठने वाले सज्जन नहीं थे। उसने गुरु-गद्दी का मुकद्दमा बादशाह औरंगजेब के सम्मुख रक्खा। गुरु हरिकृष्ण जी देहली आकर मिर्जा राजा जयसिंह के बंगले रायसीना में ठहरे। बादशाह औरंगजेब को सब बातों की जांच-पड़ताल करने पर निश्चय हो गया कि गुरु हरिकृष्ण जी ही गुरु-गद्दी के स्वामी हैं। उसने इसी आधार पर रामराय का दावा खारिज कर दिया। दिल्ली में ही चेचक के रोग से गुरु हरिकृष्ण जी की ३० मार्च सन् १६६४ को मृत्यु हो गई।

गुरु हरिकृष्ण जी के पश्चात् ४४ वर्ष की आयु में गुरु तेगबहादुर जी गुर गद्दी पर बैठे और बकाला गांव को अपना केन्द्र बनाया। दूसरी ओर डेराबाबानानक, गोविन्दवाल, खंडूर तथा अमृतसर में गुरुवंश के बेदी तथा सोढी, अपनी गुरु गद्दियां लगाये बैठे थे। सीधी-साधी गुरु नानक पर श्रद्धा रखने वाली जनता को धर्म के नाम पर लूट-लूट कर अपना कार्य व्यवहार चला रहे थे। रामराय ने भी अपनी सिक्खी सेवकी का अच्छा जाल तान लिया था। देहरादून के प्रदेश में जमुना से इस पार

पुआहद (लुधियाना) के इलाके तक अपने मसन्द भेज कर सिक्खी सेवकी बना ली थी। धीरमल्ल को गुरु तेगबहादुर जी से बैर होना स्वाभाविक था। उसने अपने एक मसन्द को गुरु तेगबहादुर जी के प्राण लेने को नियुक्त किया। मसन्द ने गुरुजी पर गोली चला कर उनको घायल कर दिया और उनका घर-बार लूट कर ले गया। सिक्खों ने मक्खनशाह लुबाने के नेतृत्व में धीरमल्ल की हवेली पर आक्रमण कर दिया और उसका सब-कुछ लूट लिया। दोषी मसन्द के हाथ पैर बांध कर गुरुजी के सामने उपस्थित किया जिन्होंने उसको क्षमा कर दिया। सिक्ख इस समय गुरुग्रन्थसाहब की पुरानी बीड़ भी धीरमल्ल के घर से ले आये। गुरु तेगबहादुर जी न सिक्खों को लूट का सारा माल तथा गुरुग्रन्थसाहिब भी वापिस करने का आदेश दिया। सिक्खों ने धन-धान्य तो लौटा दिया, परन्तु वे गुरुग्रन्थसाहब देना नहीं चाहते थे। अन्त में गुरु साहब के आग्रह करने पर यह बीड़ भी लौटा दी, जो अभी तक धीरमल्ल के वंश के अधिकार में है।

गुरु तेगबहादुर के विरोधी अधिकांश वह व्यक्ति थे, जो धर्मशालाओं तथा सिक्ख मन्दिरों की भेटों को अपनी व्यक्तिगत आय समझ कर डकार रहे थे। जब गुरु तेगबहादुर जी हरिमन्दिर के दर्शनों के लिए अमृतसर आये तो वहां के पुजारियों ने उन्हें दर्शन करने के लिये अन्दर भी न जाने दिया। अतः वे निराश ही वापिस लौट आये। बैरियों को ईर्षा तथा विरोध के कारण बाबा बकाला गांव को छोड़ कर गुरुजी कीर्तिपुर चले गये। यहां भी धीरमल्ल के गुट के लोगों ने इन्हें आराम न लेने दिया।

नित्य प्रति नये कष्टों तथा कठिनाइयों से तंग आकर गुरुजी ने राजासाहब कहलूर से ५००) की भूमि का एक टुकड़ा जो कीर्तिपुर से ५ मील दूर था खरीद कर आनंदपुर नाम का गांव बसाया। आनन्दपुर में भी गुरुवंश में से स्वयं बने गद्दी के दावेदारों ने, गुरुजी को सुख का सांस न लेने दिया। अतः गुरु तेगबहादुर जी ने अपने पिता गुरु हरिगोविन्द जी की भांति सिक्खी प्रचार के लिये भ्रमण आरम्भ किया। आनन्दपुर से चल कर पुआहद के प्रदेश में भ्रमण करते हुए मालवा और बांगर के इलाके में सिक्खी का प्रचार किया। इन प्रदेशों में बहुत से कुंएं तथा सरोवर बनवाये। रामराय आदि बैरियों ने बादशाह के पास जाकर कान भरे तथा झूठी बातें बनाईं। मिर्ज़ा राजा जयसिंह के पुत्र राजा मानसिंह ने बादशाह को सारी बात समझाई और स्वयं ही गुरुजी के हेतु साक्षी बना।

इसके पश्चात् गुरुजी आगरा, इलाहाबाद, बनारस, सहसराम, गया होते

हुए और संगतों तथा सिक्खों को उपदेश देते हुए पटना पहुंचे। कुटुम्ब के लोगों को पटना छोड़कर आप मुंघेर तथा ढ़ाके की ओर चले गये। इस प्रदेश में पहले से ही बहुत सी सिक्ख-संगतें तथा धर्मशालायें बनीं हुई थीं। ढाके में विशाल हजूरी संगत थी। यह धर्मशालायें तथा संगतें उदासी साधुओं अलमस्त जी तथा नत्थे साहब जी के श्रम से बनी तथा संगठित हुई थीं। धर्मशालाओं में निर्धनों, अनाथों, दुखियों के लिए मुफ्त सदाबरत चलते थे। यात्रियों को ठहरने तथा विश्राम के लिये स्थान मिलता था। पंजाब और अमृतसर के खत्री व्यापारी हिन्दुस्तान के प्रत्येक बड़े नगर में व्यापार कर रहे थे। सिक्खी का प्रचार उनके द्वारा भी हो रहा था। अपने भ्रमणकाल में गुरुजी, चत्ते फग्गू आदि गुरु घर के प्रेमियों द्वारा मिल कर और सिक्खी का प्रचार होता देख कर बहुत प्रसन्न हुए।

ढाके में ही गुरु जी ने अपने सुपुत्र श्री गुरु गोविन्दसिंह जी के पटने में २६ दिसम्बर १६६६ को उत्पन्न होने का समाचार सुना। ढाके से गुरु जी ने सिलहट, चटगांव, संदीप, लशकर, आदि का भ्रमण करने में कई वर्ष व्यतीत किये। गुरु जी ने १६७० में राजा रामसिंह की आसामी लोगों से संधि करवा दी। इसी प्रसन्नता में दोनों ओर के सैनिकों ने गुरु नानकदेव महाराज की स्मृति में मिट्टी का एक ऊंचा टोला धोवड़ी के स्थान पर बनाया।

आसाम के देशाटन से वापस आकर शीघ्र ही गुरुजी आनन्दपुर पंजाब लौट आये। इस समय औरंगजेब को दिल्ली के सिंहासन पर बैठे लगभग १२ साल हो चुके थे। उसने सिंहासन के उत्तराधिकारियों को मारकर अपना स्थान पक्का बना लिया था।

१६६९ ई० में बादशाह औरंगजेब ने अपने सारे सूबेदारों के नाम एक 'शाही फरमान' जारी किया कि हिन्दुओं के सारे मन्दिर तथा विद्यालय तोड़ दिये जावें। साम्प्रदायिक सुन्नी मुसलमान, सूबेदारों, शासकों तथा कर्मचारियों ने इस आदेश का बड़े जोर से पालन करना आरम्भ कर दिया। प्रसिद्ध इतिहासकार खाफीखां अपनी पुस्तक मुन्तखिब-उल-लबाब में लिखता है कि सिक्खों के विषय में भी यही आदेश थे। अतः उन्हें भी दुखों का शिकार होना पड़ा। उनके नेताओं को पकड़ कर बन्दीखानों में डाल दिया तथा उनके मन्दिर तोड़ दिये गये। इस दमन ने हिन्दुओं के जीवट तोड़ दिये। वह त्राहि-त्राहि कर रहे थे। सहायता के लिये चिल्लाते थे, परन्तु निर्दयी दमनकारियों की तलवार तथा अत्याचार के विरुद्ध लड़ने का उन्हें साहस नहीं होता था।

गुरु तेगबहादुर जी भविष्य को देख कर बहुत चिन्तातुर हुए और

इस बात का दृढ़ संकल्प किया कि शासकों के दमन के कारण दबी हुई तथा अत्याचार सहन करने वाली जनता को बलिदान देने का पाठ सिखाने के लिये स्वयं बलिदान देंगे।

यह विचार कर गुरु तेगबहादुर जी ने अपने परिवार तथा अपने सुपुत्र को पटना से आनन्दपुर बुला लिया। कई वर्ष अपने पास रख कर गुरु तेग-बहादुर जी ने उन्हें कई प्रकार की शिक्षाएं दीं, विद्यायें पढ़ाईं और उनको हर प्रकार गुरु गद्दी के योग्य बना दिया। गुरु तेगबहादुर जी को चिन्तातुर देख कर गुरु गोविन्दसिंह जी ने इसका कारण पूछा। गुरु तेग-बहादुर जी ने उत्तर दिया कि मातृभूमि भारत विदेशियों के कड़े पन्जे में फंसी हुई है, इसको मुक्त कराने के लिये किसी महापुरुष के बलिदान की आवश्यकता है, परन्तु ऐसा महापुरुष कहाँ से मिले ? गुरु गोविन्दसिंह जी ने सुनते ही कहा "पिता जी इस बलिदान के हेतु आपसे अधिक योग्य कौन हो सकता है।"

गुरु तेगबहादुर जी इस उत्तर को सुन कर अति प्रसन्न हुए। अपने मन की पुरानी अभिलाषा को पूर्ण करने के लिये शाही फरमान का खुले तौर से विरोध करने तथा अत्याचार की प्रज्वलित अग्नि को अपने शरीर की आहुति देकर शान्ति करने के लिए, अग्रसर हो गये। सन् १६७३ में आनन्दपुर छोड़ कर पैदल चलकर और पड़ाव-पड़ाव पर ठहर कर धर्म का प्रचार आरम्भ किया। दबी हुई जनता को—

"भय काहू को देत नहिं, न भय मानत आनु" के ऊंचे आदर्श को पालन करने को प्रेरणा दी। सैफाबाद, समाने, के परगनों में से होते हुए धमतान, वांगर, रोहतक के अहीरों, गूजरों तथा जाटों को धर्म, धीरज, उत्साह, साहस तथा बलिदान की शिक्षा देते हुए दो वर्ष में आगरे पहुंचे। बादशाही आज्ञा-नुसार गुरुसाहब को पकड़ कर आगरे से दिल्ली लाया गया। उनको कारा-वास में बन्द करके पहरा लगा दिया गया।

गुरु जी को इस्लाम मत को स्वीकार करने के लिये निमंत्रण दिया गया जिस को उन्होंने अस्वीकार कर दिया। उनके एक सिक्ख भाई मतिदास जी को आरे से चीर दिया गया। गुरु जी को हथकड़ियां, बेड़ियां डालदी गईं तथा कष्ट दिये गये। शाही हुक्म के अनुसार ११ नवम्बर सन् १६७५ को गुरु तेगबहादुर जी का चांदनी चौक, देहली में जनता के सामने सिर उतार दिया गया। गुरु गोविन्दसिंह जी ने "विचित्रनाटक" पुस्तक में इस घटना का वर्णन करते हुए लिखा है : "ठीकर फोड़ दिलीस सिर प्रभुपुर कियो पयान।"

उच्च जातियों के हिंदू तथा दिल्ली के लोग इतने डर गये थे कि किसी ने भी उनके मृतक शरीर को इस स्थान से उठाने तथा दाह संस्कार करने का साहस न किया । एक लुबाना-सिक्ख सैनिकों की नजर बचा कर गुरुजी के शरीर को अपनी गाड़ी में डालकर शहर से दो कोस बाहर पश्चिम की ओर ले आया । साथी लुबानों ने कुछ गाड़ियां तथा कुछ सामान को स्वयं ही आग लगा कर गुरुजी का दाह संस्कार कर दिया । गुरु जी का सिर एक जैता नामी निर्धन श्रमिक सिक्ख, जो झाड़ू फेर कर उदरपूर्ति करता था, चोरी से उठा कर गुरु गोविन्दसिंह जी के पास आनन्दपुर ले गया । जहां शीश का संस्कार किया गया । गुरु गोबिन्दसिंहजी ने भाई जैते को "रंघरेटा (अछूत) गुरु का बेटा" कहकर सत्कार दिया । वास्तव में सिक्ख धर्म निर्धनों तथा श्रमिकों का धर्म है ।

अपने पिता गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान के पश्चात् गुरु गोविन्दसिंह जी ने ६ वर्ष की आयु में गुरु गद्दी की जिम्मेदारियां सन् १६७५ में संभाल लीं । औरंगजेब के हिन्दू तथा सिक्खों के विषय में शाही फरमान का पालन कठोर ढंग से किया जा रहा था । निर्धन लोग जज़िया के कर से डरते मुसलमान बनते जा रहे थे । जान के भय से कई सिक्ख अपने आपको आनन्दपुरवाली गुरुगद्दी के सिक्ख मानने से इन्कार कर देते थे । रामराय, धीरमल्लिये, तथा छेके हुए मसंदों को, जो मुसलमान शासकों से सहमत थे, अपनी सिक्खी सेवकी बढ़ाने का अच्छा अवसर मिला । गुरु गोविन्दसिंह जी शासन से विद्रोही नेता के सुपुत्र थे । उनको गुरु मानने वाले वही सिक्ख हो सकते थे, जो मृत्यु पर सदा हंसी उड़ा सकें । अपना स्थान आनन्दपुर छोड़ कर गुरुगोविंद-सिंहजी राजा नाहन के राज्य में पाउन्टे चले गये । यहां रहकर उन्होंने शास्त्र-विद्या तथा शस्त्रविद्या सीखी । उस समय की राजभाषा फारसी एक मुसलमान उस्ताद पीरमुहम्मद से पढ़ी । सिक्खों को घुड़सवारी, तलवार चलाना, तीर चलाना, शिकार खेलना आदि सैनिकों जैसे सारे काम सिखाये । पहाड़ी राजा भीमचन्द्र कहलूर वाला अकारण ही गुरु गोविन्दसिंह जी से बैर रखता था । उसने फरवरी १६८६ में अपनी सेना तथा अपने हितैषियों को साथ लेकर गुरुजी पर चढ़ाई कर दी । ५०० पठान जिन्हें गुरु साहब ने अपने मित्र सैयद बुद्धूशाह की सिफारिश पर नौकर रक्खा था युद्ध के समय साथ छोड़ गये । लगभग ५०० उदासी मसन्द तथा उनके संगी बहानेबाजी करके युद्ध से पहले ही चलते बने । उदासियों में से केवल महन्त कृपाल हेहर नगर वाला ही गुरुजी के साथ रहा । युद्ध से पहले बुद्धूशाह अपने चार पुत्रों तथा ७०० मुरीदों सहित गुरु जी की सहायता के लिये उपस्थित हो गया । पाउन्टे से ६

मील भंगानी के स्थान पर युद्ध हुआ जिसमें गुरु जी की सेना को विजय प्राप्त हुई ।

इसके पश्चात् गुरुजी आनन्दपुर आ गये । इस समय उनकी आयु लगभग २२ वर्ष की थी। इसी वर्ष में गुरुजी ने पहाड़ी राजाओं के साथ मिलकर जम्बू के गवर्नर मियांखां के भेजे हुए फौजी नेता अलिफखां के साथ हुए नादौन वाले युद्ध में भाग लिया, जिसमें अलिफखां को पराजय हुई । गुरु साहिब ने इसको हुसैनी युद्ध कहा है । यह युद्ध १६६५ ई० में हुआ ।

बादशाह औरंगज़ेब नहीं चाहता था कि गुरु तेगबहादुर का सुपुत्र पुनः शक्तिशाली होकर उत्तरी भारत की प्रजा का धार्मिक तथा राजनीतिक नेता बन जाये। उसको २० नवम्बर १६६५ को सूचना मिली कि गुरु गोविन्दसिंह ने अपने आपको गुरु नानक का रूप होने की घोषणा की है । औरंगजेब की ओर से फौजदारों के नाम आदेश भेजे गये कि सिक्खों के सम्मेलन तथा उत्सव बन्द किये जायें । पंजाब में शान्ति स्थापित रखने के लिये औरंगज़ेब ने अपने पुत्र शहज़ादा मुअजिमबहादुरशाह के नाम हुकम भेजा। शाहज़ादे ने मिर्ज़ाबेग को सेना देकर गुरु तथा पहाड़ी राजाओं को दंड देने का आदेश दिया, परन्तु भाई नन्द लाल जी के कहने पर जो उस समय शहज़ादे के पेशकार थे, गुरुजी के साथ संधि हो गई ।

इसके पश्चात् चार साल गुरुजी ने देश में राष्ट्रीय एकता लाने और प्रजा को साम्प्रदायिक मूर्खता में रंगे हुए शासन से मुक्ति दिलवाने के ढंग सोचे तथा उन्हें कार्यरूप में परिणत करने में लगाये । अशिक्षित और अंधकार में फंसी हुई जनता को देवी-देवताओं के आगे सहायता के लिये माथे रगड़ने के बजाय अपने साहस, बाहुबल तथा अपने बलिदान पर निश्चय करने का उपदेश दिया। लोगों के दिलों में से पाखंड तथा अंधकार निकालने के लिये केशो पंडित को देवी दुर्गा प्रकट करने के लिये सुविधायें दीं । पाखंड का पर्दा उठने पर खड्ग हाथ में लेकर घोषणा की, कि "तलवार, एकता, साहस और बलिदान से बढ़ कर कोई देवी-देवता नहीं है। अकाल का आसरा लेने तथा उसका स्मरण करनसे मनुष्य में शक्ति उत्पन्न होती है ।"

पुरातन रीति अनुसार संगतें तथा सिक्ख बैसाखी के दिन गुरुजी के दर्शनों के लिये एकत्रित हुआ करती थीं । इस बार गुरुजी ने संदेश भेजे कि संगतें जोर-शोर से अच्छी संख्या में आवें । ३० मार्च १६६६ को आनन्दपुर में एक बड़ा सम्मेलन किया ।

सम्मेलन में गुरुजी नंगन खड्ग लेकर खड़े हो गये तथा उपस्थित समुदाय में से बलिदान के लिए एक शीश की मांग की। दीवान में बैठे लोग भयभीत हो गये; परन्तु गुरु जी ने पुनः यही मांग की। तीसरी बार मांग करने पर लाहौर का दयाराम खत्री शीश अर्पण करने के लिए खड़ा हो गया। गुरुजी ने उसे आंखों से ओझल एक पर्दे में ले जाकर बिठला दिया और लहू से सनी हुई तलवार लेकर दीवान में आकर फिर एक शीश की मांग की। इस बार दिल्ली के एक जाट धर्मदास ने अपने आपको बलिदान के लिए उपस्थित किया। गुरुजी उसको भी पर्दे में बिठाकर तथा रक्त से सनी तलवार लेकर पुनः दीवान में आये। तीन बार पुनः पुनः ऐसा करने तथा शीश मांगने के उत्तर में मोहकम चन्द्र छीम्बा, (दर्जी) द्वारिकावासी, जगन्नाथ का हिम्मत झोबर तथा बीदर के नाई साहबचन्द ने बारी-बारी अपने शीश भेंट किये। कुछ समय बीतने के उपरान्त गुरुजी ने पांचों को सुन्दर वस्त्रों में सुसज्जित करके दीवान में ला खड़ा किया। उनको खण्डे (खड्ग) का अमृत पिला कर 'पांच प्यारे' के नाम से सम्मानित दिया। इसके उपरान्त उन्होंने स्वयं भी इन्हीं पांच प्यारों के हाथ से अमृत पान किया।

इसी समय गुरुजी ने इस नये पंथ के नियम, उद्देश्य, मन्तव्य तथा धारणा जताई, जिसको सिक्खी रहत या (जीवनचर्या) कहा जाता है। उन्होंने भविष्य के लिये आदेश दिया कि प्रत्येक सिक्ख इस रहत को माने और धारण करे और इसका पूर्णतः पालन करें। सार इस प्रकार है :—

(१) गुरु की सिक्खी धारण करने के लिये खड्ग का अमृत पांच प्यारों से पिये तथा इस समय बताये गये भजन-उपदेश को अपने जीवन में धारण करे। चरणामृत तथा शीत प्रसाद की सिक्खी बिलकुल न ली जावे।

(२) कोई सिक्ख एक अकाल के अतिरिक्त किसी देवी-देवता, मढ़ी-मसान (चिता) तीर्थ, मठ, पीरों-फकीरों मजारों आदि को न पूजे। उनकी मन्नतें न मानें। चढ़ावे न चढ़ावें।

(३) पांच कक्के (ककार) केश, कंघा, कृपाण, कड़ा, कछहरा हर समय शरीर के साथ रक्खें। शरीर के रोमों को न उतारें। शीश के केश तथा चेहरे पर दाढ़ी स्वाभाविक रूप से रक्खें। शक्ति, साहस रक्षा का चिन्ह कृपाण अथवा तलवार शरीर पर सजावें। लोहे का कड़ा हाथ में पहने। लंगोटी, जांघिया, तहमत आदि न पहनें कछहरा पहने।

(४) प्रत्येक सिक्ख अपनी ईमानदारी की आय का दशमांश

दान दें। चोरी, डकैती, ठगी, मारधाड़ अथवा हराम की आय को बिल्कुल अंगीकार न करें।

(५) वर्ण-आश्रम, छुआ-छूत, ऊंच-नीच का त्याग करके मनुष्य जाति को एक श्रेणी समझें और जीवन में इस का अनुसरण करें। गरीब, दुखियां, अशक्त तथा दलित मनुष्य की हर समय सहायता करें। हर प्रकार की विद्या पढ़ें और पढ़ावें। सत्य, उपकार, सेवा को सबसे उच्च समझें तथा समय आने पर इन आदर्शों पर चलते हुए बलिदान देने से पीछे न हटें।

सांसारिक कार्यों के लिये गुरुजी ने यह रीतियां सिक्खों में प्रचलित कीं—स्त्रियां सती न हों। विधवा स्त्रियों के पुर्नविवाह हों। कम से कम व्यय करके विवाह करें। घूंघट नहीं निकालना। बालक-बालिकाओं को शिक्षा देना। सादा जीवन व्यतीत करें। स्त्रियां भी भजन करें, वाणी सुनें, उपदेश लें, दीवान में बैठें। बालिकाओं का घात न हो, बल्कि उनका पुत्रों की भांति पालन-पोषण हो। हर एक से प्यार करें। आचार-व्यवहार तथा विचार शुद्ध रक्खें। पर-स्त्री गमन न करें। शराब, अफीम, तम्बाखू तथा शेष मादक वस्तुओं का बिल्कुल त्याग करें। यदि जान-बूझ कर अथवा अनजाने ही इन नियमों का उल्लंघन हो जाय तो संगति में उपस्थित होकर इसका वर्णन तथा पश्चाताप कर, संगति से क्षमा मांगें।

सूर्य्यप्रकाश और गुरुशोभा पुस्तकों में लिखा है, कि थोड़े ही समय में लगभग ८०,००० सिंह बन गये।

पृथीयों, धीरमल्लियों तथा रामराइयों ने उसी प्रकार निरन्तर विरोध जारी रक्खा। पांच प्यारों द्वारा (अमृत) लेना, ककार की रहत तथा सिक्खी धारण करना उस समय की विदेशी तथा साम्प्रदायिक रूप-रेखा पर चल रहे शासन के विरुद्ध एक खुला विद्रोह था। खालसा पन्थ की स्थापना के पश्चात् कहलूर नरेश ने गुरु जी को एक पत्र लिखा, कि या तो वह उनकी रियासत छोड़ जावें या उनकी अधीनता मान कर उसको कर दें। गुरुजी ने अधीनता मानने तथा कर देने से इनकार कर दिया। इस पर सारे पहाड़ी नरेश एकत्रित हुए और गुरुजी को आनन्दपुर से निकालने के लिए युद्ध की तैयारियों में लग गये। देहली के सम्राट् की सेवा में उन्होंने सहायता के लिए पत्र लिखा। बादशाह औरंगजेब उस समय दक्षिण की शिया-मुस्लिम रियासतों के विरुद्ध युद्ध कर रहा था। उसने लाहौर तथा

सरहिन्द के सूबेदारों के नाम आदेश भेजे कि वे गुरु गोविन्दसिंह जी पर आक्रमण करें।

सन् १७०१ में लाहौर के सूबेदार, सरहिन्द के सूबेदार तथा पहाड़ी नरेशों की सेनाओं ने आनन्दपुर पर संगठित आक्रमण किया और इसको चारों ओर से घेरे में ले लिया। सैनिक दृष्टिकोण से आनन्दपुर का स्थान एक ऐसा ठिकाना है जहां आक्रमणकारी के लिये बचाव करने वाले से कहीं अधिक सैन्कि चतुराई तथा सैनिक संगठन की आवश्यकता है। आनन्दपुर को तीन दिशाओं में छोटी-छोटी पहाड़ियां, मिट्टी के टीले आदि की कड़ियां, बारह-बारह, चौदह-चौदह मील तक अण्डाकार रूप में घेरा डालते चली जाती हैं। आनंद-पुर के सामने तथा पिछली ओर के प्रदेश में पहाड़ियों में नदी-नाले, चो (पहाड़ी नाला) तथा सतलुज नदी की सात शाखाएं बहती हैं। इस प्रकार के घेरे में पड़े हुए गुरु जी, तथा उनकी सेना को रसद और शस्त्रों की कमी के कष्ट थे। दुश्मन के लिये भी ऐसे प्रदेश में मर मिटने वाले शूरवीरों पर मैदानी युद्ध के समान आक्रमण करना सुभीते का काम नहीं था। तीन वर्ष के लम्बे युद्ध में गुरु जी को बहुत कष्ट हुए। अभी तक इस युद्ध के विषय में पूरा-पूरा वृत्तान्त इतिहासकारों की ओर से पाठकों के सम्मुख नहीं आया. कि लड़ाई के समय गुरुजी के पास कितनी सेना थी और दुश्मन की सेना की संख्या क्या थी? आदि।

युद्ध-लड़ते भूख से विवश होकर माझा प्रदेश के चालीस सिक्खों ने गुरु जी को बेदावा (कोई सम्बन्ध न होने की लिखित) लिखकर दे दिया और अपने घरों को लौट गये। अब आनन्दपुर में थोड़े से सिक्ख रह गये। दुश्मनों ने गुरुजी को आनन्दपुर का गढ़ छोड़ने को कहा और यह प्रण दिया कि यदि गुरु जी आनन्दपुर का किला छोड़ जायें तो उन्हें रास्ते में कुछ न कहा जायेगा।

शर्तों का निर्णय होने पर गुरुजी ने अपने कुटुम्ब और सिक्खों के साथ आनन्दपुर छोड़ दिया। दुश्मनों ने सिरसा नदी के किनारे भरतगढ़ के सामने वाले टीले के पास गुरुजी के काफिले पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण में गुरु जी की माता गूजरी जी तथा उनके दोनों छोटे सुपुत्र जोरावरसिंह तथा फतेहसिंह काफिले से पृथक् हो गये। वे गांव खेड़ी के एक नौकर गंगू ब्राह्मण के घर आश्रय लेने के लिये ठहरे। गंगू ने इनाम तथा प्रशंसा प्राप्त करने के लिये इन्हें मोरण्डे के शासक के हवाले कर दिया; जहां से इन्हें सरहिन्द के सूबेदार वज़ीरखां के पास भेज दिया गया। वजीरखां

ने इन्हें अति क्रूरतापूर्ण ढंग से मरवा दिया। माता गूजरी जी ने पोतों की मृत्यु का दुःख न सह सकने के कारण प्राण त्याग दिये।

दूसरी ओर शत्रु सेना ने सिरसा नदी से ही गुरु जी का पीछा किया। गुरुजी के साथ इस समय ४० सिक्ख थे। चमकौर की गढ़ी में गुरु जी तथा उनके साथियों को घेरे में ले लिया गया। सिक्ख सहस्रों शत्रुओं से बड़ी शूर-वीरता से लड़े। गुरु जी के दोनों पुत्र तथा तीन प्यारे भी शहीद हो गये। अब केवल पांच सिंह शेष रह गये। इन पांचों ने गुरु जी को गढ़ी से निकल जाने की प्रार्थना की। अतः गुरु साहब भेष बदल कर बैरी सेना के बीच से साफ़ निकल गये। यह घटना सन् १७०४ की सर्दियों की है।

चमकौर की गढ़ी से निकल जाने के पश्चात् गुरुजी लगभग ५ वर्ष संसार में रहे। वे माछीवाड़े के वनों में से होते हुए तथा शत्रु की आंखों में धूल झोंकते गांव जटपुरा में पहुंचे। गांव जटपुरा में रहते गुरुजी की जानकारी रायकोट प्रदेश के स्वामी राय कलह से हो गई। यहां ही सरहिंद में पुत्रों की मृत्यु की सूचना पहुंची। सरहिंद के सूबेदार वजीर खां को जब पता चला कि गुरुजी अभी जीवित हैं तो उसने एक सेना उनके पीछे लगाई। गुरुजी ने भी आने वाले खतरे को देखकर अपने सिक्ख इकट्ठे कर लिये। मुक्तसर में गुरुजी की सेना का सरहिंद की सेना से युद्ध हुआ, जिसमें सरहिंद की सेना की पराजय हुई। एक लेखक के कथनानुसार इस समय गुरुजी के पास दस बारह हजार के लगभग सिक्खों की सेना थी। यहीं आनन्दपुर से बेदावा लिखकर दे आए सिक्खों न पुनः वापिस आकर बलिदान दिए और उनका टूटा सम्बंध जोड़ा गया। मुक्तसर के युद्ध के पश्चात् गुरुजी साबोकीतलवण्डी के सरदार डल्ले के पास आकर ठहरे। गुरुजी ने यहां ९ मास रह कर गुरु ग्रन्थसाहब की बीड़ को तैयार करवाया। इसका नाम दमदमेवाली बीड़ [प्रति] रक्खा।

इन्हीं दिनों में गुरु जी ने गांव दीनाकागढ़ से एक पत्र 'जफरनामा' के सिरलेख से औरंगजेब को लिखा। फलस्वरूप बादशाह ने गुरु जी को मिलने के लिये दक्षिण बुलाया। गुरुजी अभी राजपूताने के प्रदेश में जालोर ही पहुंचे थे, कि औरंगजेब की मृत्यु हो गई, इस पर गुरु जी पुनः मार्च अथवा अप्रैल के महीने सन् १७०७ में देहली लौट आये।

औरंगजेब की मृत्यु पर उसके पुत्रों में सिंहासन के उत्तराधिकार के लिये युद्ध होने शुरू हो गये। ३० जून १७०७ वाली जाजुए की लड़ाई के समय गुरु जी अपने पुराने मित्र बहादुरशाह के पक्ष में लड़े। बहादुरशाह शाही सिंहासन पर बैठा। उसने आगरे के स्थान पर गुरु जी को एक बहुमूल्य पोशाक तथा ६०,००० रु० की एक धुखधुखी उपस्थित की। गुरु जी

इसके व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुए। अनुमान यह था कि शीघ्र ही शासन तथा गुरुजी के सभी झगड़े समाप्त हो जायेंगे तथा गुरु जी आनन्दपुर वापस आकर सिक्खी के प्रचार में लग जायेंगे। इसी आशा में गुरुजी बादशाह बहादुरशाह के साथ आगरे से आगे चले गये। इस समय गुरुजी के साथ दो या तीन सौ घुड़सवार थे। परन्तु विधाता को कुछ और ही स्वीकार था। बहादुरशाह को राजपूताने के कछवाहे राजा के विरुद्ध और अन्त में दक्षिण में अपने भाई कामबख्श के विरुद्ध युद्ध करने पड़े। गुरु जी ने जब देखा कि बादशाह का मन साफ नहीं और वह अपने वचनों का पालन करने को तैयार नहीं, तब उन्होंने उसका साथ छोड़ दिया और अपने साथियों समेत सितम्बर में गोदावरी नदी के किनारे नादेड़ आकर ठहर गये। यहां ही माधवदास बैरागी उनका बन्दा अथवा सिक्ख बना।

सरहिन्द के सूबेदार वजीरखां को गुरु जी की बादशाह बहादुरशाह से मित्रता का पता चल गया था। उसको भय था कि गुरु जी बादशाह से अपने निर्दोष बच्चों के घात के लिये न्याय की मांग करेंगे। फलस्वरूप वजीरखां पर शाही दंड आना आवश्यक था। इसी कारण वजीर खां गुरु जी को मरवाने के लिये षड्यंत्र कर रहा था। इस काम के लिये उसने दो पठानों को सरहिन्द से नादेड़ भेजा। इन्होंने गुरु जी के साथ मित्रता पैदा की। एक दिन रात के पहले पहर जब गुरु जी सोने लगे तो एक पठान ने उनके पेट में छुरा भोंक दिया। तत्काल ही गुरु जी ने चुस्ती से पठान का सिर कटार से उतार दिया। दूसरा पठान भाग निकला, जिसको सिक्खों ने शीघ्र ही तलवार से काट दिया। पेट का घाव सिला गया और गुरु जी निरोग होने आरम्भ हो गये। एक दिन एक कठोर धनुष का चिल्ला चढ़ाते समय घाव फट गया जिस कारण बहुत रक्त बह निकला। ७ अक्तूबर १७०८ की आधी रात को गुरु जी ने अपने सिक्खों को जगाया; अन्तिम जयकार बुलाई और ज्योति में ज्योति समा गई।

———

काण्ड—२

गुरु गोविन्दसिंह जी के आनन्दपुर छोड़ते ही सिक्खी प्रचार का नया बनाया हुआ केन्द्र भी शत्रुओं ने लूट कर उजाड़ दिया। पूर्व गुरुओं के बनाये प्रचार केन्द्र करतारपुर, खडूर, गोविन्दवाल, अमृतसर, कीर्तिपुर, बाबा बकाला तथा मन्जियां, बख्शिशें, धुएं, संगतों के स्थान थे। इनके मुखियों ने खण्डे की पाहुल (अमृत) तथा ककारों की सिक्खी का प्रचार सम्वत् १६६६ में अथवा खालसा सजाने के समय से आरम्भ कर दिया था अथवा नहीं; इसका उत्तर हमें सिक्ख इतिहास की पुस्तकों में नहीं मिलता। इन केन्द्रीय स्थानों में से अक्सर स्थान पृथिये, धीरमल्लियों, रामराइयों, मसन्दों अथवा उदासी साधुओं के अधिकार में थे। वे अपने ढंग से गुरु नानकदेव जी के नाम पर अपनी सिक्खी-सेवकी फैला कर सीधी सादी जनता से भेंट अथवा चढ़ावा लेते थे। ऐसे सज्जनों में बहु-संख्या गुरु-वंशी सोढियों तथा वेदियों की थी। पांचवें गुरु जी ने बाबा बूढ़ा जी को हरिमन्दिर साहिब जी का पहला ग्रन्थी बना कर जाटों को भी धर्मोपदेश देने का अधिकार दिया था। इसके पश्चात् बांगर के रनधावों, स्वरसिंघ के सन्धुओं, पट्टी प्रदेश के ढिलवों, हठाठ सतलुज के सिंधुओं, गुजरात के लुबानों तथा लम्ब्रे के कम्बोजों में से जाट, लुबाने तथा कम्बोज अपने २ प्रदेशों की संगतों के मुखिया बनकर सिक्खी प्रचार करने लगे।

जब गुरु गोविन्दसिंह जी ने खण्डे पाहुल की सिक्खी फैलाई, तो प्रतीत होता है कि पहले-पहल सिक्खी की आधुनिक रीति और पहनावा, आदि गांवों में रहकर कृषि का कार्य करने वाले जाटों, बढ़इयों, कम्बोजों, लुबानों, रहतियों, रविदासियों तथा मज़हबी सिक्खों ने ही धारण किया। खालसा पंथ के निर्माण से लगभग ७० वर्ष तक केशधारी सिक्खी को धारण करना हर समय मृत्यु के मुंह में रहने के समान था।

सन् १७०८ से १७१६ तक बाबा बन्दा (बन्दा वैरागी) तथा उसके साथियों ने, जिनमें से अधिकांश ने गुरु जी के साथ दुखों और कष्टों को सहन किया था, पंजाब में पहुंच कर सरहिन्द के अत्याचारी सूबेदार और सिक्खों पर अत्याचार करने वालों को कड़े दंड दिये। इन ८ सालों में सूबा सरहिन्द के प्रदेश तथा जालंधर के द्वाबे में खण्डे की पाहुल तथा केशधारी सिक्खी का प्रचार हुआ। दो-चार वर्ष यह आन्दोलन बड़ी तीव्रता से चला, परन्तु जब शाही सेना ने सिक्खों तथा बाबा बन्दा को बिल्कुल नष्ट करने के आदेशों को मानकर बदले की भावनाओं से आक्रमण किया तो उनमें से अधिकांश, दाढ़ियों को मुंडवा कर फिर पुरातन भाईचारे में मिल गये। सिक्खों में भी कई प्रकार की दरारें आ गईं तथा बाबा विनोद सिंह जी आदि कई पुरातन सिक्ख बाबा बन्दे को छोड़ गये। शाही सेना ने बाबा बन्दा तथा उसकी सेना को गुरदासनंगल की कच्ची गढ़ी में घेर लिया। उन्हें साथियों समेत पकड़ कर देहली लाया गया तथा २९ फरवरी १७१६ को इनका जलूस निकाला गया। जलूस में सबसे आगे दो हजार सिक्खों के कटे हुए सिर बांसों पर लटकाये हुए थे। इनके पीछे बाबा बन्दा हाथी पर लोहे के पिंजरे में बन्द किये हुए थे। इसके पीछे ७४० सिक्ख दो-दो तीन-तीन की संख्या में बांध कर ऊंटों पर डाले हुए थे।

नगर निवासी इस समारोह को देखने आये हुए थे। लाहौरी दरवाजे से कई मील तक दोनों ओर सैनिक खड़े थे। मुसलमान तो अत्यन्त प्रसन्न थे। बंधे हुए सिक्खों के मुखों पर कोई निराशा न थी। वह प्रसन्न प्रतीत होते थे। उनको मरने का कोई भय न था। ऊंटों की नग्न कोहानों पर बंधे वह गीतों का गायन कर रहे थे। यदि बाहर खड़ा कोई भली-बुरी बात कहता तो सिक्ख उत्तर देते कि यह सब "हुकम का कार्य हो रहा है," यदि कोई कहता कि अब तुम्हारा घात किया जावेगा तो उत्तर देते, "शीघ्र पार बुलाओ।"

५ मार्च सन् १७१६ या गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान से लगभग ४० वर्ष पश्चात् उसी पुरातन स्थान, कोतवाली के चबूतरे पर सिक्खों को कत्ल करना शुरू किया गया। एक दिन में एक सौ सिक्खों के सिर उतारे जाते। जीवदान की शर्त इस्लाम मत को स्वीकार करना बतलाई गई थी, परन्तु एक भी सिक्ख ने अपने धर्म को पीठ न दी। बन्दियों में एक युवावस्था का युवक भी था। उसकी मां के रोने-पीटने और बादशाह को यह बताने पर कि उसका पुत्र सिक्ख है नहीं, बादशाह ने उसकी

मुक्ति का आदेश दे दिया। कोतवाल ने शाही आदेशानुसार युवक को छोड़ दिया। युवक को जब असली बात का पता चला, तो उसने चिल्लाकर कहा, "मेरी माता झूठ बोलती है। मैं तन-मन से गुरु का शिष्य हूं। मुझे शीघ्र मेरे साथियों से मिलाओ, मैं पीछे रह रहा हूं।" इस पर उसको भी कत्ल कर दिया गया। शाही आज्ञानुसार दिन में कत्ल किये गये शरीरों को रात समय गाड़ियों पर लाद कर शहर से बाहर सड़कों के किनारे के वृक्षों पर लटका दिया जाता, ताकि लोगों के दिल डर जायें तथा वे शासन के विरुद्ध किसी कार्य में भाग लेने का साहस न कर सकें।

९ जून १७१६ को बाबा बन्दाजी तथा उसके २६ साथियों का जलूस निकाल कर देहली से ख्वाजा कुतबुद्दीन बुख्तयारकाकी के मज़ार पर लाया गया। उनको मृत्यु अथवा इस्लाम दोनों में से एक बात स्वीकार करने की शर्त पेश की गई। बाबा बन्दाजी ने मृत्यु से धर्म को कहीं उच्च बताकर मृत्यु स्वीकार कर ली। इस पर उसको अपने बालक अजयसिंह को गोदी में बिठाकर मार देने का आदेश दिया गया। इन्कार कर देने पर बच्चे के टुकड़े कर दिये गये तथा उसका तड़फता हुआ दिल निकाल उनके मुंह में दे दिया गया। बाबा वन्दाजी मूर्तिवत् मूक खड़े रहे। सबसे पहले उनकी दाईं आंख और फिर बाईं आंख निकाल दी गई। इसके पश्चात् उनके पैर काटे गये। गर्म सुलाखों से और जम्बूरों से उनके शरीर में से टुकड़े टुकड़े करके मांस तोड़ा गया और अन्त में उनका सिर उतार दिया गया।

बाबा बन्दाजी तथा उनके साथियों के बलिदान के पश्चात् बादशाह फरखसिय्यर के आदेशानुसार केशधारी सिक्खों पर अत्याचार के आरे चलन आरम्भ हो गये। इस आज्ञानुसार सिक्खों में जो केशधारी इस्लाम ग्रहण करने से इनकार करता था, कत्ल कर दिया जाता था। सिक्खों के सिर काट कर लाने वालों को इनाम दिये जाने आरम्भ हुए। सैंकड़ों की संख्या में सिक्ख, गांवों से पकड़-पकड़ कर लाये गये तथा कत्ल किये गये। इस भय के कारण कई केश रखने वालों ने केश मुंडवा दिये और फिर मुंडे हुए बन गये। केशधारी सिक्ख पहाड़ों तथा बनों में जा छिपे। धीर मल्लिये, रामराइये तथा मसन्दों के सिक्ख, लंगोटियां पहनने वाले, तम्बाकू पीनेवाले एवं बालिकाओं को मारने वाले जैसे के तैसे टिके रहे। सन् १७२१ तक केशधारियों को मृत्यु का आलिंगन इसी प्रकार करना पड़ा।

सन् १७२० की दिवाली के मेले पर तत्त खालसा तथा बंदई खालसा के दोनों दल दरबार साहब (अमृतसर) पर अपना अपना अधिकार करने के लिये

पूरी तैयारी करके एकत्रित हुए। माता सुन्दरी ने दिल्ली से भाई मनीसिंह तथा मामा कृपालसिंह को यह झगड़ा निबटाने के लिये भेजा। उनके प्रयत्न से आपस में मिलाप हो गया और भाई मनीसिंह जी को सबकी सम्मति से हरिमन्दिरसाहब अमृतसर जी का मुख्य ग्रन्थी नियुक्त किया गया। गुरु हरिगोविन्द जी के अमृतसर छोड़ने के ६० साल पश्चात् अमृतसर केशधारी और खण्डे के अमृत की सिक्खी और प्रचार का केन्द्र बना।

लाहौर का सूबेदार अब्दुलसमदखां और उसका पुत्र जकरिया खां जो कुछ समय के बाद लाहौर का सूबेदार बना, सिक्खों के कट्टर बैरी थे। वह सिक्खों का सर्वनाश करना चाहते थे। १७२६ में जकरिया खां ने गश्ती सेनाएं सिक्खों को पकड़ने के लिये भेजीं। सिक्ख गांवों से पकड़ कर लाये जाते तथा लाहौर नखास और घोड़ामण्डी में कत्ल किये जाते। सूबेदारों के इस अत्याचार के कारण माझा प्रदेश के सिक्ख पुनः जंगलों और पहाड़ों की ओर चले गये। यद्यपि शासन उनके विरुद्ध होता था, परन्तु जन साधारण उनकी सहायता करते, आश्रय देते तथा धन भी पहुंचाते। शासन के साथ उनकी कभी संधि हो जाती, कभी लड़ाई और बैर। १७३४ ई० में सिक्खों के भी दो दल हो गये। बूढ़ा दल तथा तरुणा दल। १७३८ में भाई मनीसिंह शासन के हाथों शहीद हुए और केशधारी सिक्खों पर पुनः शासन की ओर से अत्याचार आरम्भ हुए। १७४८ तक यही स्थिति रही और सिक्ख धर्म का प्रचार प्रायः रुका रहा। उन दिनों जत्थेदार अमृत छकाते तथा धर्म प्रचार किया करते थे।

सन् १७४८ से १८४९ के मध्य का समय सिक्खों के राजनीतिक जीवन के बड़े-बड़े उतार-चढ़ावों से भरा हुआ है। सिक्खों के जत्थों ने पहले पचास साल में ईरान और अफगानिस्तान के बादशाहों तथा देहली शासन के सूबेदारों से, टक्करें लेकर पंजाब को विदेशी शासन की पराधीनता से मुक्त कराया। सन् १८०० में करनाल से रावलपिंडी प्रदेश तक सिक्ख सरदारों, नरेशों, रईसों के राज्य बन गये। इन्हीं दिनों, खंडे के अमृत की सिक्खी, और सिक्ख धर्म का अच्छा प्रचार हुआ। सन् १८०० से १८५० तक लाहौर दरबार के प्रदेशों को अंग्रेजी शासन द्वारा हिन्दुस्तान भर के साथ मिलाये जाने के समय में बहुत से लोगों ने केश रख लिये तथा खण्डे की पाहुल लेनी आरम्भ की। लाहौर दरबार में महाराजा रणजीतसिंह के जीवनकाल में ही पुनः सना-तन ब्राह्मण मतानुसार रीतियां, मर्यादा, व्यवहार तथा संस्कार करवाने का जोर हो गया था। साहबसिंह बेदी और आनन्दपुर आदि के सोढियों ने पुनः

लोगों को अपने सिक्ख बनाना आरम्भ किया । सन् १८५० तक यद्यपि सिक्खों की संख्या बढ़ गई थी, परन्तु साधारण सिक्ख, राजाओं महाराजाओं, रईसों के देखादेखी पुनः ब्राह्मण रीतियों और मर्यादाओं को अपना रहे थे । दूसरी ओर सोढी, वेदी, अपनी सिक्खी सेवकी की वृद्धि में लगे हुए थे। चरणामृत की रीति फिर स्थापित होती जा रही थी। धन और शासन हाथ में आने से सिक्ख भोगविलास में पड़ गये थे । धनवान् सिक्ख कई विवाह करने, मुसलमान कंचनियों को रखने और मदिरा पीने में सबको पीछे छोड़ गये थे । गुरुद्वारों के पुजारी, महन्त, धर्म, आचरण तथा मानवता से पतित हो चुके थे । उदासी साधू जो त्याग के प्रतीक थे, विवाह करवाकर गुरुद्वारों के धन-धान्य और भेंटों को अपनी व्यक्तिगत आय की भांति व्यय कर रहे थे। इस समय सिक्ख जनता का कोई आध्यात्मिक नेता नहीं था ।

अंग्रेजों ने सन् १८४६ में महाराजा रणजीतसिंह के पूर्वज महाराजा दलीपसिंह को सिंहासन से उतार कर पंजाब को अपने राज्य में मिला लिया। इससे भारत में अंग्रेजी राज्य की सीमायें हिन्दमहांसागर से लेकर सिंधु नदी के पार खैबर तक पहुंच गईं । इसके ७ साल पश्चात् सम्वत् १९१४ में नामधारी आन्दोलन की नींव रक्खी गई। इस आन्दोलन का सीधा प्रभाव सिक्ख धर्म प्रचार, सिक्ख जीवन तथा पंजाब की राजनीति पर पड़ा। इसके पश्चात् ९० साल अर्थात् सन् १९४७ तक अंग्रेजी शासन के विदेशी और देशी कर्मचारियों को इस आन्दोलन के भस्म ढेरों में भी ऐसी चिनगारियों का सन्देह होता रहा, जो किसी समय ज्वाला का रूप धारण करके ब्रिटिश राज्य के लिये भयानक विनाश का कारण बन सकती थीं । अन्याय, अत्याचार, दमन, दुःख, कारागार, झूटे मुकदमे तथा जायदादों की जबतियां एवं नामधारियों को नाश करने में असफल रहे ।

अंग्रेज भारत को छोड़ गये । जाते जाते भारत का पाकिस्तान तथा हिन्दुस्तान के नाम पर विभाजन करके पृथक् देश बना कर पृथक् शासन स्थापित कर गये । हिन्दुस्तान का शासन गांधी जी तथा नेहरू जी के नेतृत्व में कांग्रेसी नेताओं के सुपुर्द किया और पाकिस्तान की हुकूमत जनाब जिन्ना तथा लियाकत अली खां मुस्लिम लीग के नेताओं को सौंप दी गई। यह परिवर्तन केवल उच्च शासकों तथा विभिन्न विभागों के उच्च अधिकारियों का ही हुआ । शासन का काम चलाने वाले शेष कर्मचारी वही पुराने सज्जन हैं ।

शासन में परिवर्तन से पंजाब की जनता के नेताओं में भी आश्चर्य-

जनक परिवर्तन आये। कांग्रेस पार्टी का मंत्रिमंडल बना। १५ अगस्त १६४७ तक साम्प्रदायिकता की प्रज्वलित भट्टियों में ईंधन डालने वाले रात भर में पुराने देखे-भाले हुए देशभक्त कांग्रेसी बन गये। कांग्रेसी सदस्य होने की शर्त तन-मन-धन की सेवा की बजाय चौअन्नी मात्र चंदा रह गई। ६० साल अंग्रेजी राज्य के साथ पूर्ण असहयोग रखने, स्वदेशी वस्त्रों को प्रयोग करने, खादी पहनने, अंग्रेज शासकों को 'बिल्ला' कहकर पुकारने वाले नामधारी सिक्ख स्वाधीनता मिलने की प्रसन्नता में मग्न हैं, और अपने पुराने कार्यक्रम के अनुसार देशसेवा में जुटे हुए हैं।

नामधारी नेता

गुरु रामसिंह जी

जीवन के पहले ४० वर्ष

सिक्ख जनता के इतिहास के नामधारी आन्दोलन के संचालक गुरु रामसिंह जी माघ शुदि ५ सम्वत् १८७५ वि० तद्नुसार ३ फरवरी सन् १८१६ ई० के दिन हिठाड़-सतलज के जिला लुधियाना पंजाब के गांव भैणीं, में उत्पन्न हुए। इनके पिता का नाम जस्सा (गांव के लोग लक्खा कहकर भी बुलाते) तथा माता का नाम सदाकौर था। सदाकौर गांव नंगल के बढ़इयों की पुत्री थी। भाई जस्सा गांव में बढ़ई का काम करता था। साझी, बटाई, चुकौते तथा जोड़ी की कृषि करके वह अच्छी आय पैदा कर लेता था। खेती-बारानी ही होती थी। कुओं के पानी साठ-साठ सत्तर-सत्तर हाथ नीचे थे। मोटा अन्न जो, चने, बाजरा, ज्वार, मूंग, मोठ ही पैदा होते थे। लोग गाय रखते थे। भैंसें इस प्रदेश में बहुत कम थीं। कच्चे झोंपड़े, छोटे घर कुटुम्बों के रहने के लिये तथा बाहर की ओर छप्पर की झोंपड़ी ढोरों के लिये होती थी।

जिस वातावरण में आपकी बाल्यावस्था व्यतीत हुई, वह एक सीधा-सादा आज से १५० वर्ष पहले का ग्रामीण जीवन था। पिता मेहनत करके रोटी उत्पन्न करता और माता भगवान् का धन्यवाद करके घर का काम काज चलाती थी। खाना बनाती, आटा पीसती और गाय-बैलों को संभालती।

आपके छोटे भाई बुद्धसिंह जी आप से चार या पांच वर्ष छोटे थे । आपकी एक बहिन साहबकौर थी, जो रायपुर के काबुलसिंह से ब्याही हुई थी । छोटे से कुटुम्ब में जेष्ठ होने के कारण माता-पिता अच्छा ख्याल रखते थे। छोटे भाई-बहिन हर बात को मानते थे । निर्धन श्रमिकों के घर की भांति कुटुम्ब के जीवों का परस्पर बहुत प्रेम और स्नेह था । कलह-क्लेश का नाम नहीं था । न रूठना, न मारपीट, न पारिवारिक लड़ाई और न पड़ौस से डाह । पिता जी की बैठक गांव के बुद्धिमान पुरुषों के बैठने का स्थान था और इसके सामने का स्थान बालकों के खेलने की जगह थी । घर के सामने खेलने वाले बालकों तथा बातें करते हुए बुद्धिमानों का आना जाना बना रहता । गांव के कई कुटुम्बों के मुखिया बाबा जस्सा से हर्ष शौक के समय, लड़के-लड़कियों की शादियों के मौकों पर तथा विवाहित लड़कों को पृथक् करने या साथ रखने के विषय में सम्मति लेते ।

भैणी छोटा-सा माजरा गांव है । भूमि के स्वामी जाट इसमें बसते हैं । साथ के दस बारह गांवों में मांगट गोत्र के जाट बसने हैं। साहनेवाल सन्धु जाटों का गढ़ है। मांगटों के साथ जरग धमोट में घालीवाल गोत्र के जाट हैं । इससे आगे झल्लीगिल्ल जाट । भैणी के पास ही पश्चिम की ओर गरेवाल जाटों का २२ गांवों का पर्गना है । उत्तर की ओर बूढ़े दरिया के पास मुसलमान गूजर रहते थे । भैणी में भूमि का स्वामित्व हल चलाने वाले जाटों का था ।संगठित टोलियां, अपनी खेती करती थीं । भूमि रेतीली है । एक दो बार हल चलाया, बीज फेंका तथा पकने पर कटाई कर लो । गांवों के एक-दो कुओं पर चर्से की सिचाई से पूरी पत्ती, (गांव का एक हिस्सा) थोड़ी-थोड़ी भूमि बीज लेती । काम अधिक नहीं होता था। लोग अवकाश में कुश्ती लड़ते, सोंची पक्की खेलते, गदका के हाथ सीखते सिखाते और मुग्दर उठाते ।

गांव का कारीगर बाढ़ी अथवा तरखान भारत के गांवों की जनता के जीवन का एक आवश्यक अंग है । गांवों में इनकी जन-संख्या पच्चीस या तीस हल के पीछे एक घर की होती है । वह अपने कारखाने में हल बनाता है । पटेला काटता है । खुर्पा, दरांती, कुल्हाड़ी तथा फावड़ा से लेकर गड्डों तक के किसानी औजार बनाता और ठोक-ठाक रखता है । घरों की वस्तुएं खाट-खटोला, चरखा, बेलन, छलनी सब वही बनाता है । गांव के नये, कच्चे-पक्के रिहायशी घर बनाने में भी उसकी सम्मति अनुसार काम होता है । विवाह की वेदी भी वही

बनाता है, तथा मृत्यु का विमान भी इसी का बनाया हुआ होता है। इसका अड्डा और इसकी लोहगार गांव के हर प्रकार के पुरुषों—धनवान, निर्धन, शरीफ तथा बदमाश के उठने बैठने का स्थान होता है। किसानों की बहू-बेटियों का आना जाना उसके घर तथा कारखाने में बना रहता है। गांव की पंचायत में उसका मुख्य स्थान होता है, इसलिये उसका उच्च आचरण वाला, शुभ सम्मति देने वाला, भले-बुरे की पहिचान करने वाला, तथा बुद्धिमान् होना अति आवश्यक है। इसी श्रेणी में होने के कारण बाबा जस्सा में यह गुण स्वाभाविक रूप से थे। सारा गांव उनका सम्मान करता था।

जब से गुरु हरराय जी ने बागड़ियां के भाई रूपा बढ़ई को "बख्शीश" देकर सिक्ख धर्म के प्रचार के लिये मालवे की सिक्ख संगतों का नेता बनाया था, तब से इन प्रदेशों के बहुत से बढ़ई शिल्पियों ने गुरु नानकदेव जी की सिक्खी धारण कर ली थी। मिसलों के समय रामगढ़ गांव वाले जस्सासिंह ने बटाले के आस-पास अपना राज्य स्थापित कर लिया था। भाई रूपाजी के वंशज सिद्धू राजाओं, सिक्ख सरदारों तथा सिद्धू जनता के राजगुरु तथा धार्मिक नेता लगभग १८०० ई० के समय से माने जा रहे थे। पंजाब के जाटों तथा बढ़इयों के गोत्र एक ही हैं। अनुमान है कि किसी समय आवश्यकता होने पर जाटों में से बुद्धिमान तथा होशियार नवयुवकों ने यह व्यवसाय अपना लिया था। बढ़इयों का इस प्रकार धार्मिक नेता बनना तथा रामगढ़िया मिसल (सिक्खों का जत्था) की रियासत स्थापित होने से माझा (अमृतसर, लाहौर, गुरुदासपुर के प्रदेश) गांव के सारे बढ़ई शिल्पियों ने केश रखना तथा खंडे का अमृत लेना आरम्भ कर दिया था। सतलुज दरिया के इस पार में देखादेखी केश रखने का रिवाज तो था, परन्तु खंडे के अमृत का रिवाज कम था। बाबा जस्सा ने भी केश तो रक्खे हुए थे, परन्तु खंडे का अमृत नहीं लिया था। दिन भर काम-काज करके रात्रि को वह राम राम कर लेता।

पांच वर्ष की आयु में आपकी सगाई गांव घरौड़ के साहबू नामी बढ़ई की पुत्री जस्सां के साथ हुई और सात वर्ष की आयु में आपका विवाह भी हो गया। आपने बाल्यावस्था में ही गुरुमुखी अक्षरों की वर्णमाला अपनी माताजी से पढ़ी। आठ वर्ष की आयु तक कई बाणियां भी आपने कंठस्थ कर लीं तथा प्रातः और संध्या अकेले बैठ कर इनके पाठ नित्यप्रति करने लगे। नौ वर्ष की आयु में घर के कामों में हाथ बटाने लगे। गांव के ग्वालों के साथ गायें लेकर

देश-भक्त-वार्ता पुस्तक माला नं० १

नामधारी इतिहास

प्रथम खण्ड

सन् १७८५ से १८७२ तक

लेखक- -

नाहरसिंह एम० ए०

प्रथम संस्करण २५००

मूल्य ६ रु० २५ नये पैसे

चले जाते। खेतों की खुली हवा में लड़कों के साथ ढोर चराते। कबड्डी, कुश्ती, दौड़ आदि खेलों में पूरा भाग लेते। लड़के इकहरी तथा लड़ीबार बोलियां (लोक-काव्य का एक रूप) कहते। ढोर चराने वाले बूढ़े हीर-रांझा, मिर्ज़ा साहिबां की कलियां, तथा (लोक-काव्य का दूसरा रूप) गाते और टप्पे दोहरे कवित्त कहते। आप अपनी छड़ी पर खुर्पा मार कर ताल निकालते और शब्द (गुरुवाणी) पढ़ते। इससे आपके साथी मखौल करते और हैरान होते। धीरे-धीरे इनके कई साथी भी शब्दों का अलाप करने लगे। ढोर चराने वाले लड़कों का जीवन अनुशासन में रहने का अच्छा उदाहरण होता है। उनमें बड़ी आयु का किशोर नेता बन कर ढोर फेरने की बारी बांधता है अथवा बारी-बारी प्रत्येक को आदेश देता है। सब उसके आदेश का पालन करके ढोरों को फेरते हैं। यदि आपस में झगड़ा हो जाये तो ढोर चराने वाले वृद्ध बात निबटा देते हैं। बाल्यावस्था से ही बालकों में पारस्परिक मेल-मिलाप, भ्रातृ-भाव तथा मिल कर काम करने की सूझ-बूझ आती है। ढोर चराने की अवस्था बारह तेरह वर्ष तक रहती है और लड़के इन्हीं दिनों में हृष्ट-पुष्ट हो जाते हैं एवं बहुत कुछ जान लेते हैं। गुरु रामसिंहजी ने इस जीवन से बहुत कुछ सीखा। इस समय बने हुए कई मित्रों ने अन्त तक आपका साथ निभाया।

बाबा जस्सा ने एक बार आपको गांव बिलगा के एक साधू के पास शिक्षा के लिये भेजा, परन्तु आप थोड़े समय पढ़ कर वापिस भैणी आ गये और घर का काम काज करने लगे। माता सदाकौर धार्मिक वृत्ति वाली थी। उनको बाणियां भी याद थीं और कहानियां भी। अतः उसने वाणियां कंठस्थ करवा कर तथा रात को सोने से पहले कहानियां सुना-सुना कर अपने प्रिय पुत्र के कोमल हृदय पर श्रद्धा, भक्ति, निर्भयता तथा दृढ़ता के अमिट भाव अंकित कर दिये।

सुदृढ़, बलशाली भुजाओं वाले नवयुवकों तथा जीवन में कुछ कर दिखाने वाले मनुष्यों के लिये उस समय दरबारों की फौजी नौकरी उदर-पूर्ति का सबसे उत्तम व्यवसाय माना जाता था। खेती तथा बढ़ई के काम में लगे रहकर गांव में जीवन व्यतीत करना आपको भी नहीं भाता था। नाहीं इसमें आपका मन लगता था। घर में बातचीत हुई कि आपको सेना में भर्ती करवा दिया जावे, क्योंकि घर का काम छोटा भाई भी चला सकेगा। नौकरी से दोनों बातें होंगी, आय भी तथा सम्मान भी।

सन् १८३६ में आपका बहनोई काबुलसिंह लाहौर से अपने गांव रायपुर

छुट्टी पर आया । काबुलसिंह लाहौर दरबार के तोपखाने में गोलंदाज था। नौकरी पर वापिस जाता हुआ काबुलसिंह आपको अपने साथ लाहौर ले गया और आपको सेना में भर्ती करवा दिया । गांव बडाचक रियासत मालेर कोटले का निवासी भाई काहनसिंह आपके भर्ती होने के समय रैंजिमेंट में हवलदार था ।

सैनिक जीवन में आपने भजन-बन्दगी की ओर बहुत ध्यान दिया । सेना में रहकर ही आपने शिक्षा प्राप्त की तथा जीवन को नवीन सांचे में ढाला। सैनिक जीवन का प्रभाव प्रत्येक सैनिक पर होता है। निर्भयता, लक्ष्यपूर्ति, समय की पाबन्दी, सीधे ढंग से बात को सोचना और कहना, साथियों से मिलकर चलना आदि गुण सैनिक शिक्षा से मनुष्य में अपने आप ही आ जाते हैं। इकट्ठे रहने से शिष्टाचार के ढंग एवं शुभ गुण सीखने का अवसर मिल जाता है। फौजों में भजन बन्दगी वाले पवित्र पुरुष भी होते हैं तथा गुण्डे-लफंगे भी ।

रामसिंहजी ने सेना में नौकर होकर अपनी वृत्ति भजन-बन्दगी, सेवा तथा शुभ कार्यों की ओर लगा दी । सैनिक काम से अवकाश पाकर गुरुद्वारों के दर्शन करते, और वाणी का कीर्तन सुनते । सरदार काहनसिंह श्रेष्ठ स्वभाव तथा अच्छे गुणों वाला मनुष्य था, अतः आपके साथ उसका प्रेम हो गया । पवित्र जीवन तथा नाम स्मरण करने वाले, माझा द्वाबा और गुजरांवाला के प्रदेशों के सैनिक जिनमें से अधिकांश ने नामधारी सिद्धान्त स्वीकार कर लिये थे इसी समय आपके मित्र बने । आपको धार्मिक वृत्ति वाला जान कर आपके संगी भाई रामसिंह के नाम से बुलाने लगे । थे । भाई शब्द ऐसे सज्जन का ज्ञापक है, जो स्वयं पवित्र जीवन वाला होने के अतिरिक्त अच्छे लोगों का नेता भी हो। जिस रेजिमेन्ट में आप थे, उसका उपनाम भक्तों की रेजिमेन्ट प्रसिद्ध हो गया ।

सन् १८३९ में महाराजा रणजीतसिंह मृत्यु को प्राप्त हो गये । ४० वर्ष के शासन के समय उन्होंने सिक्ख सरदारों, मुसलमान नवाबों तथा हिन्दू राजाओं के प्रदेशों को तलवार के बल से जीत कर अपना राज्य सतलज से लेकर खैबर पार जमरोद तक स्थापित कर लिया था। यह शासन वास्तव में पंजाबियों का शासन था । सेना में अधिक संख्या सिक्खों की थी, जो सदा ही रण-क्षेत्रों में आगे होकर लड़ते थे। जनरल हरिसिंह नलवा, बाबा फूलासिंह अकाली, सरदार अमरसिंह मजीठिया, धन्नासिंह मलवयी सदा ही शत्रुओं से लड़ते रहते । नागरिक शासन के बड़े-बड़े पदों तथा प्रान्तों के सूबेदार और शासक

हिन्दू तथा मुसलमान थे। इन ४० वर्षों में बहुत से सिक्ख जागीरें प्राप्त करके अमीर आदमी बन गये । केशधारी सिक्खी का भी प्रचार हुआ । सेनाओं में खंडे का पाहुल सिक्खों को दिया जाता था। बहुत से ऐतिहासिक गुरुद्वारों के नये भवन महाराजा ने सरकारी लागत पर बनवाये और उनके साथ जागीरें भी लगाईं ।

गुरु गोविन्दसिंह जी के खण्डे का अमृत छका कर केशाधारी सिंह बनाने के समय से लेकर महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के समय तक सिक्ख मर्यादा तथा रहन-सहन में कई प्रकार के उतार-चढ़ाव एवं परिवर्तन आये । गुरु गोविन्दसिंहजी ने आनन्दपुर को छोड़ते समय गुरुद्वारे के सुपुर्ददार की पदवी एक गुलाबराय नामक उदासी साधु को दी थी। साधुजी ने सुपुर्ददार के पद में अपना मान होते देख कर तथा चढ़ावे की माया से सहज ही अमीराना ठाठ में आ जाने के कारण अपनी ही सिक्खी सेवकी शुरू कर दी। गंगूसाहियों ने भी गंगूसाही सिक्ख बनाने की प्रथा चला दी । दमदमा साहब के ठिकाने के समय गुरु गोविंदसिंहजी ने स्वयं, खण्डे का अमृतपान करने और केशधारी सिक्खी धारण करने का प्रचार किया । श्री गुरु ग्रंथसाहब की बीड़ (प्रति) तैयार करवाई तथा पठन-पाठन की रीति चलाई। प्रचार के लिये वाणी के अर्थ संगतों को स्वयं सुनाये तथा ज्ञानी 'सिंह' तैयार किये। दमदमा साहब को छोड़ने से लेकर ज्योति में ज्योति समाने के समय तक आप तथा आपके साथ रहने वाले शिष्य जिनकी संख्या कई वार दो सौ से तीन सौ तक होती थी, खन्डे का अमृत तथा केशाधारी सिक्खी का प्रचार करते रहे। बाबा बन्दा के साथ भेजे गये हजूरी सिंहों ने पुनः पंजाब में आकर इसका तीव्रता से प्रचार किया । बाबा बन्दा के बलिदान से पहले ही सिक्खों में दो दल बन गये थे। बुन्दई सिक्ख तथा तत्त्व खालसा। बुन्दई सिक्खों ने अपनी रीति मर्यादा पृथक् कर ली थी। पृथक् महन्त बना लिये थे। सन् १७३४ में तत्त्व खालसा के भी दो दल हो गये । बूढ़ा दल तथा तरुण दल । दलों के जत्थेदार नवाब कपूरसिंह, बाबा जस्सासिंह, बाबा सुद्धासिंह आदि खण्डे का अमृत छकाते और सिंह बनाते थे। १७६५ में सिक्खों ने सरहिन्द की सूबेदारी का प्रदेश जीत कर बांट लिया । इस समय सब मिसलों, जत्थों एवं पत्तीदारों के नेता सम्मिलित थे। प्रत्येक जत्थेदार नेता को उसके सिपाहियों की गिनती के भाग के अनुसार भूमि मिली । सवारों ने अन्धाधुन्ध घोड़े भगा-भगाकर हर गांव में अपना चिन्ह रखकर अपने इलाके थाप लिये । रात ही रात निर्धन से निर्धन सिक्ख सैनिक जागीरदार बन गये । कई मनचले कई-कई गांवों के स्वामी सरदार हो

गये। तप्पों पर अधिकार करने वाले राजा बने। स्वामित्व स्थापित करने का यह फल निकला कि स्थान-स्थान पर जाकर सिक्खी को फैलाने वाले नेता, अपनी नई प्राप्त की हुई जायदादों के प्रबन्ध में लग गये और उन्होंने धर्म प्रचार का काम बिल्कुल ही छोड़ दिया।

सम्पत्तियों तथा धन-धान्य से प्राप्त ऐश्वर्य भोगने के लिये लगभग सारे ही नये बने जागीरदारों, सरदारों तथा राजाओं ने मदिरा पीना, कई विवाह करना और मुसलमान नवाबों की नकल, मुसलमान रंडियां रखनी आरम्भ कर दीं।

सिक्ख धर्म के प्रचार का काम उदासियों, निर्मलों, गुरुवंशी सोढ़ियों, वेदियों तथा सरकारी जागीरें प्राप्त करने वाले महन्तों और पुजारियों के हाथ आ गया। इसी कारण सिक्खों की मर्यादा में महाराजा रणजीतसिंह के समय में कई ऐसे परिवर्तन आ चुके थे जो सिक्खों के ऊंचे उद्देश्यों के बिल्कुल विपरीत थे।

निर्मले तथा उदासी अपने ही ढंग से सिक्खी का प्रचार करते थे। सोढ़ियों तथा वेदियों ने पृथक् पृथक् प्रदेश तथा तप्पों को बांट कर अपनी व्यक्तिगत सिक्खी बढ़ा ली थी। साधारण ग्रामीण जनता, नगाह, सखीसरवर, शेख हैदर, पीर बनोई आदि मुसलमान पीरों की समाधों पर जाकर मन्नतें मानती, चूरमा बांटती तथा बकरे चढ़ाती थी।

सिक्ख जनता के सामाजिक जीवन में वही कुरीतियां—जिनमें से गुरुओं ने उन्हें निकाला था—फिर आ गई थीं। इसके पश्चात् सिक्ख राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक दृष्टि से गिरते ही चले गये।

लाहौर दरबार की सैनिक नौकरी करते समय गुरु रामसिंह जी ने समय की परिस्थितियों को देखकर यह परिणाम निकाला था कि सिक्ख जनता का धार्मिक पतन तथा सामाजिक कुरीतियां किसी दिन सिक्खों के राज्य को नष्ट करने का कारण बनेंगी। सरल स्वभाव के अनुसार उन्होंने मन में आई बात कहनी आरम्भ की। परिणाम की चिन्ता न करते हुये वह अपने मन के भाव प्रकट कर देते। महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के पश्चात् शाह मुहम्मद के कथनानुसार, "जो बैठे गद्दी उसको मार देते चलती नित्य तलवार दरबार मियां" वाली गुण्डागर्दी फैल गई। कंवर नौनिहालसिंह को बेईमान डोगरों ने तथा महाराजा शेरसिंह और कुंवर प्रताप सिंह को, राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए कुल का नाश करने वाले, षड्यंत्रकारी सन्धावालिये सरदारों अजीतसिंह तथा लेहनासिंह ने मार दिया। इस

पर आपने निर्भीक होकर यह कहना आरम्भ कर दिया कि "सिक्ख सरदार तथा खालसा अब म्लेच्छों जैसे नीच कर्म करने लग गये हैं, यह मरेंगे, डूबेंगे तथा गलेंगे और अपने साथ सीधी-सादी सिक्ख जनता को भी खारे समुद्रों में डुबो देंगे।" सैनिक अफसरों ने इसपर रुष्ट होकर कई बार आपको दंड भी दिये, परन्तु आप बराबर यही कहते थे कि "सिक्ख अपने उच्च आचरण से गिर चुके हैं, अब इनका अंत अवश्य होगा।" यह ईश्वरी आदेश का आवाह्न था, तथा सच्चे दिल की गहराइयों से निकली हुई एक दुःख भरी कूक थी। परमात्मा का भय रखने वाले मनुष्यों ने इसको सत्य समझा। सूझ-बूझ रखने वालों ने यह कूक सुन कर इस पर विचार किया। संकीर्ण विचारों वाले लफंगे तिलंगों ने आपको पागल, बावला आदि कहना आरम्भ कर दिया। आपके बहनोई काबुलसिंह ने आपको तोप के साथ जंजीरों से जकड़ दिया। आपने दुखी होकर काबुलसिंह को कहा कि तू भी तोप के साथ ही मरेगा।

अंग्रेज तथा सिक्खों की पहली लड़ाई दिसम्बर १८४५ से कुछ समय पहले आप गांव में छुट्टी पर आये हुये थे। बुलावा आने पर आप भी लाहौर में उपस्थित हुए। वहां आपने सिक्ख राज्य के आते हुए विनाश को देख कर हर समय यह शब्द उच्चारण करने आरम्भ किये—"हा हा रे क्यों गाफल सोया"। रेजिमेन्ट में भजन बन्दगी करने वाले पच्चीस-तीस सज्जनों की आपस में अच्छी मित्रता थी। जब लाहौर से फौजों ने कूच की तैयारियां कीं तो भजन बन्दगी करने वाली टोली ने कड़ाह प्रसाद (हलवा का प्रसाद) तैयार किया तथा प्रार्थना के लिये उपस्थित हुए। आपको जीत के लिए प्रार्थना करने के लिये कहा गया। प्रार्थना करने से पहिले आप सूर्य्य की ओर मुख करके खड़े हो गये और एक पांव के बल नाम का जप करने लगे। पर्याप्त समय तक इसी प्रकार खड़े खड़े एक-दम ही भूमि पर उलटे गिर पड़े। चेत आने पर उठ कर साथियों से कहने लगे कि मुझे तो यह प्रतीत होता है कि खालसा की जीत नहीं है।

आपकी रेजिमेन्ट ने युद्ध में सम्मिलित होने के लिये हरिकेपत्तन (घाट) पर आकर डेरे लगाये। यहां भी आपने यह कहा कि "सिक्खों के भाग्य में पराजय है। "क्यों व्यर्थ मरने लगे हो, तुम्हें तुम्हारे नेता मौत के मुख में ढकेल रहे हैं। तुम्हारे साथ बुरी होगी।" यह कहकर उन्होंने अपनी बन्दूक सतलुज में फेंक दी। इसके पश्चात् आप अपने गांव को चल पड़े। युद्ध के कारण घाट बन्द था। मल्लाहों ने किश्ती

न छोड़ी । आपने दरिया में छलांग लगा दी और तैर कर पार करके अपन मामा के पास लुधियाना में आ गये । आपका मामा हरिसिंह ठेकेदारी का कार्य करता था और धनवान् पुरुष था । उसका पुत्र खजानसिंह साधु तथा दैवी स्वभाव वाला था । कुछ दिन लुधियाना में रहकर आप भैंणी आ गये ।

मुदकी नामक स्थान पर १८ दिसम्बर १८४५ ई० को अंग्रेजों के साथ सिक्ख सेना का युद्ध हुआ । आपका बहनोई काबुलसिंह गोलन्दाज इसी युद्ध में तोप के गोले से मारा गया । लाहौर दरबार के बड़े-बड़े स्तम्भों के पारस्परिक षड्यंत्र, अंग्रेजों से गुप्त गठजोड़, हिठाड़ सतलज के सिक्ख रईसों, राजाओं, महाराजाओं, सरदारों की अंग्रेज सरकार की ताबेदारी तथा जाननिसारी ने लाहौर दरबार की बादशाही को जड़ों से उखाड़ दिया । इस जंग के समय महारानी जिन्दा तथा लाहौर दरबार की सेना के बड़े जरनैल लालसिंह तथा तेजसिंह सिक्ख फौजों को अंग्रेजों से लड़ा कर मरवा देना चाहते थे । बारूद के जगह पर सरसों भेजी गई । लालसिंह ने अपनी सेना दरिया के इस पार रोक ली । जब घमासान युद्ध में अंग्रेजों की पराजय होने लगी और वे पीठ दिखा कर भागने लगे तो सरदार पहाड़सिंह फरीद-कोट वाला, उन्हें वापिस ले आया । भागते समय जब सिक्ख दरिया को पार करने लगे तो लालसिंह ने नावों का पुल तुड़वा डाला । वास्तव में राजाओं को राज्य प्यारे होते हैं और राजनीतिक नेताओं को शक्ति तथा शासन । इन्हें प्राप्त करने तथा स्थिर रखने के लिये वह किसी भी प्रकार के अनिष्ट कर्म से नहीं डरते ।

पराजित होकर आये हुए साथी तथा घायल सरदार काहनसिंह गुरु रामसिंहजी को लुधियाना शहर में मामा हरीसिंह के स्थान पर मिले ।

घर लौट कर आप एक वर्ष तक भजन बन्दगी में लगे रहे । अगले वर्ष बैलों की नई जोड़ी लेकर सुक्खू जाट के साथ दो वर्ष तक साझे में खेती की । संसार का सबसे पवित्र व्यवसाय कृषि है । कृषक संसार को अन्न उत्पन्न करके देता है । उसकी उत्पन्न की हुई कपास के कपड़े से संसार अपना तन ढांकता है । उससे लगान और अन्य कई प्रकार के कर लेकर सरकारें अपना शासन चलाती हैं । इस व्यवसाय में धोखे का कोई स्थान नहीं । इस काम में दिन-रात एक करके श्रम करने से ही उदरपूर्ति हो सकती है । इस काम को आरम्भ करने के लिये कम से कम दो बैल,

एक भैंस अथवा गाय, एक रहने का घर, एक ढोरों के लिय घर, गृहणी, तथा कृषि के बहुत से औजारों की आवश्यकता होनी है। बलवान् शरीर, उच्च साहस, एक दूसरे से मिल-जुल कर काम करने की आदत अच्छे किसान के गुण होते हैं। यह गुण आप में उपस्थित थे। कड़े काम से आप कभी नाक भौं नहीं चढ़ाते थे। उस समय की कृषि का कठिन-तम काम चरसा पकड़ना था। अतः आप बड़ी प्रसन्नता से कई कई पहर चर्सा पकड़ते। गड्डा भी रक्खा हुआ था। आपके छोटे भाई अन्य कृषकों की भांति किराये पर गड्डा भी चलाते एवं व्यापार भी कर लेते। पुआहद से गुड़-शक्कर जंगल के प्रदेश की ओर ले जाते तथा वहां से चने, बाजरा, गवार, मूंग, मौठ आदि लाकर इधर बेच देते। घर के दोनों धन्धे खेती तथा कारखाना आपके आने से खूब चलने लगे।

अगले साल आपने राइयां के नम्बरदार जीवनसिंह के साथ साझे मे खेती की। दो काम करने वाले रखे, एक ब्राह्मण था, दूसरे का नाम रामसिंह था। आपके पास एक सुन्दर तथा पला हुआ बछड़ा था, जिसका नाम आपने तक्खीनाग रक्खा था। ब्राह्मण कामचोर था। जब भी आप उसको काम के लिये कहते थे, वह आपसे अवश्य झगड़ता था। दूसरा भला पुरुष था, दिल से काम करता तथा आपका अत्यन्त सम्मान रखता। आप दिल लगाकर खेती करते थे। प्रातःकाल ही खेतों में चले जाते और सायंकाल लौटते। माई जस्सां घर का सारा काम करती थी। घर आये बैल संभालती और ऋतु अनुसार गुड़-चने के लड्डू, उबले हुए ग्वारे का खाना तथा पकाये हुए मोठ, बाजरे का दलिया देती थी। आधी रात समाप्त होते ही बैलों और गाय भैंसों को चारा डालती, ताकि हल जुटने तक बैल जुगाली कर लें। माई जस्सां ढोर-डंगर संभाल कर चक्की पीसनी आरम्भ कर देती। पक्षियों के कोलाहल तथा ऊषा से पूर्व दस पन्द्रह सेर आटा पीस लेती व दाना दल लेती। पश्चात् दही बिलोती, गाय भैंस दुहती तथा रोटियां पका कर हल चलाने वालों के पास ले जाती।

वास्तव में किसान की खेती गृहिणी के सिर पर चलती है। यदि वह काम-चोर, कलहिनी, चुगलखोर, अन्न न संभालने वाली हो, तो कृषक बरबाद हो जाता है। ऐसा किसान दुखी होकर या तो साधु बन जाता है या उसको घर का खर्च चलाने के लिये भूमि रहन रखनी अथवा बेचनी पड़ती है। स्त्री सुई से घर उखाड़ देती है तथा आदमी फावड़े से भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता। माई जस्सां एक आदर्श किसान की सहायिका-संगिनी थी। उसके लिये अपना पति परमेश्वर था तथा पति का घर बना बनाया स्वर्ग। पति

के आदेश में रहना परमेश्वर की भक्ति थी और पतिदेवता को सुख देना जीवन का मन्तव्य । चार पांच वर्ष अच्छी खेती करने से गुरु रामसिंहजी के पास काफी पूंजी हो गई । इससे आपने गांव में ही ग्रामीण भाइयों की आवश्यकता की वस्तुओं, मोटा सादा कपड़ा, खल, बिनौले, नमक, तेल, गुड़, शक्कर आदि की दुकान खोल दी । वस्तुएं बढ़िया होती थीं । लाभ कम लेने के कारण आस-पास के गांवों के लोग भी आकर अपनी आवश्यकता की वस्तुयें यहां से लेते ।

खेती करते समय आपने भजन-वन्दगी की ओर भी बहुत ध्यान दिया । 'हाथ कार की ओर, दिल यार की ओर' वाली कहावत सच कर दिखाई । खेती के काम से निवृत्त होकर आप शेष समय भजन करते । नींद बहुत कम कर दी और इस पर काबू पा लिया । किसी की खेती की एक बाली अथवा एक पत्ता भी अपने घर नहीं आने देते थे । एक दिन आपकी बेटी चढ़तसिंह नामक किसान के खेत से साग तोड़ कर ले आई, वह आपने वापिस करवा दिया । एक दिन आपके ताऊ का पुत्र किसी के खेत से बालें तोड़ लाया, उसी समय लौटा दीं । नम्बरदार जीवनसिंह भला मनुष्य था, वह आपको भजनीक महापुरुष समझ कर आसान काम पर लगा देता । खेती का काम बड़ा ही कड़ा काम है । हर समय कुछ न कुछ करते ही रहना पड़ता है । नित्यप्रति मिट्टी से कुश्ती लड़ना है, परन्तु फिर भी किसान समय निकाल कर हास-विलास कर ही लेते हैं । सारा दिन हल चला कर जब संध्या को पटेला चलाते समय टिटकारथी देते हैं, तो बुद्धिमान् मनुष्यों का कहना कि "पटेले पर चढ़ा किसान अपने को बादशाह समझता है ।" एक बार आप चौबैल के पटेले पर साथ खड़े पटेला चला रहे थे कि स्वाभाविक ही पैर नीचे जा पड़ा । टांग के पास चोट लगी, रुपये के बराबर दाग पड़ गया, रक्त निकल आया । कातिक के दिन थे और बोने का समय । आप लुधियाना में अपने मामा हरीसिंह के पास चले गये और अगले चैत की कटाई के समय लौट आये ।

भैंणी तथा राइयां दो गांव हैं । इनमें दूरी नहीं, परन्तु नाम पृथक् हैं । भैंणी का हमीरा जाट जिसके मन्द-कर्मों के कारण आपने राइयां के जाट नम्बरदार जीवनसिंह के साथ खेती की थी, मर गया । गांव के लोग शंकावादी होते हैं । उन्होंने विचार किया कि हमीरे की मृत्यु का कारण आप का शाप है । भैणी के लोग लहनासिंह तथा नम्बरदारों ने एकत्रित हो कर प्रार्थना की कि आप भैणी में आ जाएं । आपके बन्दगी करने से गांव का भला होता है । लहनासिंह आपका बाल्या-

वस्था से ही साथ खेलने वाला मित्र था। आपने हंस कर उसको कहा, "लहनासिंह निभाओगे भी ?" लहनासिंह ने कहा कि मेरे तीन स्थान हैं। जहां दिल चाहे मकान बनवालो। आप वापिस भैणी आ गये और नया मकान बनवा लिया। मकान बनाने के पश्चात् आपने अपनी दोनों सुपुत्रियों के विवाह किये। बड़ी लड़की का खोटे गांव में विवाह हुआ और छोटी का नारंगवाल में। इस प्रकार ५ अथवा ६ साल व्यतीत हुए। आपके घर एक सुपुत्र ने भी जन्म लिया था, जो फौज से लौट कर घर आने से पहिले ही छोटी अवस्था में कालकवलित हो गया था।

इसके अनन्तर का वर्णन 'सतगुरु विलास' (अप्रकाशित पुस्तक) में इस प्रकार दिया है :—

"फिरंगियों ने फिरोजपुर में छावनी डालनी आरम्भ की। साथ ही सड़कें बनने लगीं। मामा हरीसिंह का पुत्र खज़ानसिंह वहीं मिस्त्री था, उसने अपने रिश्तेदार बुलवा लिये। श्री सतगुरुजी भी जा पहुंचे। फिरोजपुर से बुलावा आया। खजानसिंह के घर सारा परिवार एकत्रित हुआ। सब का एक स्थान पर ही खाना होता है। श्री गुरुग्रन्थ-साहब का भी प्रकाश रहता है। सिंह पाठ भी करते रहते हैं।...दीवान दोनों समय होता है........आशा की बार लगती, सब सुनते। रात को शब्द भी पढ़े जाते ढोलक के साथ ...। स्नान अमृतसमय (प्रातःकाल) करते.. स्वयं ही आशा की बार भी पढ़ लेते। रहरास के समय रहरास पढ़ते, आरती सोहिला पढ़ कर प्रार्थना करके विराज जाते।"

यह वायु मंडल आपके महान् व्यक्तित्व के प्रभाव से उत्पन्न हुआ था। आपके फिरोजपुर जाने का समय १८५०-१८५१ ही प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त आप का नित्यकर्म इस प्रकार लिखा है। "सवा पहर रात रहती तब आप उठ कर स्नान करके, समाधी लगा कर पद्मासन में बैठते। रसना का भजन करते।"

फिरोजपुर रहते समय आपने स्वयं भजन बन्दगी की, तथा अन्य संगी साथियों को भी इस ओर लगाया। भाई तख्तसिंह जी (सिक्ख कन्या महाविद्यालय फिरोजपुर वाले) न लेखक को बताया था कि फिरोज-पुर रहते समय भजन बन्दगी करने के विषय में गुरु रामसिंह जी के सम्बंध में यहां बहुत सी बातें प्रसिद्ध हैं। जैसे—"आप आधी रात होते ही अपने डेरे से निकल कर दरिया पर जाते, स्नान करते और भजन बन्दगी में लग जाते। भजन करते समय आपके मुखमंडल के चारों ओर अग्नि अथवा

प्रकाश के चक्कर घूमते दिखाई दिया करते थे।" आपकी देखादेखी तथा प्रेरणा से बहुत से सिंहों ने भजन बन्दगी आरम्भ कर दी थी।"

आपके मामा हरीसिंह का आपके साथ बहुत प्रेम था। मामा का पुत्र खजानसिंह और आप तो बिल्कुल एक रूप थे। हरीसिंह ने आपको बन रही इमारतों की निगरानी के काम पर लगाया हुआ था। डगरू का बंगला तथा मुक्तसर की सराय आपकी निगरानी में ही तैयार हुए। आपने मुक्तसर में रहते समय ऐतिहासिक गुरुद्वारों की मरम्मत अपने खर्च से करवाई। फिरोजपुर के किले का काम सन् १८५५ में समाप्त हो गया। तदनन्तर आप फिरोजपुर से घर लौट आये। सतगुरु विलास के कर्ता ने लिखा है कि "असाढ़ के महीने में आये, पहिले दक्षिण की ओर द्वार था, फिर सहन की ओर दीवार बना कर पहाड़ की ओर द्वार लगाया। दांयें ओर दुकान डाली, बांईं ओर लंगर के लिये थोड़ी सी जगह बनाई। जहां चबूतरा है, वहां थोड़ी सी ऊंचाई बना कर बैठ कर भजन करने लगे। खेती का भी कुछ काम किया करते।"

दैववश इन्हीं दिनों खजानसिंह मर गया। आप को खजानसिंह की मृत्यु से बहुत ही दुःख हुआ। मामा हरीसिंह गंगा में खजानसिंह के फूल चढ़ाने गये और मार्ग में ही काल-कवलित हो गये। अब आपने मामा के कुटुम्ब की हर प्रकार की देखरेख का भार भी अपने ऊपर ले लिया। आपकी मामी रामी बहुत सुघड़ थी। हरीसिंह काफी धन छोड़ कर मरा था। मामी ने आप को अन्न का व्यापार करने के लिये कहा। सतगुरु विलास के पृष्ठ ८६ पर लिखा है, "धन मुझ से ले जाओ, जो लाभ हो, आधा-आधा। अनाज खरीदने के लिये श्री सतगुरु जी ने रणसिंह को भेजा। पांच छः मन गेहूं मिला चना था, साढ़े चार मन गेहूं थी, आठ सेर घी था।"

यह वह समय था जब खालसा राज्य के नष्ट हो जाने के पश्चात् लाहौर दरबार की सेनायें तोड़ दी गई थीं। गोरे, गोरखे, पूर्बिये तथा मुसलमानों की फौजों ने पंजाब की छावनियों में आकर डेरे लगा दिये थे। अंग्रेजी सरकार ने प्रत्येक देश की नई सरकार की भांति पुराने परिवारों तथा व्यक्तियों के मुकाबले पर अपने बनाये हुए आज्ञाकारी नये परिवार तथा नये व्यक्ति उभारने का काम आरम्भ कर दिया था। सरकारों के पास अपने स्वामी-भक्त परिवार अथवा जीहुजूर कहने वाले व्यक्ति पैदा करने के लिये चार बड़े साधन होते हैं। १—सरकारी नौकरियां, २—ज़मीनें तथा जागीरें, ३—सरकारी इमारतों के ठेके तथा ४—शासन की आवश्यकता के लिये वस्तुएं ला

पुस्तक मिलने के पते—

१—सैंट्रल बुकडिपो
गुलाबसिंह एंड सन्स प्राइवेट लि०
६, मथुरा रोड, नई दिल्ली।

२—आत्माराम एण्ड सन्स
काश्मीरी गेट, दिल्ली।

३—नव-साहित्य-मण्डल
सब्जी मन्डी, दिल्ली।

४—इंडियन यूनिवर्सिटी पब्लिशर्स (प्राइवेट) लि०
पो० बा० नं० १११०, काश्मीरी गेट, दिल्ली—६।

ईस्टर्न प्रिंटिंग प्रेस, निकल्सन रोड, दिल्ली में श्री मुलखराज सूरी मैनेजर के प्रबन्ध में छपा तथा स० नाहर सिंह एम० ए० गांव नंगल खुरद, डा० पक्खोवाल जि० लुधियाना, पंजाब ने प्रकाशित किया।

कर देने का काम। अंग्रेजों ने अपने पिट्ठुओं के लिये यह काम देने आरम्भ कर दिये। आम तौर पर इन को प्राप्त करने वाले ६० प्रतिशत पेशावर और पुश्तैनी चाटुकार चले आ रहे होते हैं। ये हर नई सरकार के साथ कुत्ते की चीचड़ी की भांति चिपट कर अपना पेट भरते हैं। यह विशेष वर्ग धीरे-धीरे प्रजा तथा शासन में गलतफहमियां उत्पन्न कर देता है। परिणाम यह होता है कि लोगों की सहायता से बनी सरकार और जनता में पारस्परिक घृणा हो जाती है। महाराजा रणजीतसिंह की सेनाओं के अफसर तथा सैनिक, पूर्व सिक्ख नरेश का नाम ले-लेकर बिलबिलाते फिरते थे। कई साधु बन कर दिन काटने लगे। कई घरबार छोड़ कर पहाड़ों पर चले गये और अधिकांश ने हलों की हथलियां पकड़ कर खेती करनी आरम्भ की। हारे हुए, परन्तु आत्म-सम्मान वाले किसी ऐसे प्रतापी मनुष्य तथा सुसमय की प्रतीक्षा करने लगे, जिसके नेतृत्व में वह पुनः गोभक्षक विदेशी अंग्रेजों के शासन से टक्कर लेकर अपनी मातृभूमि की पराधीनता के बन्धन काट सकें, चाहे इसके लिये उन्हें अपने प्राणों का बलिदान ही क्यों न देना पड़े।

अंग्रेजों ने पंजाब पर अधिकार जमाते ही अपना बनाया कानून "भारतीय-डंडसंहिता" (ताज़ीरात-हिन्द) पंजाब में लागू कर दिया। नये ढंग के न्यायालय स्थापित कर दिये। भूमि का प्रबंध आरम्भ हो गया। छोटी सरकारी नौकरियों तथा पटवारों, मुन्शी और क्लर्क पैदा करने के लिये सरकारी स्कूल तथा ईसाई प्रचारकों के मिशिन स्कूल खोल दिये। अंग्रेजी पहरावे की रीति चला दी। मण्डियों में विदेशी कपड़ा ले आये। शासन की ओर से डाकखाने खोल दिये। विदेशी ढंग की चिकित्सा के हस्पताल खुलने लगे। पंजाबियों को तथा विशेष कर सिक्खों को राजनीतिक, मानसिक, तथा सामाजिक रूप से दास बनाने के लिये जाल फैलाने आरम्भ कर दिये गये।

भारतीय भूमि की मिट्टी को यह वरदान है कि यहां के रहने वाले आदि काल से ही उच्च आचरण, अथवा परमात्मा का भजन करने वाले महापुरुषों का सम्मान करते चले आये हैं। जन-साधारण के दिलों में सांसारिक राजाओं की अपेक्षा अध्यात्मिक पुरुषों का सम्मान, प्रेम अथवा भय अधिक होता है। दिल्ली के उच्च सिंहासन पर विराजमान बादशाहों के द्वार की अपेक्षा प्रेमोन्मत्त संतों के आसपास दर्शन करने वालों की भीड़ कई गुणा अधिक रहती है। भक्ति सेवा और भजन करते हुए माथे पर प्रकाश, आंखों में मस्ती, हृदय में जीव मात्र के लिये दया, अत्याचारियों के प्रति घृणा तथा उनके सुधार की भावना, सहज ही उत्पन्न हो जाते हैं। इस पद

पर पहुंचे हुए मनुष्य के पास आत्मिक शान्ति की खोज करने वाले जिज्ञासुओं, परमात्मा और उसके प्रकाश के दर्शन करने वाले अभ्यासियों, मन की आकांक्षाओं, धन-दौलत, सांसारिक सम्मान प्राप्त करने वाले अभिलाषियों का आना जाना आरम्भ हो जाता है । भारत में परंपरा से चली आई यह रीति भारतीय जनता के जीवन का आधार है ।

नाम का जप करने एवं भजन-बन्दगी करने की दीक्षा गुरु रामसिंह जी ने चौदह-पन्द्रह वर्ष पहिले गुरु बालकसिंह जी हजरोवालों से ली हुई थी। यह वह समय था जब आपकी रेजिमेन्ट महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के पश्चात् एक बार लाहौर से इस दिशा को गई थी । आपके साथ और पच्चीस-तीस सिंहों ने भी इस समय गुरु बालकसिंह जी से भजन बन्दगी की दीक्षा प्राप्त की थी ।

गुरु रामसिंह जी के पवित्र जीवन के समाचार फैलने आरम्भ हुये। लोग दर्शन करने, वचनवाणी सुनने और शिक्षा लेने आते। लाहौर दरबार की सैनिक नौकरी के समय के पुराने साथी आपको आकर मिलने लगे। इस पर आपके हृदय में गुरु की सिक्खी फैलाने, और श्री गुरु ग्रन्थसाहिबजी तथा श्री गुरु गोविन्दसिंह जी की वाणियों को गांवों की रहने वाली जनता में प्रचार करने की तीव्र इच्छा हुई। इन महान् कार्यों की पूर्ति के लिये आपने बड़े साहस तथा दृढ़ता से पग उठाया। आपने बाबा जवाहरसिंह जी से अमृत छक कर अपनी रहत मर्यादा का सुधार किया। कुटुम्ब के सब जीवों को रहत मर्यादा में पक्के रहने का आदेश दिया तथा इसे एक आदर्श सिक्ख परिवार का रूप दिया ।

गम्भीर चिन्तन के पश्चात् आपने यही तत्त्व निकाला, कि देश की उन्नति के लिए, विदेशी शासन की दासता से मुक्ति प्राप्त करना अति आवश्यक है । स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये ग्रामीण जनता को जागृत करके, उनमें तन-मन तथा धन के बलिदान करने का साहस तथा उत्साह उत्पन्न किया जावे। जनता के सामाजिक जीवन को ऊंचा किया जावे एवं उनमें बन्धु-भाव भरा जावे। ताकि राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने पर वह पुनः राष्ट्र तथा देश का विनाश करने वाले कुकर्मों, रिशवतें लेनी, कौटुम्बिक पक्षपात तथा अन्याय आरम्भ न कर दें। शुभ गुणों वाले पुरुष उत्पन्न करने के लिये, सबसे पहिले धर्म प्रचार और शिक्षा को फैलाने तथा जनता को सूझ-बूझ देने का काम बुनियादी आवश्यकतायें समझी गईं । इस महान कार्य के लिये बैसाखी का पवित्र दिवस निश्चित किया गया ।

नामधारी आन्दोलन का विकास

धर्म प्रचार के छः वर्ष

(सन् १८५७ से १८६३ तक)

नामधारी सिक्खों के विश्वासानुसार गुरु गोविन्दसिंहजी महाराज नांदेड़ में परम ज्योति में नहीं समाये। तथा उन्होंने जीवित ही घोड़े पर सवार होकर कनातों के अन्दर तैयार की गई चिता की अग्नि में प्रवेश नहीं किया। वे इस विषय में आज से सवा सौ वर्ष पहिले, महाकवि संतोषसिंह जी लिखित पुस्तक "गुरु प्रताप सूर्य्य" को प्रमाण मानते हैं।*

वह मानते हैं कि गुरु गोविन्दसिंह जी ने गुरु बालकसिंहजी हजरोवाले को दर्शन देकर गुरु गद्दी दी। इसलिये वह प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार ज्ञानी ज्ञानसिंह जी की पुस्तक 'पंथप्रकाश' में से निम्नलिखित उदाहरण देते हैं—

"बालक मृगेश ते विशेष उपदेश नाम,
यदि नर नारी ले अपारो भव ते तरे।
और इलहाम करतार कई बार दयो,
नाम पे अधार कर जीवन का तू खरे।

---

*नोट:—इतिहासकार न तो जज होता है और न ही वकील। उसने जो कुछ लिखना है, अपनी ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर नेक नियत के साथ बिना किसी पक्षपात के लिखना है। इति....ह....आस; "ऐसा निश्चय से था" इस नियम को सम्मुख रख कर वह लिखता है, चाहे उसका धार्मिक विश्वास तथा सामाजिक दृष्टिकोण कुछ भी हो। कैमरे की चित्र लेने वाली प्लेट की भांति ठीक-ठीक चित्र लेने के लिये उसको हर प्रकार की दुर्भावनाओं से ऊंचा होना आवश्यक है। इतिहासकार का मन्तव्य "ऐसे होना चाहिये अथवा ऐसे होना चाहिये था" को लिख कर मनोभाव दिखाने का नहीं होता, बल्कि वह "ऐसे हुआ" अथवा "ऐसा है" बता कर अपनी भाषा में घटनाओं को अंकित करके जनता के सामने रखता है।

भारत से ब्रिटिश सत्ता की जड़ें उखाड़ने के लिये स्वतंत्रता संग्राम का प्रथम ध्वज; जो श्री गुरु रामसिंह जी महाराज ने १ बैसाख सम्वत् १९१४ तदनुसार १२-१३ अप्रैल १८५७ को श्री भैणी साहिब जिला लुधियाना (पंजाब) में स्थापित किया ।
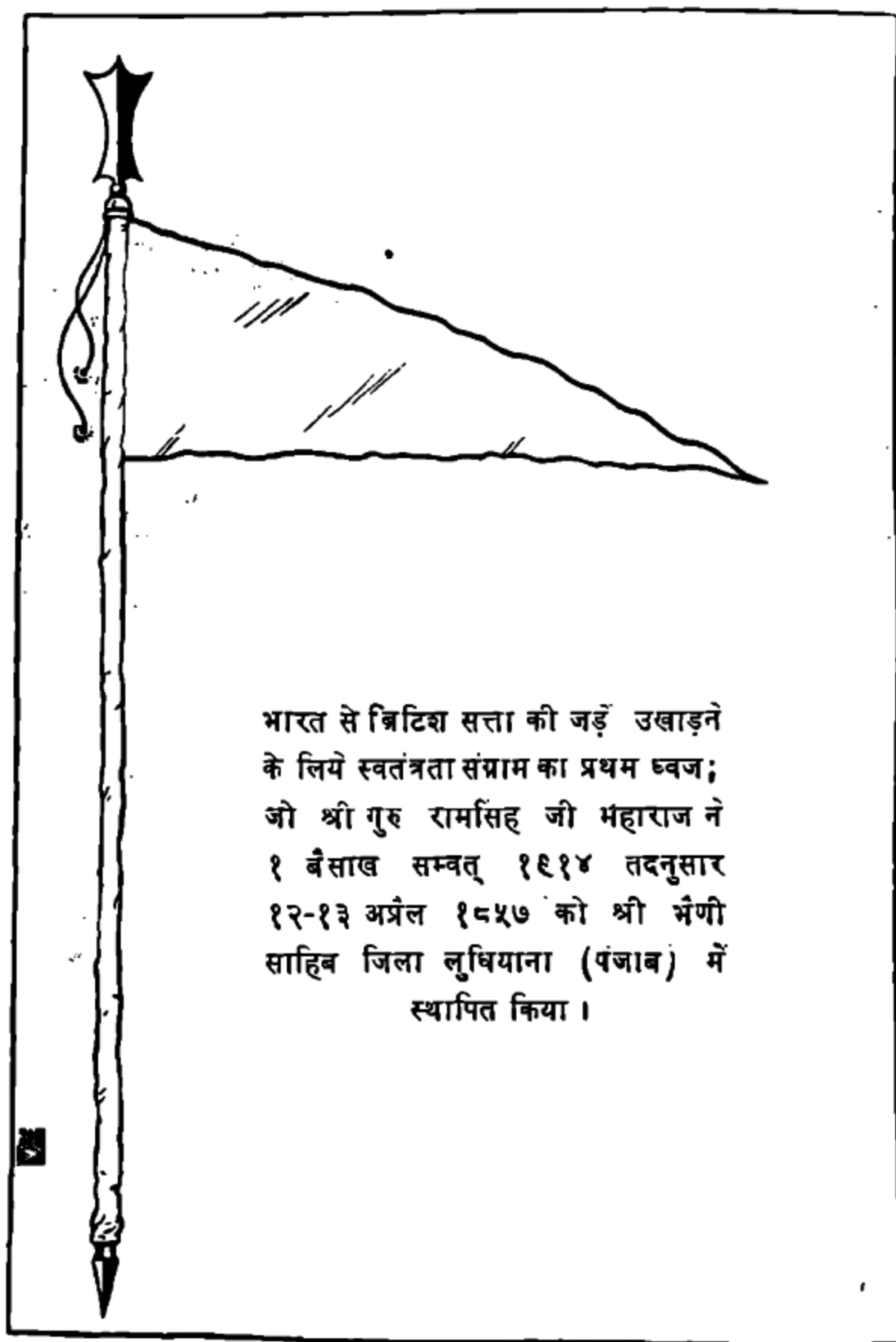
एपे गुरु दशम दर्श दें जु कह्यो ताहि,
मेरे अवतार अंश रामसिंह ह्वै भरे।

बाहि हेतु ताहि और काहि मानु नाहि,
शकत रखाई निज गुरू आक दृढ़ ये धरे।"

गुरु बालकसिंह जी का जन्म गांव छोही जिला अटक में हुआ। युवा अवस्था होने पर आप हजरो आ गये। आप भजन-बन्दगी करने वाले त्यागी महापुरुष थे।

आपने युवा अवस्था में ही सिक्ख धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया। गुरु रामसिंह जी ने आपके दर्शन हजरो में किये तथा आपसे नाम दीक्षा एवं भजन बन्दगी का आशीर्वाद प्राप्त किया। साथ ही गुरु बालकसिंहजी ने गुरु रामसिंहजी को गुरुगद्दी देकर धर्म प्रचार की आज्ञा दी। १४-१५ वर्ष के भजन करने तथा तपस्यायुक्त जीवन व्यतीत करने पर गुरु रामसिंहजी ने गुरु बालकसिंह जी के आदेशानुसार निष्काम सेवा को अपने जीवन का लक्ष्य बना कर, जनता में जागृति लाने के महान् कार्य को आरम्भ किया।

१ बैसाख सम्वत् १९१४ (अथवा अप्रैल १८५७) वाले पवित्र दिवस पर गुरु रामसिंह जी ने अपने गांव भैणी में ही खण्डे का अमृत तैयार किया। भाई कान्हसिंह निहंग, लाभसिंह रागी, भाई आत्मासिंह, भाई निर्णासिंह, तथा भाई सुद्रसिंह इन पांचों को अमृत छका कर सिक्ख धर्म के मुख्य सिद्धान्तों सिक्ख धर्म की रहत-मर्यादा तथा आचरण पर दृढ़ रह कर जीवन व्यतीत करने की शिक्षायें दीं। इस समय जनसाधारण को खण्डे का अमृत छकाने की रीति लगभग लुप्त हो गई थी। खण्डे के अमृत के अभिलाषी सज्जन बड़े बड़े गुरुद्वारों, अकाल तख्त अमृतसर, आनन्दपुर साहिब, मुक्तसर साहिब, दमदमा साहिब, पटना साहिब तथा नान्देड़ साहिब ही जाकर अमृत छकते थे। स्त्रियों को खण्डे का अमृत बिल्कुल नहीं छकाया जाता था। गांवों में अमृत का 'बाटा' तैयार करने के लिये पांच प्यारे ही मिलने कठिन थे। साथ ही साथ तख्तों के पुजारी तथा इन गुरुद्वारों के महन्त यह नहीं चाहते थे कि अमृत प्रचार करने की इस प्रकार स्वतन्त्रता हो; क्योंकि इससे उनकी अमृत छकाने की दक्षिणा अथवा आय में घाटा होता था। आपने उस समय के पुजारियों, महन्तों, सोढियों, वेदियों, निर्मलों तथा उदासियों आदि के विरोध की परवाह किये बिना गांव में रहते, खेती आदि के कामों में लगे हुए, भले पुरुषों को अमृत छकाने के लिए तैयार किया।

हिन्दुओं तथा केशाधारी सिक्खों को केवल परमात्मा पर भरोसा रखकर जीवन व्यतीत करने का उपदेश दिया। मुसलमान पीरों-फकीरों के मकबरों तथा मज़ारों पर जाकर मन्नतें मानने और बकरे काटने को अशुभ रीति के त्याग का प्रचार किया। माता, गुग्गा, भैरों आदि के स्थानों तथा मूर्ति पूजा का त्याग करने की शिक्षा दी। आपस में मिल बैठने, वाणी पढ़ने-सुनने तथा धारण करने के लिये जनता को प्रेरणा दी। गुरु ग्रन्थसाहिब की वाणी के पाठ करके भोग डालने का आदेश दिया। हरएक सिक्ख को कम से कम ५ वाणियां कण्ठस्थ करने तथा पाठ करने की प्रेरणा दी। नाम जपने, भजन-बन्दगी करने पर ज़ोर दिया। एक प्रेमी सिक्ख विद्वान् को श्री हुज़ूरसाहब अविचलनगर दक्षिण में गुरु गोविन्दसिंह जी के समय से चली आ रही रहत-मर्यादा को लेखबद्ध करके लाने के लिये भेजा।

खण्डे के अमृत पीने और ५ ककारों, 'केश, कंघा, कड़ा, कछहरा, कृपाण,' रखने के लिये कड़ी व्यवस्था दी और इनको धारण करने के लिये प्रत्येक सिक्ख मात्र को प्रेरणा दी। अंग्रेजों ने पंजाब पर अधिकार जमाते ही पंजाब में हथियार न रखने का कानून जारी कर दिया था; इसके अनुसार केवल विशिष्ट परिवारों के व्यक्तियों के अतिरिक्त कोई पुरुष लायसेंस के बिना शस्त्र नहीं रख सकता था। सिक्खों का धार्मिक चिन्ह कृपाण अथवा तलवार भी इस कानून के अधीन बिना लायसेंस के किसी पुरुष को रखने अथवा पहनने की आज्ञा नहीं थी। आपने समय का विचार करते हुए यही उचित समझा कि इस विषय पर नई विदेशी अंग्रेज सर-कार से सीधी टक्कर न ली जावे। अतः आपने सिक्खों को लोहे के बन्दों वाली अच्छी भारी लाठी अथवा सफा जंग (कुल्हाड़ी) रखने के लिये आदेश दिये। अच्छी जाति के घोड़े पालने, रखने तथा सवारी सीखने के लिये भी कहा। देश में अंग्रेजी सरकार की ओर से प्रचलित की गई गौहत्या को हटाने के लिये भी प्रचार किया।

शरीर को हृष्ट-पुष्ट, नीरोग तथा उत्साहित रखने के लिये शारीरिक स्वस्थता पर आपने बहुत ज़ोर दिया। एक पहर रात रहते उठ कर नित्य प्रति सकेश स्नान तथा दातुन करने और स्वच्छ वस्त्र पहनने की रीति चलाई। भाई अतुरसिंह जी के अधिकार में दान्तों की सफाई देखने का काम था। दूध-घी खाने के लिये अच्छी दूध देने वाली गायें रखने और देश के पशु धन को पालने तथा सम्भालने का उदाहरण आप ने स्वयं उपस्थित किया। मांस, मदिरा, चोरी, बदकारी, झूठ, निन्दा, ठगी,

धोखा, आदि कुकर्मों को छोड़ने का आदेश दिया।

स्त्रियों को अमृत छकने, नाम जपने, भजन-बन्दगी करने, पुरुषों के साथ ही दीवान में बैठ कर शब्द-बाणी पढ़ने और सुनने की रीति को चलाया। घर का सारा काम हाथों से करने, पति की आज्ञा में रहने, उसकी सेवा करने, घर आये अतिथि को यथाशक्ति भोजन वस्त्र देने आदि शुभ गुणों के पालन करने का आदेश दिया। जन्म लेते ही बालिकाओं को मारने, उनका मूल्य लेकर वृद्ध, रोगी, बदमाश कुकर्मी से विवाह करने एवं बदले के रिश्ते लेने से बिल्कुल वर्जित किया। विवाह की रस्म से सम्बन्धित बुराइयों, चढ़ावे, दहेज, बाजे, आतिशबाजी, भांड़, कंचनियों आदि को बिल्कुल ही छोड़ देने की आज्ञा दी। गुरु ग्रन्थसाहबजी की उपस्थिति में वेदी बना कर हवन करके सीधे सादे ढंग से विवाह करने की रीति चलाई। इस रीति को "आनन्द कार्य" का नाम दिया। मृत्यु के पश्चात् वृद्ध-वृद्धाओं की नाक ऊंची रखने के लिए गांव को पक्की रसोई खिलाने अथवा कच्ची रसद देने की अशुभ रीतियों को बिल्कुल ही रोकने का प्रचार किया। मृतकों की आत्मा की शान्ति के लिए गुरु ग्रन्थसाहब जी के पाठ का भोग एवं प्रार्थना करने की प्रथा चलाई। लड़की के विवाह करने की आयु कम से कम १६ वर्ष निश्चित की। लड़कियों को शिक्षा देने पर भी ज़ोर दिया। विधवा स्त्रियों के पुनर्विवाह की प्रथा प्रचलित की।

आप के धर्म प्रचार के विषय में डाक्टर गंड्डासिंह जी ने अपनी पुस्तक "कूकियाँ दी विथिया" के द्वितीय संस्करण के पृष्ठ ३५ पर इस प्रकार लिखा है:—

"आप के प्रचार का मुख्य उद्देश्य धार्मिक रूप से डांवा-डोल हो रहे सिक्खों में से कुरीतियां दूर करके सिक्ख धर्म को जीवित रखना था। आपका काम एक सुधारक नेता का था। प्रचार के निमित्त देशाटन पर जहां कहीं भी आप जाते, सिक्खों से दूर हो चुके या अन्य मतों से आये श्रद्धालुओं को बिना किसी लिंग तथा जाति के भेद के उपदेश देते।

उस समय के एक बड़े सरकारी अफ़सर मिस्टर किनचैंट ने सन् १८६३ में कूकों (नामधारियों) के नियमों के विषय में इस प्रकार लिखा था :—

"गुरु गोविन्दसिंह जी का ग्रन्थ ही केवल सत्य है। जो आदि वाणी है। केवल गुरु गोविन्दसिंह ही गुरु हैं। हर प्राणी बिना जाति तथा मत के भेद-भाव के सिक्ख बन सकता है। सोढ़ी, वेदी, महन्त, ब्राह्मण तथा ऐसे ही गुरु कहलाने वाले अन्य लोग पाखण्डी बहुरूपिये

हैं । क्योंकि गुरु गोविन्दसिंह के बिना गुरु नहीं । देवीद्वारे, शिवद्वाले तथा मन्दिर लूट के साधन हैं । मूर्ति पूजा परमात्मा का निरादर है जो क्षमा नहीं किया जावेगा"

सन् १८६३ में सरकारी समाचारों की रिपोर्टों में गुरु रामसिंह जी के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा हुआ है :—

"वह सिक्खों में से जाति-पाति के भेद-भाव को मिटा रहा है । सब श्रेणियों में पारस्परिक खुले विवाहों के पक्ष में है। विधवा-विवाह करने की आज्ञा देता है। शराब तथा नशों से रोकता है । स्त्रियों और पुरुषों के पारस्परिक खुले मेल मिलाप का पक्षपाती है ।"*

"उसके दीवानों (सम्मेलनों) में स्त्री-पुरुष खुले विचरते हैं। सहस्रों स्त्रियां तथा नवयुवतियां उसके सम्प्रदाय में सम्मिलित हैं । वह अपने सेवकों को पवित्र तथा सत्यवादी होने का उपदेश देता है। उसकी एक आज्ञा यह है । "यह अच्छा है कि प्रत्येक अपनी लाठी रक्खे, तथा वह सब रखते हैं । केवल ग्रन्थ साहिब ही उनका प्रमाणित ग्रन्थ है । नामधारी सिक्खों की पक्की पहिचान सिर पर सीधी पगड़ी, गले में (नाम के जाप के लिये पहनी हुई) ऊन की माला तथा आपस में मिलते और बिछुड़ते समय उच्च स्वर से सतश्रीअकाल शब्द से अभिवादन करने से होती है ।"

पंजाब की अमुस्लिम जनता पर गुरु रामसिंह जी के सिक्ख धर्म के धार्मिक शिष्टाचार तथा सामाजिक नियमों का प्रचार करने का प्रभाव शीघ्र तथा अधिक हुआ । गांव के जनसाधारण जाट, बढ़ई, छीबे (दर्जी) तथा अछूत जातियों में से रहतिये, रामदासिये, चमार, चूहड़े जिनकी संख्या गांवों में इस समय मुसलमानों को छोड़ कर शेष संख्या का ९८ प्रतिशत है, सहस्रों की संख्या में अमृत छक कर केशाधारी सिंह बनने लगे। पंजाब के गांवों में ब्राह्मणों की संख्या २ प्रतिशत है तथा वह शताब्दियों से जाटों की पुरोहिती, जन्म तथा मृत्यु के संस्कार करवाते और इनसे दान-दक्षिणा लेकर जीवन व्यतीत करते चले आए हैं । नामधारी बन कर लोग अपने समस्त संस्कार गुरु मर्यादा अनुसार स्वयं ही करने लगे अथवा ग्रन्थियों से करवाने लगे । इसका सीधा प्रभाव ब्राह्मणों की आजीविका के साधनों पर पड़ा । उन्होंने अपनी

---

*(नोट :—उपरोक्त भाव पर्दा रखने अथवा घूंघट निकालने की रोक तथा दीवानों में इकट्ठे बैठने की रीतियों से लिया प्रतीत होता है ।)

आय तथा मान प्रतिष्ठा जाते देख कर नामधारियों का कड़ा विरोध करना प्रारम्भ कर दिया ।

सरदार गंडासिंह जी ने आपके प्रचार का वर्णन करते हुए लिखा है :— "स्थान-स्थान पर सोढ़ी, वेदी तथा पाखंडी साधुओं का बिस्तरा गोल होने लगा तथा लोग खंडे का अमृत छक कर सिंह बनने आरम्भ हुए । इस प्रकार सिक्ख धर्म प्रचार का आन्दोलन चल पड़ा ।" "आप ने अपना जीवन हिन्दू, ब्राह्मणों तथा मुसलमान, पीरों-फकीरों के प्रभाव से सिक्खों में प्रविष्ट हो चुकी कुरीतियों को दूर करके, वास्तविक सिक्खी के प्रचार की ओर लगाना आरम्भ किया । लोगों के विचारों में परिवर्तन करने के लिये आपने सर्वप्रथम ब्राह्मणों तथा अपने आप को गुरु कहलाने वाले सोढ़ियों, वेदियों के विरुद्ध एक जबरदस्त आवाज उठाई ।"

इस समय में ही लोगों ने यह नई कहावत गढ़ ली—"सप्पों, सीहों, सोढ़ियों बख्श लईं करतार" (सांप, शेर तथा सोढ़ी कुल के पुरुष से हे परमात्मा ! हमें बचाना —अनूदित)

"आप के प्रचार का यह परिणाम हुआ कि अमृतधारी सिंहों के साथ-साथ ही हिन्दुओं में भी सिक्ख धर्म के लिये श्रद्धा तथा प्रेम बढ़ना शुरू हो गया एवं सहस्रों हिन्दू गुरुवाणी पढ़ने तथा गुरु ग्रन्थसाहिब का पाठ करने लग पड़े । इस प्रकार वे शनैः शनैः सिक्खों की ओर आकर्षित होने लगे । बहुतों ने जो वृद्धावस्था अथवा ब्राह्मण प्रभाव में होने के कारण स्वयंपूर्ण केशधारी तथा रहत वाले सिक्ख न हो सके, अपनी संतान को सिंह बनाना आरम्भ कर दिया । इस प्रकार जहां सिंहों की गिनती की संख्या बढ़नी आरम्भ हुई, वहां सहजधारी (धीरे-धीरे बन रहे) सिक्खों की संख्या भी अधिक हो गई ।.......हिन्दुओं में भी इसी प्रकार सिक्खों के लिये प्रेम की लहर चलाने का श्रेय बाबा रामसिंह जी को है ।"

गुरु रामसिंह जी ने सेवा, परोपकार, स्वच्छ रहने, सत्य कहने तथा निर्मल कर्म की उच्च शिक्षायें दीं । कुरीतियों से बचकर सरल जीवन व्यतीत करने का ढंग बताया । आपका यह दृढ़ निश्चय था कि कोई भी देश अथवा राष्ट्र राजनीतिक रूप से पराधीन रह कर आत्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति नहीं कर सकता । राष्ट्रीय उन्नति के लिये सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी जीविका कमाने के साधनों में किसी अन्य का दास न हो । उसके पास शारीरिक बल, बुद्धि, साहस, नीरोगता आदि सब गुण होते हुए जीविका के साधन भी हों। श्रम करने की आदत हो । साथ

बृटिश सत्ता विरोधी भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के सर्व प्रथम सेनानी
श्री गुरु रामसिंह जी तथा उनके शिष्य

ही वह जीविका प्राप्त करने में किसी धनाढ्य तथा साहूकार का मुहताज न हो । आपका यह उपदेश था कि हर मनुष्य हाथों से श्रम करके निर्वाह करे । कोई बेकार न रहे, न ही धर्म के नाम पर धनवान् होते हुए धोखे से धन एकत्रित करके इतना उच्च बनने का यत्न करे कि साथ रहने वाले सहस्रों निर्धनों की टूटी झोपड़ियों के पास उसी का ही एकमात्र महल हो। इस यत्न में जीवन व्यतीत न करो कि सबका धन इकट्ठा करके स्वयं ध्वजा लगा कर उस पर ज्योति जगायी जाए। बल्कि ऐसा यत्न करो कि निर्धन मनुष्य दरिद्रता के दलदल से निकल कर मनुष्य समाज में एक स्थान पर खड़े हो सकें । धन, धान्य, विद्या, जप, तप, भजन, बन्दगी आदि से प्राप्त थोथी प्रशंसा को तोड़ने के लिये आपने यह रीति चलाई कि परस्पर मिलते समय एक नामधारी दूसरे नामधारी के चरणों को अवश्य स्पर्श करे । आपके विचारानुसार सामाजिक समानता का युग लाने के लिये यह आवश्यक है, कि बड़ों को निम्न स्थल पर लाया जावे तथा साधारण को उठा कर उच्च स्थान पर खड़ा किया जावे ।

अपनी प्रिय मातृभूमि भारत को विदेशी अंग्रेज शासकों की दासता से मुक्त कराने के लियें आपने सोच विचार करने के उपरान्त निम्न प्रकार का कार्यक्रम भारतीय जनता के सामने रखा तथा नामधारियों को सदैव इस पर चलने के आदेश दिये :—

(१) अंग्रेज शासकों की ओर से चलाये गये कानूनों के बन्धन अपने गले में न डालो। देश के पुराने न्याय के नियमों तथा रीतियों को मानो।

(२) फौजदारी तथा भूमि-सम्पत्तियों से सम्बन्धित पारस्परिक झगड़ों को अंग्रेज शासकों की स्थापित की हुई अदालतों में न ले जाओ । ऐसे झगड़े गांवों की पंचायतों तथा गोत्रों की पंचायतों में निबटाओ ।

(३) अंग्रेज़ी शासन की ओर से स्थापित किये हुए स्कूलों में अपने बच्चों को न पढ़ाओ । अपने विद्यालयों तथा पाठशालाओं में ही बालक-बालिकाओं को पढ़ाओ ।

(४) अंग्रेजों की नौकरी न करो।

(५) विदेश का बना हुआ कपड़ा तथा अन्य पदार्थों का प्रयोग न करो । घर की बनी हुई खादी एवं ऊन के कपड़े पहनो तथा स्वदेशी पदार्थों का प्रयोग करो ।

(६) अंग्रेजी शासन की चलाई हुई संस्थाओं, रेल, डाकखाने आदि का प्रयोग

न करो। आने-जाने, समाचार पहुंचाने तथा पारस्परिक मेल के लिये अपने ही साधन तथा बैलगाड़ी, गड्डा, घोड़े, ऊंट को सवारी को काम में लाओ तथा चिट्ठी-पत्र पहुंचाने के लिये अपने हरकारों का प्रबन्ध करो।

इन समस्त आदेशों का मूलभाव यह था कि विदेशी शासन से हर प्रकार का असहयोग किया जावे।

इतिहास तथा सभ्यता के उच्च विद्वान्, भारत के राष्ट्रपति श्री डाक्टर राजेंद्रप्रसाद जी ने सन् १९३५ में अपने एक प्रस्ताव "श्री सतगुरु रामसिंह जी के सिद्धान्त" में इस प्रकार लिखा है :—

"गुरु रामसिंह जी स्वतंत्रता को भी धर्म का आवश्यक अंग समझते थे और नामधारियों का संगठन बहुत जोरदार हो गया था। हमारे देश में महात्मा गान्धी जी ने जो असहयोग आन्दोलन इतने जोर से चलाया उसको गुरु रामसिंहजी ने प्रायः ५० वर्ष पूर्व ही नामधारियों में प्रचारित किया था। उनके सिद्धान्तों में ५ चीजें हैं :—(१) सरकारी नौकरी का बहिष्कार (२) सरकारी स्कूलों का बहिष्कार (३) सरकारी अदालतों का बहिष्कार (४) विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार (५) ऐसे कानून मानने से इनकार जो अपनी आत्मा से विरुद्ध हैं।"

(सतयुग, वसंत अंक, १० माघ १९९२)

ग्रामों में रहने वाले जनसाधारण के लिये आपस में मिल-जुल कर गांव में ही अमृत तैयार करने और छकाने की रीति को पुनर्जीवित करके आपने सिक्खी की उन्नति तथा वृद्धि के लिये एक बहुत बड़ा कार्य क्षेत्र तैयार किया। गुरुजी की यह रीति पूजा का धान्य खाने वाले ग्रन्थियों, पुजारियों, अरदासियों, धूपियों, ऐतिहासिक गुरुद्वारों तथा उनकी सम्पत्तियों पर अधिकार जमाये बैठे महन्तों, सन्तों और सिक्खीसेवकी को भेंट पर गुजारा करने वाले सोढियों, वेदियों के लिये उनकी जीविका को तोड़ने के समान थी। भ्रमों में फंसी जनता को प्रकाशमय रास्ते पर चलने की शिक्षा देना महान् आत्मा वाले पुरुषों का ही काम होता है। सरदार कपूरसिंह जी ने अपनी पुस्तक "सप्त श्रृंग" में इस बात का इस प्रकार वर्णन किया है :—

"सच्ची बात तो यह है कि भारतवर्ष के सहस्रों वर्षों के इतिहास में गुरु गोविन्दसिंह जी के अतिरिक्त कोई भी ऐतिहासिक व्यक्ति ऐसा

नहीं हुआ, जिसने अपने जीवन का ध्येय इतना सर्वगुण सम्पन्न तथा ऊंचा रक्खा हो, जिसका व्यक्तित्व एवं विचार असाधारण के साथ साधारण को भी सरल उपायों से उन्नति के शिखर पर ले जाना हो। गुरु गोविन्द सिंह जी के पश्चात् इस प्रकार की साहसी आत्मा वाले पुरुष भारत में बाबा रामसिंह जी ही हुए हैं।" उक्त पुस्तक में आगे आप लिखते हैं, "सिक्ख गुरुओं गुरुनानक तथा गुरु गोविन्दसिंह जी के पश्चात् बाबा रामसिंह एक महान्सुधारक तथा पथप्रदर्शक हुए हैं, जिन्होंने समाज में स्त्री पुरुष की एकता का प्रचार किया और अपने प्रचार में सफल हुये। यदि उन्होंने देश तथा जाति के लिये जो अन्य महान् कार्य किये वह हम छोड़ भी दें, तो उनका एक यही प्रचार कि स्त्री तथा पुरुष समाज में समानता के अधिकारी हैं, उनको संसार भर के शिरोमणि सुधारकों की पंक्ति में खड़ा कर देता है।"

सम्वत् १९१४ की बैसाखी के अवसर पर भैणी में अमृत प्रचार होने के समय से ही गुरु रामसिंह जी के पास संगतों का आना जाना आरम्भ हो गया। यहां आकर लोग अमृत छकते तथा भजन करने की विधि पूछ कर अपने गांवों को चले जाते। दिन प्रतिदिन आप की प्रशंसा फैलती गई। आपके डेरे में हर समय गुरु ग्रन्थसाहब की बाणी का पाठ होता रहता तथा भोग डाले जाते। ढोलक, छैनों के साथ दोनों समय कीर्तन किया जाता तथा शब्द पढ़े जाते। आस-पास के गांवों की संगतों की विनय पर आप उन गांवों में जाकर अमृत छकाते तथा उपदेश देते। आप जिस किसी गांव में जाते पहले वहां की धर्मशाला का पता पूछ कर उसकी बड़ी अच्छी तरह सफाई करवाते। उस गांव में किसी उदासी साधु अथवा प्रेमी के घर से गुरु ग्रन्थ साहबजी की प्रति का पता लगवा कर मंगवाते तथा उसको पढ़ कर संगतों को उपदेश देते। मदिरा, मांस, तम्बाकू, भंग, पोस्त, अफीम आदि व्यसनों से लोगों को वर्जित करते। बालिकाओं को मारने से रोकते। लड़कियों के पैसे लेकर विवाह करने की बुरी रीति को हटाते। आपके इस उपदेश के आधार पर उस समय यह लोकगीत बना—

"न बेच क्वांरी बे बावला लालचिया।
गल गऊ कटारी बे बावला लालचिया।
तेरी गई मत्त मारी बे बावला लालचिया।
न बनीं व्यापारी बे बावला लालचिया।"

उस समय छापेखानों के मुद्रित हुए गुरु ग्रन्थसाहबजी नहीं होते थे । लेखक व्यवसाय के काश्मीरी पंडित, हस्तलिखित प्रति तैयार करते तथा अच्छे मूल्य पर बेचते । कई-कई ग्रामों में कोई एक सज्जन ही ऐसी नकल की प्रति को खरीद कर अपने घर में रखता था । उदासी साधू असवारा साहिब नाम रखकर उसे अपने डेरे में रखते तथा पाठ करके पूजा लेते । लेखक के अनुमानानुसार सारे पंजाब में तथा सिक्ख रियासतों में ऐसी हस्तलिखित प्रतियों की संख्या ढाई अथवा तीन हजार से अधिक नहीं थी । अधिकतर प्रतिलेखन अमृतसर अथवा दमदमा साहिब साबोकीतलवन्डी के आधार पर किये जाते । नकल करने वाले काश्मीरी लेखकों में अमृतसर के लेखकों तथा दमदमा साहब के लेखकों के लेखों के रूप तथा लिपियों के मोड़जोड़ में मात्राओं के उच्चारण के अनुसार अक्षरों के लिखने में अन्तर था । छापे की प्रतियों का रिवाज होने पर भी पृथक्-पृथक् छापेखाने की मुद्रित प्रतियों में अक्षर तथा मात्राओं के अन्तर पड़ते ही गये ।

सन् १८६७ में मुन्शी गुलाबसिंह ने अपना प्रसिद्ध छापाखाना "मुफीद-ए-आम" नामक लाहौर में खोला । सन् १८७० तक पंजाब में कई और छापेखाने भी खुल चुके थे । इनमें प्रस्तर मुद्रणालय के ढंग से पुस्तकें छापी जाती थीं । गुरु रामसिंह जी ने प्रेस वाले दीवान बूटासिंह लाहौर निवासी, के हाथों सिक्ख धर्म की मान्य पुस्तक गुरु ग्रन्थसाहिबजी को छपवाया । इसका वर्णन तथा तत्सम्बन्धित हिसाब का ब्यौरा उनकी बही में अब तक मौजूद है ।* अनुमान यह है कि गुरु ग्रन्थसाहिबजी का सर्वप्रथम पत्थर के छापे का

---

* नकल बही पन्ना २२

३००) ग्रंथसाहिब के रुपये साहिबसिंह ले गया । सावन सुदी ११, सम्वत् १६२७ ।

२००) बूटासिंह दीवान को अमृतसर में रोकड़ी दिये । कार्तिक बदी १५ सम्वत् १६२७ ।

२००) दीवान साहिब को दिलवाये ग्रंथ साहिब के । दुकान में से गोपालसिंह ने दिये ।

३८०) दीवान बूटासिंह को दिये गोपालसिंह ने दुकान से । पोह बदी १५ साल सम्वत् १६२७ ।

ग्रंथ साहिब की पोथियों का कुल हिसाब पूरा हुआ गोपालसिंह के द्वारा ।

संस्करण आपके व्यय और उद्यम से ही हुआ था। इसका प्रयोजन वाणी का प्रचार आम जनता तक पहुँचाने का था। इसी के साथ-साथ आपने नित्य-कर्म की वाणियों को संकलित करके पंचग्रन्थी और दसग्रन्थी नामक पुस्तकें छपवा कर उनका प्रचार किया।

गुरु रामसिंह जी ने अमृत प्रचार के साथ-साथ ही गुरु ग्रन्थसाहबजी के शुद्ध पाठ करने तथा भोग डालने पर अधिकाधिक ज़ोर दिया। जहां-जहां पर भी नामधारी सिक्ख बनते, वहां ही पाठ किये जाते तथा भोग डाले जाते। भैंणी के डेरे में सम्वत् १९१४ से ही ५ ग्रन्थी ५ गुरु ग्रन्थसाहबों के पाठ करते रहते। पाठ समाप्त होने पर भोग डाले जाते। कुछ समय के पश्चात् यह संख्या ११ हो गई तथा सन् १८७१ में यह संख्या पच्चीस पर पहुंच गई। हर एक मुख्य सूबे को गुरुजी का यह आदेश था कि वह प्रतिदिन कम से कम गुरु ग्रन्थ साहब जी के १०० पृष्ठों का पाठ अवश्य करे। प्रतिदिन दोनों समय डेरे में दीवान लगते। आप भी दीवानों में सम्मिलित हो कर संगतों के साथ ढोलक छैनों से शब्द पढ़ते। सम्वत् १९१४ से सम्वत् १९१७ तक के ४ वर्ष इसी कार्यक्रम के अनुसार व्यतीत हुए। बीच-बीच में अमृत प्रचार करने के लिये आप जिला लुधियाना के गांव सियाहड़, गुजरवाल, रायपुर, लोहगढ़, वसियां तथा जिला जालंधर में मुठड्डा, धुलेता आदि बड़े बड़े गांवों में चले जाते। प्राय: संगतें भैंणी ही पहुंच जातीं तथा यहां ही अमृत छक कर भजन-बन्दगी का उपदेश लेकर घरों को लौट जातीं। उच्च जीवन वाले सज्जनों को अमृत प्रचार करने तथा भजन-बन्दगी की दीक्षा देने की आज्ञायें की गईं। चार वर्ष के अल्प समय में ही प्रत्येक इलाके में अमृत प्रचार, भजन-बन्दगी करने तथा गुरु ग्रन्थसाहिबजी के पाठों के भोग डालने का प्रचार चल पड़ा। समस्त पुरुषों तथा स्त्रियों के संगत में ढोलकी-छेनों से सीधे सादे ग्रामीण स्वरों में गुरुवाणी के शब्द पढ़ने की रीति दिन-प्रतिदिन फैलती गई। दीवानों में शब्द वाणी पढ़ने के लिये पहले-पहल तन्त्री साजों, रबाब, ताऊस तथा तबलों वाली तीन मंडलियां भैंणी में तैयार की गईं। धुलेता गांव के भाई दित्तू, भाई फकीरिया तथा भाई वजीरा आदि मुस्लिम मिरासियों को दड़प अथवा स्यालकोट के प्रदेश की सेवा दी गई। भाई प्रेमसिंह, भाई कृपालसिंह, भदौड़ वाले और भाई साहबसिंह वसियां वाले के जत्थे को मालवा (लुधियाना तथा फिरोजपुर के प्रदेश) में सेवा करने के लिये लगाया गया। अटारी के भाई तारा तथा भाई पाली को

माझे में संगतों को कीर्तन सुनाने के लिये नियुक्त किया । मलियां-कोतलवंडी के भाई पशोरा तथा भाई सन्तू को ढड्ड सारंगे के साथ संगतों को वीर रस की ध्वनि में गुरुबाणी सुनाने पर लगाया। यह पंजाब के सभी इलाकों में जाते थे । गांव मोरों के रागी सूबासिंह तथा उसके साथी जालंधर के द्वाबे में प्रचार करते थे। गांव छापा के रागी भाई खजानसिंह, भाई रतनसिंह, हरनामसिंह, सुजानसिंह, तथा अतरसिंह (जिनके पूर्वजों को छठे गुरु हरिगोविन्द साहब जी ने सारन्दा देकर राग का वर दिया था) आदि भैणी में रह कर आसपास के इलाकों के दीवानों में "आशा की वार" लगाते तथा शब्द सुनाते । रागियों तथा ढाडियों के लिये शब्द चौकी की भेंट एक रुपया नियत की गई ।

नामधारी इतिहास के विषय में अप्रकाशित पुस्तक 'सतगुरु विलास' में इन चार वर्षों का वर्णन इस प्रकार दिया है:—

"चौदह (१९१४) में दाने खरीदे, सम्वत् सोलह में अन्न घटा, सत्तरह में अकाल पड़ा। पहले अन्न एक रुपये का २ मन बिका, फिर तीस सेर हो गया। आप भाव से दो सेर अधिक देते थे । अन्न से गुरु जी को बहुत लाभ हुआ । आये-गये सिक्ख को प्रसाद छकाते । निर्धन छकते तथा आशीष देकर जाते।"

इस सं[illegible] [illegible]हरसिंह डरोलीवाले, काहनसिंह जी निहंग चकवाले, बाबा [illegible] बाबा साहबसिंह, बाबा वर्मासिंह तथा बाबा शुद्धसिंह भैणी के [illegible]रे में ही आकर रहने लगे तथा पृथक-पृथक् प्रदेशों में प्रचार के लिये जाते।

सदावर्त लगा दिया गया। मुसाफिर, निर्धन, दुखी, तथा फकीरों को हर समय प्रसाद (भोजन) बांटने की रीति चलाई गई । पाठ के भोगों के समय का सारा चढ़ावा तथा नकदी लंगर में डाली जाती । गुरु रामसिंह जी चढ़ावे की किसी प्रकार की रकम अथवा वस्तु को अपने प्रयोग में नहीं लाते थे। अपना तथा कुटुम्ब का निर्वाह, खेती कारखाने तथा दुकान की आय पर होता था । गुरुद्वारे में कोई आदमी बेकार नहीं रह सकता था, उसको कुछ न कुछ काम अवश्य करना पड़ता था ।

हरिद्वार अर्धकुम्भ के मेले पर जाना

१ बैसाख सम्वत् १६१८ को अर्धकुम्भ का मेला तथा गंगा स्नान था। गुरु रामसिंहजी भी मेला देखने तथा प्रचार करने के लिये हरिद्वार की ओर "पांच रुपये का कड़ाह प्रसाद (हलवा) करा कर चले।" बाबा जवाहरसिंह, कान्हसिंह, सुद्धसिंह, गोपालसिंह, साहिबसिंह, चैनसिंह गुजरवालिया, उसकी बहिन, शोभासिंह, दसोदासिंह, माई दौली, ताऊ शुद्धसिंह, पधरी की माई साहबो, उबेक्यां वाला महतावसिंह तथा और बहुत सी संगत साथ ही भैणी से चली। इनके अतिरिक्त सुद्धसिंह रागी का तथा भाई लाभसिंह रागी का जत्था तथा जीतू रबाबी का जत्था भी साथ थे। शु[illegible] [illegible]ंगत का कोषाध्यक्ष था। संगत के साथ साथ गड्डे भी थे। भैं[illegible] [illegible]हुए सराय के पास जाकर जरनै[illegible]ी सड़क पर चल पड़े। खन्ना, बाड़ा, अम्[illegible]ला के रास्ते जमुना पार करके सहारनपुर पहुंचे। मार्ग में उन्हें घोड़ों का व्यापारी समुदसिंह खोटेवाला घोड़े ले जाता हुआ मिला। सहारनपुर से वे हरिद्वार पहुंच गये। मार्ग में प्रतिदिन आशा की बार तथा शब्द चौकी लगाते गये। हरिद्वार जाकर भीम गोडा के पास पूर्व की दिशा में डेरा डाला। डेरे में प्रातःकाल "आसा की वार" का गायन होता तथा संध्या समय दीवान लगता।

मेले पर हजारों की संख्या में संगत भी आई हुई थी, "सतगुरुविलास" में इस प्रकार वृतान्त आया है :—

"अमृतसमय (प्रातः काल) तो हजरो वाली संगत को प्रसाद छकाया और बोले—"झूठे वर्तन मैं मांजूंगा।" समस्त बर्तन (गुरुजी ने) स्वयं ही साफ किये।

यहीं आप का मुकाबला एक अत्यन्त बहुमूल्य तथा रेशमी पहरावे में बैठे एक महन्त से हुआ। इसके साथ ज्ञान चर्चा करते हुये आपने स्पष्ट तथा सरल वचन कहे कि :—

"तू तो कंजरों का बाना पहन कर बैठा है, तेरे शिष्य कौन सा बाना पहनेंगे। कंचनी (वेश्या) से परे कोई और बाना नहीं है। पट्टियां ढाली हुई हैं, केश गले में कुण्डलों की भांति खुले पड़े हैं तथा तिलक लगे हुये हैं। फिर उस की सिलवार को हाथ लगा उन्होंने हास्य किया कि खूब कंजरों का बाना है।"

आप के डेरे के पास ही निर्मलों का डेरा था। आशा की बार तथा शब्द चौकी के समय संगतों में मेल-मिलाप होने पर निर्मले साधु चिढ़ते रहते तथा कई प्रकार की बातें करते। निर्मले वेदान्त विचारने तथा वेदान्त के धारण करने पर बहुत जोर देते। वे उपदेश देते कि यदि सब ब्रह्म ही ब्रह्म है, तो किस का गायन करें? किस का जाप करें तथा किस की पूजा करें? गुरु ग्रन्थ साहबजी में आई आदि वाणी को वे वेदों तथा वेदान्त का ही प्रतिबिम्ब बताते। गंगा को जाने के लिये निर्मलों को आप के डेरे के पास से जाना होता था। निर्मले कई बार अकारण भिड़ते तथा वादविवाद करने के लिये छेड़ छाड़ करने से नहीं हटते थे। 'सतगुरुविलास' के अनुसार एक दिन निर्मलों का वार्त्तालाप सुन कर गुरु रामसिंह जी ने कहा कि, "निर्मले पापी हैं। जिन्होंने जीवों को गुरुवाणी से हटा कर वेदों की ओर लगाया है। ये गुरुजी की वाणी से हटाते हैं। अपने को परमेश्वर कहलाते हैं।" यहां निर्मलों के साथ नामधारी सिंहों का लट्ठ भी बजा, जिस में सिंहों ने निर्मलों को मजा चखाया।

यहां भी आप ने नागा साधु तथा अन्य अतिथियों को भण्डारे दिये और अच्छे-अच्छे भोजन खिलाये। अर्धकुम्भ के पश्चात् आप पड़ाव डालते वापिस भैणी में आ गये।

प्रचार के लिए देशाटन

हरिद्वार के अर्धकुम्भ से वापिस आ कर आपने रागी जत्था तथा अमृत तैयार करने वाले पांच प्यारों के जत्थे को साथ लेकर बाहर गांवों में भ्रमण आरंभ कर दिया। आपने इस भ्रमण में लोगों को मढ़ी, मसान, जेष्ठों के स्थान, शहीदों के स्थान आदि की पूजा से हटा कर गुरुवाणी के पाठ की ओर लगाया। 'सतगुरु विलास' में पृष्ठ १३२ पर लिखा है:—

"एक शहीद की जगह थी, लोग पूजते थे, गुरुजी ने उस जगह पर जूते मारे और कहा कि मिट्टी इकट्ठी करके पूजने लगे हैं। झूठे लोग भेड़चाल चलते हैं।"

सम्वत् १९१८ में हरिद्वार से लौटने पर आप फिर मुठड्डा गांव में गये। आसपास के गांवों में प्रचार करते धुलेता भी पहुंचे। द्वाबा में मुठड्डा, पुआहद, जिला लुधियाना में सियाहड़, गरेवालों के तपे में रायपुर, जंगल के तपे में खोटे

आदि बड़े बड़े गांवों में प्रचार के केन्द्र स्वयं बनते चले गये। सिक्ख धर्म के प्रचार से लोग पुरातन प्रथाओं को छोड़ कर सीधी-साधी रीतियों को अपनाने लगे। इससे ब्राह्मणों को मान प्रतिष्ठा और दान दक्षिणा घट गई। मुठड्डा के ब्राह्मणों ने गुरु रामसिंह जी से झगड़ा करने की चाल चली। चाल यह थी कि सिक्खों पर हुक्के का पानी फेंका जावे। आप को इस चाल का पता चला। आप ने ब्राह्मणों को इस कर्म से रोकने के लिये अपने सूबे भेजे, परन्तु ब्राह्मणों ने अपने घमण्ड में विपरीत ही उत्तर दिया। वे संधि की बात करने के लिये गये पुरुषों पर ही हुक्के का पानी फेंकने के लिये तैयार हो गये। इससे ब्राह्मणों तथा सिक्खों में दंगा हो गया। ब्राह्मणों को सिंहों ने लाठियों से अच्छी शिक्षा दी। इसके पश्चात् ब्राह्मणों तथा नामधारी सिक्खों में विरोध बढ़ता गया। ग्रामों की संगतें आपको अपने यहां आने की विनय करतीं, किन्तु आप ने शर्त यह निश्चित की हुई थी कि आप किसी गांव में उस दिन जायेंगे, जिस दिन गुरुग्रन्थसाहिब जी की वाणी का पाठ समाप्त करके भोग डालना हो। इस देशाटन में आप भल्लोट जिला होशियारपुर, दयालपुर आदि गाँवों में गये। बधोर भी प्रचार हेतु गये तथा स्कन्द पुराण मंगवा कर एक अध्याय सुनाया।

सम्वत् १९१८ की माघी (मिती १ माघ का मेला) को आप मुक्तसर जाते हुए फरीदकोट ठहरे। साथ में काफी संगत थी। आपने भोजन बनाने के लिये बर्तनों के लिये राजा के पास आदमी भेजा। सेवक ने कहा—"अभी राजा साहब सोये पड़े हैं।" राजा ने बर्तन न दिये। फरीदकोट में दीवान लगा तथा बहुत से आदमी अमृत छक कर सिंह बने। राजा साहब फरीदकोट ने एक जासूस जो जाति का नाई था इनके संग में मिला दिया। नाई ने भी नामधारियों वाला बाना पहन लिया। नाई ने संगत के सिंहों के कपड़े चोरी करने आरम्भ किये। फरीदकोट के इलाके के गांवों में प्रचार करते हुये आप गांव बाजा पहुंचे। बाबा रूढ़सिंह रुखड़ ने अपनी चादर के पल्ले में चौअन्नियां बांध लीं। नाई ने दाव लगा कर चादर उठा ली। बाबा जी ने उस को पकड़ लिया। उसे संगतों में लाकर उस पर पंचायती दंड लगाया। उसकी एक ओर की दाढ़ी तथा दूसरी ओर की मूंछ मूंड दीं। जासूस नाई ने जा कर राजा साहब को सारा वृत्तान्त सुनाया तथा यह भी कहा कि यदि गुरु रामसिंहजी का प्रचार न रोका गया तो शीघ्र ही आप की रियासत के समस्त ग्रामीण लोग नामधारी बन जायेंगे। राजा साहब ने गांव बाजा के नम्बरदार बाबा काहनसिंह को राजा के होते हुये, उसके

राज्य में पंचायती अदालत स्थापित करके नाई को दंड देने के अपराध में ५००) जुर्माना कर दिया।

मुक्तसर पहुंच कर आपने आशाकीबार तथा संध्या के दीवान (धार्मिक सभा) लगाने आरम्भ किये। गुन्डों और लफंगों को परिक्रमा में गन्दे गीत गाने, नाचने तथा तूम्बा बजाने से रोका। इसी कारण नामधारियों तथा गुन्डों में अच्छी लड़ाई हुई और लाठी चली। नामधारियों ने मार मार कर गुन्डों का भुरकस निकाल दिया। माघी के स्नान के पश्चात् आप ने टिब्बीसाहब की ओर दौड़ कर आक्रमण के रूप में जाने का आदेश दिया। समस्त सिंहों ने पंक्तियों में खड़े होकर सोंटा, लाठी, कुल्हाड़ी सैनिकों की भांति कन्धों पर रख कर टिब्बीसाहब की ओर अन्धाधुन्ध नकली आक्रमण किया। जिनके पास लठ्ठ नहीं थे, उन्होंने बाजरा अथवा ठठेरा ही कन्धों पर रख लिये। जिला फिरोजपुर की पुलिस का अंग्रेज अफसर तथा उसका अमला भी इस मेले पर थे। उन्हें इनका सैनिक ढंग के अनुसार पंक्तियां तथा टोलियां बना कर धावे के रूप में टिब्बी साहब की यात्रा के लिये जाना बहुत बुरा लगा। इस पर अंग्रेज पुलिस अफसर ने गुरु रामसिंह जी को ताड़ने का यत्न किया, जिस पर आपस में पर्याप्त झगड़ा हो गया। पुलिस वाले समय को विचार कर और अपनी अल्प शक्ति देख कर सोटा-लाठी की लड़ाई से टल गये। यद्यपि झगड़ा बढ़ते-बढ़ते रुक गया था, परन्तु जिला फिरोजपुर पुलिस के छोटे बड़े अफसरों के मन में यह बात अच्छी तरह बैठ गई कि नामधारी अंग्रेजी सरकार के अफसर तथा उनकी आज्ञाओं की बिलकुल परवाह नहीं करते। नामधारी तथा सरकारी शासकों के ६० साल के लम्बे बैर का यह श्रीगणेश था।

मुक्तसर से आप संगतों की विनय पर सुनइयां गांव में चले गय। इस प्रदेश में आप खण्डे का अमृत छकाते तथा प्रचार करते हुये झगरांव, रुमी छज्जावाल. गुजरवाल होते हुये वापिस भैंणी आ गये।

यह देशाटन अच्छा लम्बा था, जिस में जिला फिरोजपुर, फूलकियां रियासतों (नाभा-पटियाला) के जंगल के प्रदेश तथा जिला लुधियाना की जगराओं और लुधियाने की तहसीलों के गांवों के लोगों ने अमृत छक कर वाणी पढ़नी आरम्भ की। साथ ही ब्राह्मणों और सोढियों की ओर से विरोध बढ़ा।

शासक भी अब इस नये आन्दोलन को शंका की दृष्टि से देखने लगे।

भैंणी पहुंच कर आपने हजरो में अपने को गुरु बालकसिंह जी की सेवा में उपस्थित होने की तैयारी की। भैंणी से हजरो तक पड़ाव-पड़ाव पर